राजभाषा भारती विशेषांक
ISSN No. 0970-9398

आदि लक्ष्मी संस्कृति की धारा बहाएँ,
धन लक्ष्मी संसाधन–संपदा लुटाएँ।
धान्य लक्ष्मी अन्न से जीवन सँवारें,
गज लक्ष्मी वन–प्रकृति वैभव निखारें।
संतान लक्ष्मी कौशल–रचना जगाएँ,
वीर लक्ष्मी साहस की ज्योति जलाएँ।
विद्या लक्ष्मी ज्ञान से भविष्य रचाएँ।
जय लक्ष्मी यश–कीर्ति का पथ दिखाएँ,
अष्टलक्ष्मी हैं पूर्वोत्तर, भारत का मान बढ़ाएँ।

राजभाषा भारती
पूर्वोत्तर विशेषांक

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

हमारे प्रेरणा स्रोत

"हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदुस्तान की सभी बोलियों व भाषाओं में जो उत्तम चीजें हैं, उन्हे हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए उसका हिस्सा बनाना चाहिए और यह प्रक्रिया अविरल चलती रहनी चाहिए।"

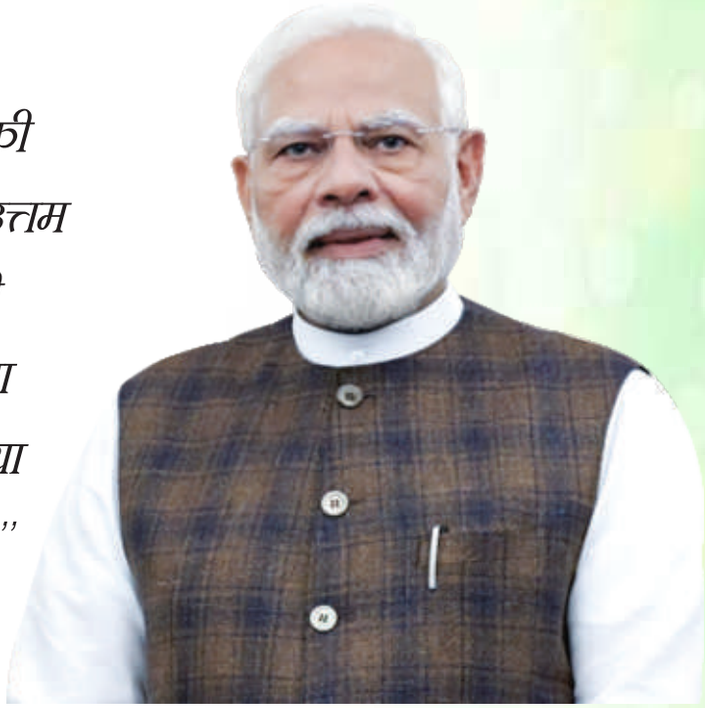

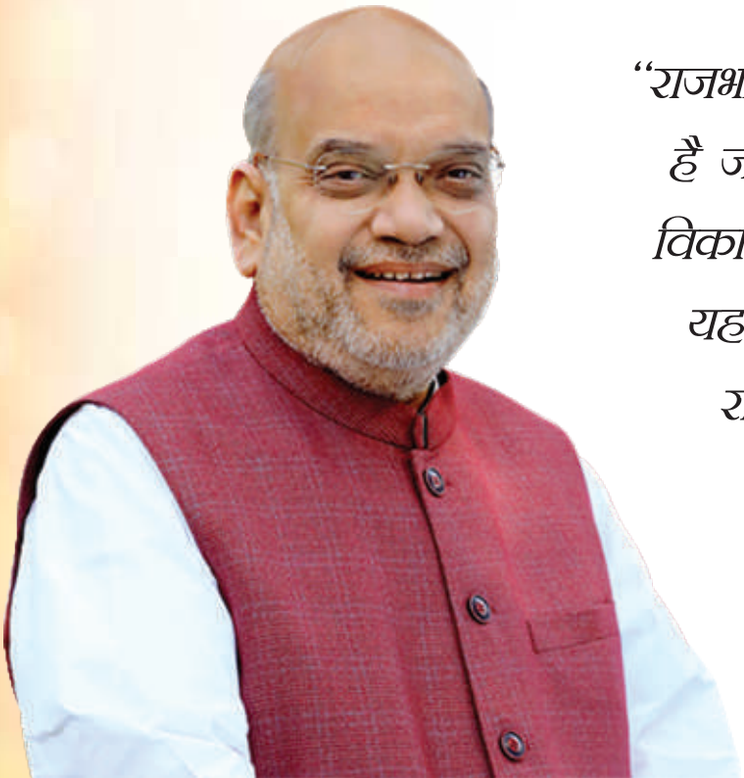

"राजभाषा का विकास तभी हो सकता है जब सभी स्थानीय भाषाओं का विकास हो। देशभर की जनता का यह लक्ष्य होना चाहिए कि हम राजभाषा को मजबूत करें।"

राजभाषा भारती

वर्ष : 47 अंक : 172 अक्टूबर, 2025 – मार्च, 2026

विशेषांक

"भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है, हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।"

–नरेन्द्र मोदी, प्रधान मंत्री

संरक्षक
अंशुली आर्या
सचिव, राजभाषा विभाग

प्रधान संपादक
डॉ. निधि पाण्डेय
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

संयुक्त निदेशक (पत्रिका)
राजेश कुमार श्रीवास्तव

संपादन
वीरेन्द्र कुमार
सहायक निदेशक

विशेष सहयोग
रघुवीर शर्मा
उप निदेशक
भावना सक्सैना
सहायक निदेशक

टंकण एवं वितरण सहयोग
विनोद कुमार, प्रीतम सिंह
प्रत्यूष यादव, शीतला प्रसाद
अनिल कनौजिया

पत्र-व्यवहार का पता:
संयुक्त निदेशक (पत्रिका)
राजभाषा विभाग
एनडीसीसी-II भवन, चौथा तल,
बी विंग, जय सिंह रोड, नई दिल्ली-**110001**
ईमेल - patrika-ol@nic.in
वेबसाइट - rajbhasha.nic.in

आवरण मानचित्र स्रोत: राष्ट्रीय एटलस एवं थिमैटिक मानचित्र संगठन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

शुभकामना संदेश :

गृह मंत्री का संदेश 03
गृह राज्य मंत्री (एन) का संदेश 05
गृह राज्य मंत्री (बी एस) का संदेश 06
सचिव, राजभाषा विभाग का संदेश 07
संयुक्त सचिव (राजभाषा) का संदेश 08

लेख :

क्र. सं.	शीर्षक	रचनाकार का नाम	पृष्ठ सं.
1.	6 दिसंबर, 2024 को नई दिल्ली में अष्टलक्ष्मी महोत्सव के उद्घाटन पर माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के संबोधन का मूल पाठ		09
2.	पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता : परंपराएँ, उत्सव और लोककला	राजेश चतुर्वेदी	14
3.	राजभाषा हिंदी और पूर्वोत्तर भारत की भाषाएं	सुनीता प्रसाद एवं बसंत कुमार दास	23
4.	पूर्वोतर राज्यों में राजभाषा हिंदी की भूमिका	डॉ. पी.आर.वासुदेवन 'शेष'	28
5.	पूर्वोत्तर भारत और नागालैंड का 'हार्नबिल' उत्सव	राजीव रंजन प्रकाश	32
6.	विकसित भारत @2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका	डॉ. आल अहमद	36
7.	पूर्वोत्तर का भक्ति–रंगमंच	डॉ. मणि कुमार	42
8.	शंकरदेव और तुलसीदास की भक्ति–भावना	प्रो. रामनारायण पटेल, एवं आशुतोष सिंह	46
9.	स्वतंत्रता आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत का योगदान	प्रो. चन्दन कुमार	48
10.	पूर्वोत्तर भारत : भारतीय राष्ट्र–निर्माण की वैचारिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रिया	साधना यादव	54
11.	विकसित भारत @2047 : पूर्वोत्तर भारत का अंतरिक्ष क्षेत्र में योगदान	राकेश शुक्ला	61
12.	जेलियांग नागा जनजाति में ग्राम स्थापना की परंपरा	डॉ. थुन्चुई	65

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

निःशुल्क वितरण के लिए

राजभाषा भारती

क्र. सं.	शीर्षक	रचनाकार का नाम	पृष्ठ सं.
13.	पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक सेतु के रूप में राजभाषा हिंदी	राकेश कुमार	68
14.	विकसित भारत @2047 : सामाजिक–राष्ट्रीय दृष्टि	डॉ. काजल पाण्डे	72
15.	राजभाषा हिंदी : पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक सेतु के रुप में	मीनाक्षी भसीन	77
16.	हिंदी भाषा, सिनेमा और पूर्वोत्तर भारत के गीतकार	डॉ. बी. बालाजी	81
17.	'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना में पूर्वोत्तर भारत	रमेश कुमार पाण्डेय	85
18.	पूर्वोत्तर भारतः कला, संस्कृति और प्रकृति का अनूठा संगम	डॉ. सुकांत सुमन	89
19.	पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता	मधुलीना घोष	92
20.	राष्ट्रीय एकता में राजभाषा हिंदी और पूर्वोत्तर की भाषाओं का समन्वय	डॉ. वरुण भारद्वाज	98
21.	विकसित भारत @2047 : राष्ट्र निर्माण में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका	प्रदीप शर्मा	101
22.	पूर्वोत्तर भारत के परिप्रेक्ष्य में राजभाषा हिंदी	दीपक ओझा	105
23.	पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ एवं राजभाषा हिंदी : परस्पर समन्वय का आधार	डॉ. उमा जनागल	109
24.	पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य समन्वय भाव	सीए प्रतीक जैन	113

अमित शाह

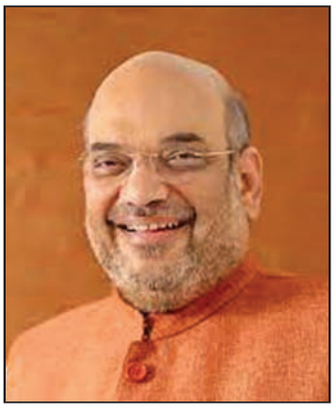

सत्यमेव जयते

गृह मंत्री एवं सहकारिता मंत्री
भारत सरकार

संदेश

यह अत्यंत हर्ष का विषय है कि **राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय** द्वारा **दिनांक 20 फ़रवरी, 2026** को **अगरतला (त्रिपुरा) में पूर्व, पूर्वोत्तर, उत्तर–1 एवं उत्तर – 2 क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन** का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर विभाग की प्रतिष्ठित पत्रिका **'राजभाषा भारती'** के 'पूर्वोत्तर भारत' विशेषांक का प्रकाशन, राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार के साथ–साथ पूर्वोत्तर भारत की बहुआयामी भाषाई, सांस्कृतिक एवं बौद्धिक विरासत को राष्ट्रीय पटल पर सशक्त रूप से प्रस्तुत करने की दिशा में एक अत्यंत सार्थक पहल है।

भाषाओं की विविधता भारत की अनमोल सांस्कृतिक संपदा है। इस विविधता से परिपूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने में हिंदी की भूमिका विशिष्ट और अद्वितीय रही है। हिंदी जहाँ एक ओर संपर्क भाषा के रूप में संवाद–सेतु का कार्य करती है, वहीं दूसरी ओर भारतीय भाषाओं के मध्य सांस्कृतिक समन्वय और भावनात्मक एकात्मता को भी सुदृढ़ आधार प्रदान करती है। समय की आवश्यकताओं और भविष्य की चुनौतियों के अनुरूप स्वयं को निरंतर परिष्कृत करते हुए हिंदी आज अधिक सशक्त, प्रासंगिक और समावेशी रूप में विकसित हो रही है।

हिंदी का संवर्धन सभी भारतीय भाषाओं के सम्मान, सहभागिता और समन्वय के माध्यम से ही संभव है; यही **"एक भारत, श्रेष्ठ भारत"** की मूल भावना है। इसी दृष्टिकोण के अंतर्गत **भारतीय भाषा अनुभाग** की स्थापना, 'भारती' बहुभाषी अनुवाद सारथी तथा व्यापक डिजिटल शब्दकोश 'हिंदी शब्द–सिंधु' जैसे नवाचारों के माध्यम से राजभाषा विभाग न केवल अपने संवैधानिक दायित्वों का प्रभावी निर्वहन कर रहा है, बल्कि भारतीय भाषाओं के संरक्षण–संवर्धन और आपसी समन्वय को भी ठोस आधार प्रदान कर रहा है।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व में शासन–प्रशासन को अधिक **भाषायी रूप से सुलभ, तकनीक–समर्थ और जन–केन्द्रित** बनाने हेतु डिजिटल एवं AI–आधारित बहुभाषिक समाधान, नागरिक सेवा प्लेटफॉर्मों पर बहुभाषिकता तथा भारतीय भाषाओं के सम्मानजनक उपयोग को नीति–स्तर पर निरंतर प्रोत्साहन दिया जा रहा है। यह दृष्टिकोण **'विकसित भारत @2047'** के संकल्प के अनुरूप समावेशी विकास की आधारशिला रखता है।

इस सम्मेलन का त्रिपुरा में आयोजन अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। **पूर्वोत्तर भारत** हमारी राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक समृद्धि और बहुलतावादी परंपरा का अभिन्न अंग है। **माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी** द्वारा पूर्वोत्तर को देश की **'अष्टलक्ष्मी'** के रूप में अभिहित किया गया है, जो इस क्षेत्र की सांस्कृतिक, प्राकृतिक, आर्थिक और मानवीय क्षमताओं का प्रतीक है। केंद्र सरकार द्वारा **"एक्ट ईस्ट"** से आगे बढ़कर अब **"एक्ट फास्ट"** के दृष्टिकोण के साथ पूर्वोत्तर क्षेत्र को समयबद्ध, समावेशी और अवसर – आधारित विकास के केंद्र में स्थापित किया गया है।

मैं संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के सफल आयोजन हेतु राजभाषा विभाग को हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'राजभाषा भारती' का 'पूर्वोत्तर भारत' विशेषांक भाषायी समन्वय, सांस्कृतिक एकात्मता और राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करते हुए पूर्वोत्तर की विशिष्ट पहचान, उपलब्धियों और संभावनाओं को पाठकों तक प्रभावी रूप से पहुँचाने में सफल सिद्ध होगा।

मंगलकामनाओं सहित,

आपका

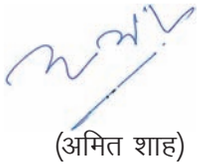

(अमित शाह)

नित्यानन्द राय
NITYANAND RAI

सत्यमेव जयते

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
नार्थ ब्लाक, नई दिल्ली – 110001

MINISTER OF STATE FOR
HOME AFFAIRS GOVERNMENT OF
INDIA
NORTH BLOCK, NEW DELHI-110001

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा 20 फरवरी, 2026 को अगरतला, त्रिपुरा में पूर्व, पूर्वोत्तर, उत्तर–1 एवं उत्तर–2 क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर विभाग की प्रतिष्ठित पत्रिका **'राजभाषा भारती'** के **'पूर्वोत्तर भारत'** विशेषांक का प्रकाशन किया जाना विभाग का सराहनीय प्रयास है।

भारत की राष्ट्रीय अस्मिता उसकी भाषाई एवं सांस्कृतिक बहुलता में अंतर्निहित है। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारतीय संविधान सभा द्वारा देश के व्यापक भूभाग में अधिकतर लोगों द्वारा बोली एवं समझे जानी वाली भाषा हिंदी को भारत संघ की राजभाषा के रूप में अंगीकृत किया गया। अपनी सरलता, सहजता और सर्वसमावेशी प्रकृति के कारण हिंदी ने देश के विभिन्न भाषा–भाषी लोगों के मध्य एक सशक्त एवं प्रभावी संपर्क भाषा के रूप में स्वयं को स्थापित कर राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भाषाओं के मध्य परस्पर सम्मान, समन्वय और सौहार्द की भावना से ही आजादी के अमृत काल में 'पंच प्रण' के संकल्प को सार्थक रूप प्रदान किया जा सकता है, जो माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के विकसित भारत@2047 के लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करेगा। इसी दिशा में माननीय केन्द्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी के कुशल एवं प्रेरणादायी नेतृत्व में राजभाषा विभाग कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग और आधुनिक भाषायी प्रौद्योगिकियों का प्रभावी उपयोग करते हुए हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं को डिजिटल युग की आवश्यकताओं के अनुरूप सशक्त एवं समृद्ध बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

पूर्वोत्तर भारत भारतीय सांस्कृतिक चेतना का एक विशिष्ट, जीवंत और समृद्ध अध्याय है, जहाँ प्रकृति की अनुपम छटा, प्राचीन परंपराएं तथा लोक कलाओं का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है। भाषाई दृष्टि से भी पूर्वोत्तर भारत अत्यंत संपन्न है, यहाँ विविध भाषाओं के बीच हिंदी एक प्रभावी संपर्क और संवाद की भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए न केवल पारस्परिक समझ और सहयोग को प्रोत्साहित करती है, अपितु राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समरसता को भी सुदृढ़ आधार प्रदान करती है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित **'पूर्वोत्तर भारत'** विशेषांक हिंदी तथा पूर्वोत्तर क्षेत्र की विविध भाषाओं के मध्य भाषायी समन्वय को और अधिक सुदृढ़ करेगा तथा हिंदी प्रेमियों को पूर्वोत्तर भारत की समृद्ध एवं अद्भुत सांस्कृतिक विरासत, लोक परंपराओं एवं लोक कलाओं से परिचित कराएगा।

शुभकामनाओं सहित,

(नित्यानन्द राय)

बंडी संजय कुमार
BANDI SANJAY KUMAR

सत्यमेव जयते

गृह राज्य मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF STATE FOR
HOME AFFAIRS
GOVERNMENT OF INDIA

संदेश

यह बड़े हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा अगरतला, त्रिपुरा में 20 फरवरी, 2026 को आयोजित संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के गरिमामय अवसर पर विभाग की पत्रिका **'राजभाषा भारती'** के **'पूर्वोत्तर भारत'** विशेषांक का प्रकाशन किया जा रहा है।

भारत की भाषाई विविधता हमारी सांस्कृतिक समृद्धि और राष्ट्रीय गौरव का सशक्त प्रतीक है। इस बहुलता के मध्य हिंदी ने एक प्रभावी एवं समन्वयकारी सूत्र के रूप में कार्य करते हुए देश की विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच भावनात्मक एकता स्थापित करने तथा सामूहिक सद्भावना को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिंदी की सरलता, सहजता एवं सर्वसमावेशी स्वरूप ने ही इसे आम जन के विचारों एवं आकांक्षाओं की प्रभावी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है।

विशेष रूप से पूर्वोत्तर भारत, जो भौगोलिक, भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टि से अपना विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान रखता है, वहाँ हिंदी ने सांस्कृतिक सेतु के रूप में कार्य करते हुए न केवल पारस्परिक संवाद, आपसी समझ और सौहार्द को प्रोत्साहित किया है, अपितु पूर्वोत्तर भारत को राष्ट्र की मुख्यधारा से और अधिक दृढ़ता एवं आत्मीयता के साथ जोड़ने में भी उल्लेखनीय भूमिका निभाई है।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के विकसित भारत के स्वप्न को साकार करने में पूर्वोत्तर क्षेत्र का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण होगा। केन्द्र सरकार पूर्वोत्तर भारत के समग्र एवं समावेशी विकास, सामाजिक एकता तथा स्थायी शांति को सुनिश्चित करने के लिए पूर्णतः प्रतिबद्ध है। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की परिकल्पना के अनुरूप सरकार द्वारा पूर्वोत्तर की विविध भाषाओं, बोलियों, विशिष्ट सांस्कृतिक परंपराओं, पारंपरिक वेशभूषाओं, लोक नृत्यों एवं कलाओं के संरक्षण और संवर्धन के लिए निरंतर ठोस प्रयास किए जा रहे हैं।

राजभाषा विभाग द्वारा पूर्व, पूर्वोत्तर, उत्तर–1 एवं उत्तर–2 क्षेत्रों के संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित 'पूर्वोत्तर भारत' विशेषांक हिंदी तथा पूर्वोत्तर भारत की विविध भाषाओं के मध्य परस्पर समन्वय, सौहार्द और सांस्कृतिक आत्मीयता को और अधिक सुदृढ़ करते हुए राष्ट्रीय एकता और भाषायी समरसता को नई दिशा प्रदान करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

शुभकामनाओं सहित,

(बंडी संजय कुमार)

अंशुली आर्या, आई.ए.एस.
सचिव
ANSHULI ARYA, I.A.S.
Secretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
राजभाषा विभाग
गृह मंत्रालय
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTER OF HOME AFFAIRS
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE

संदेश

यह हर्ष का विषय है कि राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा 20 फरवरी, 2026 को अगरतला, त्रिपुरा संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के भव्य आयोजन के अवसर पर **'राजभाषा भारती'** के **'पूर्वोत्तर भारत'** विशेषांक का प्रकाशन किया जा रहा है। यह राजभाषा नीति के सुविचारित एवं प्रभावी क्रियान्वयन के प्रति विभाग की प्रतिबद्धता को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करने के साथ–साथ पूर्वोत्तर क्षेत्र की विशिष्ट भाषायी चेतना, सांस्कृतिक बहुलता और समृद्ध परंपराओं से हिंदी प्रेमियों को परिचित कराने का एक सराहनीय प्रयास है।

पूर्वोत्तर भारत अपनी विशिष्ट भौगोलिक संरचना, भाषाई बहुलता एवं समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं के कारण देश की विविधता में विशिष्ट एवं गौरवपूर्ण स्थान रखता है। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना को साकार करने में पूर्वोत्तर भारत की सक्रिय सहभागिता निस्संदेह अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रेरणादायक है।

हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करते हुए देश के विभिन्न क्षेत्रों, संस्कृतियों और भाषायी समुदायों के मध्य परस्पर संवाद और समन्वय को सहज एवं प्रभावी बनाया है। विशेषतः पूर्वोत्तर भारत में हिंदी ने इस क्षेत्र की समृद्ध क्षेत्रीय भाषाओं के साथ सहअस्तित्व और परस्पर सहयोग की भावना को प्रोत्साहित किया है।

माननीय प्रधानमंत्री, श्री नरेन्द्र मोदी जी के कुशल एवं दूरदर्शी नेतृत्व में केन्द्र सरकार ने हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के प्रसार, संरक्षण और आधुनिक उपयोग को बढ़ावा देने के लिए अनेक दूरगामी कदम उठाएं हैं। इसी दिशा में, माननीय केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी एवं माननीय केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री नित्यानन्द राय जी के प्रेरणादायी मार्गदर्शन में राजभाषा विभाग, राजकीय कार्यों में हिंदी के प्रगामी एवं प्रभावी प्रयोग को निरंतर प्रोत्साहित करते हुए राष्ट्र की भाषायी एकता, परस्पर समन्वय और सांस्कृतिक सौहार्द को सुदृढ़ करने हेतु सतत प्रयासरत है।

हिंदी और सभी भारतीय भाषाएं एक दूसरे की पूरक हैं। राजभाषा विभाग की महत्वाकांक्षी परियोजना 'भारतीय भाषा अनुभाग' की स्थापना का मूल उद्देश्य भी एक ऐसा तंत्र विकसित करना है जिससे केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच पत्राचार राज्य की प्रथम आधिकारिक भाषा में भी हो सके। यह परियोजना सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्धन और स्वाभिमान से उनके प्रयोग की दिशा में माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी की गुलामी की मानसिकता को त्यागने की सोच की परिचायक है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'पूर्वोत्तर भारत' विशेषांक में प्रकाशित लेख हिंदी के प्रगतिशील, समावेशी और समन्वयकारी स्वरूप को सुदृढ़ करने के साथ–साथ आत्मनिर्भर एवं विकसित भारत @2047 के राष्ट्रीय संकल्प की प्राप्ति में पूर्वोत्तर क्षेत्र की सक्रिय, रचनात्मक एवं प्रभावी सहभागिता को सार्थक दिशा और नई ऊर्जा प्रदान करेंगे।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

अं आर्या
(अंशुली आर्या)

डॉ० निधि पाण्डेय, भा.प्र.से.
संयुक्त सचिव
Dr- Nidhi Pandey, IAS
Joint Secretary

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
राजभाषा विभाग
गृह मंत्रालय
नई दिल्ली–110001
GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF OFFICIAL LANGUAGE
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
NEW DELHI-110001

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता और गौरव का विषय है कि 20 फरवरी, 2026 को अगरतला, त्रिपुरा में पूर्व, पूर्वोत्तर, उत्तर–1 एवं उत्तर–2 क्षेत्रों के लिए आयोजित किए जा रहे संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर राजभाषा विभाग की प्रतिष्ठित पत्रिका **'राजभाषा भारती'** के **'पूर्वोत्तर भारत'** विशेषांक का प्रकाशन किया जा रहा है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अंतर्गत देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में अंगीकृत किया गया है। साथ ही, अनुच्छेद 351 के माध्यम से भारत सरकार को यह दायित्व सौंपा गया है कि संविधान की 8वीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारतीय भाषाओं की विशिष्टताओं को आत्मसात करते हुए हिंदी को अभिव्यक्ति के सशक्त, समावेशी एवं समन्वयकारी माध्यम के रूप में विकसित किया जाए। यह प्रावधान राजभाषा हिंदी के संतुलित, प्रगतिशील एवं सर्वसमावेशी विकास के लिए सुविचारित नीतिगत आधार प्रदान करते हैं।

माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी तथा माननीय गृह राज्य मंत्री श्री नित्यानन्द राय जी के दूरदर्शी एवं प्रेरणादायी नेतृत्व में गृह मंत्रालय का राजभाषा विभाग सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन एवं सतत विकास हेतु पूर्ण निष्ठा और प्रतिबद्धता के साथ कार्य कर रहा है।

संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के शुभ अवसर पर प्रकाशित इस विशेषांक में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना के परिप्रेक्ष्य में पूर्वोत्तर भारत', 'विकसित भारत@2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका', 'पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य परस्पर समन्वय', 'राजभाषा हिंदीः पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक सेतु के रूप में, 'स्वतंत्रता आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत का योगदान', 'पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधताः परंपराएँ, उत्सव और लोककला' जैसे महत्वपूर्ण एवं समसामयिक विषयों पर रोचक एवं ज्ञानवर्धक लेखों को समाहित किया गया है।

'पूर्वोत्तर भारत विशेषांक में प्रकाशित उत्कृष्ट लेख न केवल पूर्वोत्तर भारत की समृद्ध एवं अद्वितीय सांस्कृतिक विरासत एवं परंपराओं से सुधी पाठकों को परिचित कराएंगे, अपितु राष्ट्रीय एकता, भाषाई सौहार्द और सांस्कृतिक समन्वय की भावना को भी सुदृढ़ करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

शुभकामनाओं सहित,

(डॉ. निधि पाण्डेय)

6 दिसंबर, 2024 को नई दिल्ली में अष्टलक्ष्मी महोत्सव के उद्घाटन पर माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के संबोधन का मूल पाठ

असम के मुख्यमंत्री श्री हिमंता बिस्वा सरमा जी, मेघालय के मुख्यमंत्री कोनराड संगमा जी, त्रिपुरा के मुख्यमंत्री माणिक साहा जी, सिक्किम के मुख्यमंत्री प्रेम सिंह तमांग जी, केंद्रीय मंत्रिमंडल के मेरे सहयोगी ज्योतिरादित्य सिंधिया जी, सुकांता मजूमदार जी, अरुणाचल प्रदेश के उप–मुख्यमंत्री, मिजोरम और नागालैंड की सरकार के मंत्रीगण, अन्य जनप्रतिनिधि, नॉर्थ ईस्ट से आए सभी भाई और बहनों, देवियों और सज्जनों।

साथियो,

आज संविधान निर्माता बाबा साहेब आंबेडकर का महापरिनिर्वाण दिवस है। बाबा साहेब का बनाया संविधान, संविधान के 75 वर्ष के अनुभव... हर देशवासी के लिए बहुत बड़ी प्रेरणा है। मैं सभी देशवासियों की तरफ से बाबा साहेब को श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं, उन्हें नमन करता हूं।

साथियो,

हमारा ये भारत मंडपम, बीते 2 वर्षों में अनेक राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों का साक्षी रहा है। यहां हमने जी–20 का इतना बड़ा और सफल आयोजन देखा। लेकिन आज का आयोजन और भी विशेष है। आज दिल्ली पूर्वोत्तरमय हो गई है। पूर्वोत्तर के विविधता भरे रंग आज राजधानी में एक सुंदर सा इंद्रधनुष बना रहे हैं। आज हम यहां पर पहला अष्टलक्ष्मी महोत्सव मनाने के लिए इकट्ठा हुए हैं। आने वाले तीन दिन तक, ये महोत्सव हमारे नॉर्थ–ईस्ट का सामर्थ्य पूरे देश को दिखाएगा, पूरे विश्व को दिखाएगा। यहां व्यापार–कारोबार से जुड़े समझौते होंगे, नॉर्थ ईस्ट के उत्पादों से दुनिया परिचित होगी, नॉर्थ ईस्ट का कल्चर, वहां की कुज़ीन आकर्षण का केंद्र होगा। नॉर्थ ईस्ट के जो हमारे अचीवर्स हैं, जिनमें से अनेक पद्म पुरस्कार विजेता यहां मौजूद हैं... इन सभी की प्रेरणा के रंग बिखरेंगे। ये पहला और अनोखा आयोजन है, जब इतने बड़े स्तर पर नॉर्थ ईस्ट में निवेश के द्वार खुल रहे हैं। ये नॉर्थ ईस्ट के किसानों, कारीगरों, शिल्पकारों के साथ–साथ दुनियाभर के निवेशकों के लिए भी एक बेहतरीन अवसर है। नॉर्थ ईस्ट का पोटेंशियल क्या है, ये हम यहां जो प्रदर्शनी लगी है, यहां जो हाट–बाज़ार में भी अगर जाएंगे तो हम अनुभव कर सकते हैं, उसकी विविधता, उसके सामर्थ्य को। मैं अष्टलक्ष्मी महोत्सव के आयोजकों को, नॉर्थ ईस्ट के सभी राज्यों के निवासियों को, यहां आए सभी निवेशकों को, यहां आने वाले सभी अतिथियों को बधाई देता हूं, अपनी शुभकामनाएं देता हूं।

साथियो,

बीते सौ–दो सौ साल के कालखंड को देखें... तो हमने पश्चिम की दुनिया का, वेस्टर्न वर्ल्ड का एक उभार देखा है। आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक हर स्तर पर दुनिया में पश्चिमी क्षेत्र की एक छाप रही है। और संयोग से, भारत में भी हमने देखा है कि जो हमारे देश को अगर हम देखें नक्शा पूरा तो वो पश्चिमी क्षेत्र ने भारत की ग्रोथ स्टोरी में बड़ी भूमिका निभाई है। इस वेस्ट सेंट्रिक कालखंड के बाद अब कहा जाता है कि 21वीं सदी ईस्ट की है, एशिया की है, पूर्व की है, भारत की है। ऐसे में, मेरा ये दृढ़ विश्वास है कि भारत में भी आने वाला समय पूर्वी भारत का है, हमारे पूर्वोत्तर का है। बीते दशकों में हमने मुंबई, अहमदाबाद, दिल्ली, चेन्नै, बेंगलुरु, हैदराबाद... ऐसे बड़े शहरों को उभरते देखा है। आने वाले दशकों में हम गुवाहाटी, अगरतला, इंफाल, ईटानगर, गंगटोक, कोहिमा, शिलॉन्ग और आइजॉल जैसे शहरों का नया सामर्थ्य देखने वाले हैं। और उसमें अष्टलक्ष्मी जैसे इन आयोजनों की बहुत बड़ी भूमिका होगी।

साथियो,

हमारी परंपरा में मां लक्ष्मी को सुख, आरोग्य और समृद्धि की देवी कहा जाता है। जब भी लक्ष्मी जी की पूजा होती है, तो हम उनके आठ रूपों को पूजते हैं। आदिलक्ष्मी, धनलक्ष्मी, धान्यलक्ष्मी, गजलक्ष्मी, संतानलक्ष्मी, वीरलक्ष्मी, विजयलक्ष्मी और विद्यालक्ष्मी इसी तरह भारत के पूर्वोत्तर में आठ राज्यों की अष्टलक्ष्मी विराजमान हैं... असम, अरुणाचल

प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। नॉर्थ ईस्ट के इन आठों राज्यों में अष्टलक्ष्मी के दर्शन होते हैं। अब जैसे पहला रूप है आदि लक्ष्मी। हमारे नॉर्थ ईस्ट के हर राज्य में आदि संस्कृति का सशक्त विस्तार है। नॉर्थ ईस्ट के हर राज्य में, अपनी परंपरा, अपनी संस्कृति का उत्सव मनाया जाता है। मेघालय का चेरी ब्लॉसम फेस्टिवल, नागालैंड का हॉर्नबील फेस्टिवल, अरुणाचल का ऑरेंज फेस्टिवल, मिज़ोरम का चपचार कुट फेस्टिवल, असम का बीहू, मणिपुरी नृत्य... कितना कुछ है नॉर्थ ईस्ट में।

साथियो,

दूसरी लक्ष्मी... धन लक्ष्मी, यानि प्राकृतिक संसाधन का भी नॉर्थ ईस्ट पर भरपूर आशीर्वाद है। आप भी जानते हैं... नॉर्थ ईस्ट में खनिज, तेल, चाय के बागान और बायो–डायवर्सिटी का अद्भुत संगम है। वहां रीन्युएबल एनर्जी का बहुत बड़ा पोटेंशियल है। "धन लक्ष्मी" का ये आशीर्वाद, पूरे नॉर्थ ईस्ट के लिए वरदान है।

साथियो,

तीसरी लक्ष्मी... धान्य लक्ष्मी की भी नॉर्थ ईस्ट पर भरपूर कृपा है। हमारा नॉर्थ ईस्ट, नैचुरल फार्मिंग के लिए, जैविक खेती के लिए, मिलेट्स के लिए प्रसिद्ध है। हमें गर्व है कि सिक्किम भारत का पहला पूर्ण जैविक राज्य है। नॉर्थ ईस्ट में पैदा होने वाले चावल, बांस, मसाले और औषधीय पौधे... वहां कृषि की शक्ति को दिखाते हैं। आज का भारत, दुनिया को हेल्दी लाइफ स्टाइल से जुड़े हुए, न्युट्रिशन से जुड़े हुए, जो सोल्यूशन देना चाहता है... उसमें नॉर्थ ईस्ट की बड़ी भूमिका है।

साथियो,

अष्टलक्ष्मी की चौथी लक्ष्मी हैं... गज लक्ष्मी। गज लक्ष्मी कमल पर विराजमान हैं और उनके आसपास हाथी हैं। हमारे नॉर्थ ईस्ट में विशाल जंगल हैं, काजीरंगा, मानस–मेहाओ जैसे नेशनल पार्क और वाइल्ड लाइफ सेंचुरी हैं, वहां अद्भुत गुफाएं हैं, आकर्षक झीलें हैं। गजलक्ष्मी का आशीर्वाद नॉर्थ ईस्ट को दुनिया का सबसे शानदार टूरिज्म डेस्टिनेशन बनाने का सामर्थ्य रखता है।

साथियो,

पांचवीं लक्ष्मी हैं... संतान लक्ष्मी यानि उत्पादकता की, क्रिएटिविटी की प्रतीक। नॉर्थ ईस्ट, क्रिएटिविटी के लिए, स्किल के लिए जाना जाता है। जो लोग यहां एग्ज़ीबिशन में जाएंगे, हाट–बाज़ार में जाएंगे..उन्हें नॉर्थ ईस्ट की क्रिएटिविटी दिखेगी। हैंडलूम्स का, हैंडीक्राफ्ट्स का ये हुनर सबका दिल जीत लेता है। असम का मुगा सिल्क, मणिपुर का मोइरांग फी, वांखेई फी, नागालैंड की चाखेशांग शॉल... ऐसे दर्जनों GI tagged products हैं, जो नॉर्थ ईस्ट की क्राफ्ट को, क्रिएटिविटी को दिखाते हैं।

साथियो,

अष्टलक्ष्मी की छठी लक्ष्मी हैं... वीर लक्ष्मी। वीर लक्ष्मी यानि साहस और शक्ति का संगम। नॉर्थ ईस्ट, नारी–शक्ति के सामर्थ्य का प्रतीक है। मणिपुर का नुपी लान आंदोलन, महिला–शक्ति का उदाहरण है। नॉर्थ ईस्ट की महिलाओं ने कैसे गुलामी के विरुद्ध बिगुल फूंका था, ये हमेशा भारत के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से दर्ज रहेगा। रानी गाइदिन्ल्यु, कनकलता बरुआ, रानी इंदिरा देवी, ललनु रोपिलियानी लोक–गाथाओं से लेकर हमारी आज़ादी की लड़ाई तक... नॉर्थ ईस्ट की नारीशक्ति ने पूरे देश को प्रेरणा दी है। आज भी इस परंपरा को नॉर्थ ईस्ट की हमारी बेटियां समृद्ध कर रही हैं। यहां आने से पहले मैं जिन स्टॉल्स में गया, वहां भी अधिकतर महिलाएं ही थीं। नॉर्थ ईस्ट की महिलाओं की इस उद्यमशीलता से पूरे नॉर्थ ईस्ट को एक ऐसी मजबूती मिलती है, जिसका कोई मुकाबला नहीं।

साथियो,

अष्टलक्ष्मी की सातवीं लक्ष्मी हैं... .जय लक्ष्मी। यानि ये यश और कीर्ति देने वाली हैं। आज पूरे विश्व में भारत के प्रति

जो उम्मीदें हैं, उसमें हमारे नॉर्थ ईस्ट की अहम भूमिका है। आज जब भारत, अपने कल्चर, अपने ट्रेड की ग्लोबल कनेक्टिविटी पर फोकस कर रहा है... तब नॉर्थ ईस्ट, भारत को साउथ एशिया और ईस्ट एशिया के असीम अवसरों से जोड़ता है।

साथियो,

अष्टलक्ष्मी की आठवीं लक्ष्मी हैं... विद्या लक्ष्मी यानि ज्ञान और शिक्षा। आधुनिक भारत के निर्माण में शिक्षा के जितने भी बड़े केंद्र हैं, उनमें से अनेक नॉर्थ ईस्ट में हैं। IIT गुवाहाटी, NIT सिल्चर, NIT मेघालय, NIT अगरतला, और IIM शिलॉन्ग... ऐसे अनेक बड़े एजुकेशन सेंटर्स नॉर्थ ईस्ट में हैं। नॉर्थ ईस्ट को अपना पहला एम्स मिल चुका है। देश की पहली नेशनल स्पोर्ट्स यूनिवर्सिटी भी मणिपुर में ही बन रही है। मैरी कॉम, बाइचुंग भूटिया, मीराबाई चानू, लोवलीना, सरिता देवी... ऐसे कितने ही स्पोर्ट्स पर्सन नॉर्थ ईस्ट ने देश को दिए हैं। आज नॉर्थ ईस्ट टेक्नोलॉजी से जुड़े स्टार्ट अप्स, सर्विस सेंटर्स और सेमीकंडक्टर जैसे उद्योगों में भी आगे आने लगा है। इनमें हज़ारों नौजवान काम कर रहे हैं। यानि "विद्या लक्ष्मी" के रूप में ये रीजन, युवाओं के लिए शिक्षा और कौशल का बड़ा केंद्र बन रहा है।

साथियो,

अष्टलक्ष्मी महोत्सव... नॉर्थ ईस्ट के बेहतर भविष्य का उत्सव है। ये विकास के नूतन सूर्योदय का उत्सव है... जो विकसित भारत के मिशन को गति देने वाला है। आज नॉर्थ ईस्ट में इन्वेस्टमेंट के लिए इतना उत्साह है। बीते एक दशक में हम सब ने North East Region के विकास की एक अद्भुत यात्रा देखी है। लेकिन यहां तक पहुंचना सरल नहीं था। नॉर्थ ईस्ट के राज्यों को भारत की ग्रोथ स्टोरी के साथ जोड़ने के लिए हमने हर संभव कदम उठाए हैं। लंबे समय तक हमने देखा है कि विकास को भी कैसे वोटों की संख्या से तौला गया। नॉर्थ ईस्ट के राज्यों के पास वोट कम थे, सीटें कम थीं। इसलिए, पहले की सरकारों द्वारा वहां के विकास पर भी ध्यान नहीं दिया गया। ये अटल जी की सरकार थी जिसने नॉर्थ ईस्ट के विकास के लिए पहली बार अलग मंत्रालय बनाया।

साथियो,

बीते दशक में हमने मन से प्रयास किया कि दिल्ली और दिल इससे दूरी का जो भाव है... वो कम होना चाहिए। केंद्र सरकार के मंत्री 700 से अधिक बार नॉर्थ ईस्ट के राज्यों में गए हैं, लोगों के साथ वहां लंबा समय गुजारा है। इससे सरकार का नॉर्थ ईस्ट के साथ, उसके विकास के साथ एक इमोशनल कनेक्ट भी बना है। इससे वहां के विकास को अद्भुत गति मिली है। मैं एक आंकड़ा देता हूं। नॉर्थ ईस्ट के विकास को गति देने के लिए 90 के दशक में एक पॉलिसी बनाई गई। इसके तहत केंद्र सरकार के 50 से ज्यादा मंत्रालयों को अपने बजट का 10 परसेंट नॉर्थ ईस्ट में निवेश करना पड़ता था। इस

नीति के बनने के बाद से लेकर साल 2014 तक जितना बजट नॉर्थ ईस्ट को मिला है... उससे कहीं अधिक हमने सिर्फ बीते 10 सालों में दिया है। बीते दशक में इस एक स्कीम के तहत ही, 5 लाख करोड़ रुपए से अधिक नॉर्थ ईस्ट में खर्च किया गया है। ये नॉर्थ ईस्ट को लेकर वर्तमान सरकार की प्राथमिकता दिखाता है।

साथियो,

इस स्कीम के अलावा भी, हमने कई बड़ी स्पेशल योजनाएं नॉर्थ ईस्ट के लिए शुरु की हैं। PM-डिवाइन Special Infrastructure Development Scheme और North East Venture Fund... इन स्कीम्स से रोजगार के, अनेक नए अवसर बने हैं। हमने नॉर्थ ईस्ट के इंडस्ट्रियल पोटेंशियल को बढ़ावा देने के लिए उन्नति स्कीम भी शुरु की है। नए उद्योगों के लिए बेहतर माहौल बनेगा, तो नए रोजगार भी बनेंगे। अब जैसे सेमीकंडक्टर का सेक्टर भारत के लिए भी नया है। इस नए सेक्टर को गति देने के लिए भी हमने नॉर्थ ईस्ट को, असम को चुना है। नॉर्थ ईस्ट में जब इस प्रकार की नई इंडस्ट्री लगेगी, तो देश और दुनिया के निवेशक वहां नई संभावनाएं तलाशेंगे।

साथियो,

नॉर्थ ईस्ट को हम, emotion, economy और ecology– इस त्रिवेणी से जोड़ रहे हैं। नॉर्थ ईस्ट में हम सिर्फ इंफ्रास्ट्रक्चर ही नहीं बना रहे, बल्कि भविष्य की एक सशक्त नींव तैयार कर रहे हैं। बीते दशकों में नॉर्थ ईस्ट की बहुत बड़ी चुनौती रही थी... कनेक्टिविटी। दूर–सुदूर के शहरों में पहुंचने के लिए कई–कई दिन और हफ्ते लग जाते थे। हालत ये थी कि ट्रेन की सुविधा तक कई राज्यों में नहीं थी। इसलिए 2014 के बाद हमारी सरकार ने फिजिकल इंफ्रास्ट्रक्चर पर भी और सोशल इंफ्रास्ट्रक्चर पर भी बहुत ज्यादा फोकस किया। इससे नॉर्थ ईस्ट में इंफ्रास्ट्रक्चर की क्वालिटी और लोगों के जीवन की क्वालिटी... दोनों में जबरदस्त सुधार हुआ। हमने प्रोजेक्ट्स के इंप्लीमेंटेशन

को भी तेज किया। कई वर्षों से चल रहे प्रोजेक्ट्स पूरे किए गए। आप बोगी–बील ब्रिज का ही उदाहरण लीजिए। कई सालों से लटके इस प्रोजेक्ट के पूरा होने से पहले, धेमाजी से डिब्रूगढ़ तक की यात्रा में पूरा एक दिन लगता था। आज, एक–आध घंटे में ही ये सफर पूरा हो जाता है। ऐसे कई उदाहरण मैं दे सकता हूं।

साथियो,

बीते 10 सालों में करीब 5 हज़ार किलोमीटर के नेशनल हाईवे के प्रोजेक्ट्स पूरे हो चुके हैं। अरुणाचल प्रदेश में सेला टनल हो, भारत–म्यांमार–थायलैंड ट्रायलेटरल हाईवे हो, नागालैंड, मणिपुर और मिज़ोरम में बॉर्डर रोड्स हों... इससे एक सशक्त रोड कनेक्टिविटी का विस्तार हो रहा है। पिछले साल जी–20 के दौरान भारत ने आई–मैक का विजन दुनिया के सामने रखा है। आई–मैक यानि भारत–मिडिल ईस्ट–यूरोप कॉरिडोर, भारत के नॉर्थ ईस्ट को दुनिया से जोड़ेगा।

साथियो,

नॉर्थ ईस्ट की रेल कनेक्टिविटी में कई गुणा वृद्धि हुई है। अब नॉर्थ ईस्ट के राज्यों की सभी राजधानियों को रेल से कनेक्ट करने का काम पूरा होने वाला है। नॉर्थ ईस्ट में पहली वंदे भारत ट्रेन भी चलने लगी है। बीते दस वर्षों में नॉर्थ ईस्ट में एयरपोर्ट्स और फ्लाइट्स की संख्या लगभग दोगुनी हो गई है। ब्रह्मपुत्र और बराक नदियों पर वॉटर–वे बनाने का काम चल रहा है। सबरूम लैंडपोर्ट से भी वॉटर कनेक्टिविटी बेहतर हो रही है।

साथियो,

मोबाइल और गैस पाइप–लाइन कनेक्टिविटी को लेकर भी तेजी गति से काम हो रहा है। नॉर्थ ईस्ट के हर राज्य को नॉर्थ ईस्ट गैस ग्रिड से जोड़ा जा रहा है। वहां 1600 किलोमीटर से अधिक लंबी गैस पाइप–लाइन बिछाई जा रही है। इंटरनेट कनेक्टिविटी पर भी हमारा जोर है। नॉर्थ ईस्ट के राज्यों में 2600 से अधिक मोबाइल टावर लगाए जा रहे हैं। 13 हज़ार किलोमीटर से अधिक का ऑप्टिकल फाइबर नॉर्थ ईस्ट में बिछाया गया है। मुझे खुशी है कि नॉर्थ ईस्ट के सभी राज्यों तक 5G कनेक्टिविटी पहुंच चुकी है।

साथियो,

नॉर्थ ईस्ट में सोशल इंफ्रास्ट्रक्चर में भी अभूतपूर्व काम हुआ है। नॉर्थ ईस्ट के राज्यों में मेडिकल कॉलेज का काफी विस्तार हुआ है। कैंसर जैसी बीमारियों के इलाज के लिए भी अब वहीं पर आधुनिक सुविधाएं बन रही हैं। आयुष्मान भारत योजना के तहत, नॉर्थ ईस्ट के लाखों मरीज़ों को मुफ्त इलाज की सुविधा मिली है। चुनाव के समय मैंने आपको गारंटी दी थी कि 70 वर्ष की आयु के ऊपर के बुजुर्गों को मुफ्त इलाज मिलेगा। आयुष्मान वय वंदना कार्ड से सरकार ने अपनी ये गारंटी भी पूरी कर दी है।

साथियो,

नॉर्थ ईस्ट की कनेक्टिविटी के अलावा हमने वहां के ट्रेडिशन, टेक्सटाइल और टूरिज्म पर भी बल दिया है। इसका फायदा ये हुआ कि देशवासी अब नॉर्थ ईस्ट को एक्सप्लोर

करने के लिए बड़ी संख्या में आगे आ रहे हैं। बीते दशक में नॉर्थ ईस्ट जाने वाले पर्यटकों की संख्या भी करीब–करीब दोगुनी हो चुकी है। निवेश और पर्यटन बढ़ने से वहां नए बिजनेस बने हैं, नए अवसर बने हैं। इंफ्रास्ट्रक्चर से इंटीग्रेशन, कनेक्टिविटी से क्लोज़नेस, इक्नॉमिक से इमोशनल... इस पूरी यात्रा ने नॉर्थ ईस्ट के विकास को, अष्टलक्ष्मी के विकास को नई ऊंचाई पर पहुंचा दिया है।

साथियो,

आज भारत सरकार की बहुत बड़ी प्राथमिकता अष्टलक्ष्मी राज्यों के युवा हैं। नॉर्थ ईस्ट का नौजवान हमेशा से विकास चाहता है। बीते 10 वर्षों से नॉर्थ ईस्ट के हर राज्य में स्थाई शांति के प्रति, एक अभूतपूर्व जन–समर्थन दिख रहा है। केंद्र और राज्य सरकारों के प्रयासों से हज़ारों नौजवानों ने हिंसा का रास्ता छोड़ा है... और विकास का नया रास्ता अपनाया है। बीते दशक में नॉर्थ ईस्ट में अनेक ऐतिहासिक शांति समझौते हुए हैं। राज्यों के बीच भी जो सीमा विवाद थे, उनमें भी काफी सौहार्दपूर्ण ढंग से प्रगति हुई है। इससे नॉर्थ ईस्ट में हिंसा के मामलों में बहुत कमी आई है। अनेक जिलों में से AFSPA को हटाया जा चुका है। हमें मिलकर अष्टलक्ष्मी का नया भविष्य लिखना है और इसके लिए सरकार हर कदम उठा रही है।

साथियो,

हम सभी की ये आकांक्षा है कि नॉर्थ ईस्ट के प्रोडक्ट्स, दुनिया के हर बाज़ार तक पहुंचने चाहिए। इसलिए हर जिले के प्रोडक्ट्स को, वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट अभियान के तहत प्रमोट किया जा रहा है। नॉर्थ ईस्ट के अनेक उत्पादों को हम यहां लगी प्रदर्शनियों में, ग्रामीण हाट बाजार में देख सकते हैं, खरीद सकते हैं। मैं नॉर्थ ईस्ट के प्रोडक्ट्स के लिए वोकल फॉर लोकल के मंत्र को बढ़ावा देता हूं। मेरा प्रयास रहता है वहां के उत्पादों को अपने विदेशी मेहमानों को भेंट करुं। इससे आपकी इस अद्भुत कला, आपके क्राफ्ट को इंटरनेशनल स्तर पर पहचान मिलती है। मैं देशवासियों से, दिल्ली वासियों से भी आग्रह करुंगा कि नॉर्थ ईस्ट के प्रोडक्ट्स को अपनी लाइफ–स्टाइल का हिस्सा बनाएं।

साथियो,

आज मैं आप सभी को वैसे कितने कुछ सालों से लगातार हमारे नॉर्थ ईस्ट के भाई–बहन वहां जरूर जाते हैं। आपको पता है गुजरात के पोरबंदर में, पोरबंदर के पास माधवपुर वहां एक मेला होता है। उस माधवपुर मेले का मैं अग्रिम निमंत्रण देता हूं। माधवपुर मेला, भगवान कृष्ण और देवी रुक्मिणी के विवाह का उत्सव है। और देवी रुक्मिणी तो नॉर्थ ईस्ट की ही बेटी हैं। मैं पूर्वोत्तर के अपने सभी परिवारजनों को अगले वर्ष होने वाले, मार्च–अप्रैल में होता है रामनवमी के साथ, उस मेले में शामिल होने का भी आग्रह करूंगा। और मैं चाहूंगा उस समय भी ऐसा ही एक हॉट गुजरात में लगाया जाए ताकि वहां भी बहुत बड़ा मार्केट मिले, और हमारे नॉर्थ ईस्ट के भाई–बहन जो चीजें बनाते हैं उनको कमाई भी हो। भगवान कृष्ण और अष्टलक्ष्मी के आशीर्वाद से हम जरूर नॉर्थ ईस्ट को 21वीं सदी में विकास का एक नया प्रतिमान स्थापित करते हुए देंखेंगे। इसी कामना के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूं। मैं इसको बड़ी सफलता के लिए शुभकामनाएं देता हूं।

बहुत–बहुत धन्यवाद।

(प्रधानमंत्री कार्यालय की वेबसाइट से साभार)

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता: परंपराएँ, उत्सव और लोककला

–राजेश चतुर्वेदी
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय स्टेट बैंक, गुवाहाटी

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र जितना विविधताओं से भरा है, उतना शायद कोई नहीं। सात बहन और एक भाई वाला पूर्वोत्तर क्षेत्र आठ राज्यों का समूह है। यह छोटे छोटे आठ राज्य अपनी प्राकृतिक खूबसूरती के साथ–साथ अपनी परंपराओं,जातीय अस्मिताओं को समेटे हुए पूरे विश्व में अपनी सांस्कृतिक विविधताओं के लिए विश्वविख्यात हैं। पूर्वोत्तर भारत–जिसे अक्सर 'अष्टलक्ष्मी क्षेत्र' भी कहा जाता है। हिमालय की उपत्यकाओं, ब्रह्मपुत्र और बराक की घाटियों, घने वर्षावनों और पहाड़ी भू–दृश्यों से घिरा यह क्षेत्र भारत के सांस्कृतिक मानचित्र में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। इन आठ राज्यों में अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम शामिल हैं। इन आठ राज्यों में सैकड़ों जनजातियाँ, बोलियाँ और परंपराएँ अस्तित्व में हैं। इनकी जीवन–शैली प्रकृति के साथ सामंजस्य, सामुदायिकता और मौखिक परंपराओं पर आधारित है। अरुणोदय की छटा से लेकर माता कामाख्या की पवित्र भूमि, प्रसिद्ध परशुराम कुंड से लेकर नेताजी के स्वतंत्रता आंदोलन में उनके त्याग और बलिदान की कहानी कहती मणिपुर निश्चित रूप से समग्र भारत की आत्मा को दर्शाती है।

1. अरुणाचल प्रदेश: परंपराओं की विविधता

भारत का "उगते सूरज की भूमि", न केवल अपनी प्राकृतिक सुंदरता बल्कि अपनी अद्वितीय सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ की जनजातीय विविधता, गहन परंपराएँ, भाषाई बहुलता और समृद्ध लोक कलाएँ इस राज्य को अलग पहचान दिलाती हैं। यहाँ 26 से ज्यादा प्रमुख जनजातियाँ और 100 से अधिक उप–जनजातियाँ रहती हैं। प्रत्येक जनजाति की अपनी सामाजिक संरचना (अक्सर गाँव परिषदों द्वारा शासित), विवाह प्रथाएँ और पारिवारिक मान्यताएँ हैं।

धार्मिक विश्वास: अधिकांश जनजातियाँ डोनी–पोलो (सूर्य और चंद्रमा) या अनीमिज़्म पर आधारित स्वदेशी धर्मों का पालन करती हैं। इनमें प्रकृति की आत्माओं, पूर्वजों की शक्तियों और स्थानीय देवताओं में विश्वास शामिल है। तिब्बती बौद्ध धर्म पश्चिमी जिलों में प्रमुख है।

त्योहार: ये जीवन के सार को चिह्नित करते हैं:

न्योकुम (न्यिशी): समृद्धि और सामुदायिक एकता के लिए।

लोसर (मोनपा, शेरदुकपेन): तिब्बती नव वर्ष, जीवंत मुखौटा नृत्यों के साथ।

रेह (इदु मिश्मी): पृथ्वी देवी की पूजा।

ड्री फेस्टिवल (अपातानी): फसल उत्सव।

सोलुंग (आदि): कृषि चक्र का उत्सव।

संगकेन (खामती): नव वर्ष का उत्सव।

अरुणाचल की लोक कलाएँ दैनिक जीवन, धार्मिक विश्वासों और सौंदर्यबोध का अद्भुत समामेलन हैं:

लोक नृत्य: ये सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मुख्य आधार हैं:

पोंग लोसर (मोनपा): जीवंत मुखौटा नृत्य जो बुराई पर अच्छाई की जीत को दर्शाता है।

आजी लामू (मोनपा): शांति और समृद्धि के लिए महिलाओं द्वारा किया जाने वाला नृत्य।

पेपे (अपातानी): फसल उत्सव के दौरान सामूहिक नृत्य।

बुइया (आदि): युद्ध नृत्य जो वीरता को दर्शाता है।

तपू (न्यिशी): सामुदायिक उत्सवों में किया जाने वाला नृत्य।

नृत्यों में अक्सर पारंपरिक वाद्ययंत्र जैसे ड्रम (डमडुम), ढोल (दा), बाँसुरी (पूंगी), और गोंग (चिंग) शामिल होते हैं।

अरुणाचल प्रदेश की सांस्कृतिक पहचान इसकी असाधारण जातीय विविधता, प्रकृति से जुड़ी गहरी परंपराओं, भाषाई समृद्धि और जीवंत लोक कलाओं में निहित है। यह एक ऐसी विरासत है जो न केवल अतीत को दर्शाती है बल्कि एक गतिशील वर्तमान में भी सांस लेती है। यह राज्य भारत की सांस्कृतिक मानचित्र पर एक चमकता हुआ रत्न है, जिसकी जटिलता और सुंदरता हमेशा आकर्षित और प्रेरित करती रहेगी।

2. असम : सांस्कृतिक विरासतों का राज्य

असम भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र का एक ऐसा प्रदेश है जहाँ प्रकृति की सुषमा और सांस्कृतिक विविधता का अद्वितीय समन्वय देखने को मिलता है। यहाँ की जातीय संरचना, सदियों पुरानी परंपराएँ, सजीव भाषाएँ और रंगबिरंगी लोक कलाएँ इस राज्य को एक विशिष्ट पहचान देती हैं। असम में 30 से अधिक जनजातियाँ और उपजातियाँ निवास करती हैं। मूल निवासी में अहोम, बोडो, कछारी, मिशिंग, दिमासा, तिवा आदि हैं जबकि अन्य समुदाय बंगाली, नेपाली, मारवाड़ी, गोरखा आदि भी कई वर्षों से यहाँ बसे हैं। आदिवासी समूह में सोनोवाल कछारी, राभा, ताई–फेक आदि कई जनजातियाँ हैं।

ये सभी समुदाय अपनी विशिष्ट सामाजिक व्यवस्था के साथ सदियों से सहअस्तित्व में रहते आए हैं। बोडो जनजाति की "बोडोलैंड स्वायत्त परिषद" और अहोमों का "बरगोहाई" (परंपरागत पंचायत) जैसी संस्थाएँ सामुदायिक सद्भाव का प्रतीक हैं।

असम की परंपराएँ प्रकृति और मानवीय रिश्तों के साथ गहराई से जुड़ी हैं:

बिहू: तीन रूपों (बोहाग, काति, माघ) में मनाया जाने वाला यह त्योहार कृषि चक्र से जुड़ा है। बोहाग बिहू पर "मुक्तियोर हुसोरी" (युवक–युवतियों का समूह नृत्य) असमिया संस्कृति की आत्मा है।

विवाह रीति: अहोम समुदाय में "आइयानाम" (वर–वधू का सिंदूर लगाना) और बोडो समाज में "दाओबरा" (चावल और दही का आदान–प्रदान) जैसी अनूठी रस्में हैं।

धार्मिक सहिष्णुता: कामाख्या मंदिर में तांत्रिक परंपरा और वैष्णव मठों में भक्ति आंदोलन का सहअस्तित्व है।

असमिया राज्य की राजभाषा है, परंतु यहाँ और भी कई भाषाएं बोली जाती हैं। ब्रह्मपुत्र घाटी की मुख्य भाषा असमिया है जिसकी लिपि बंगाली से मिलती–जुलती है। जनजातीय बोलियों में बोडो (तिब्बती–बर्मन परिवार), मिशिंग, कार्बी, राभा आदि कई भाषाएं शामिल हैं।

सांस्कृतिक प्रभाव: अहोम भाषा के शब्द (जैसे "फुकन" – सम्मान) आज भी प्रचलित हैं। असम की लोक कलाएँ यहाँ के जीवन दर्शन को दर्शाती हैं:

- **शास्त्रीय नृत्य:** वैष्णव मठों में विकसित यह शास्त्रीय नृत्य "भाव, राग और ताल" पर आधारित है।
- **बिहू नृत्य:** पुरुषों का "हुसोरी" और महिलाओं का "मुक्तिनृत्य" बसंत ऋतु की उल्लासपूर्ण अभिव्यक्ति।
- **जनजातीय कला:** बोडो का "बगुरुम्बा" (बाँसुरी नृत्य) और मिशिंग का "गुमराग सोमन" (मुखौटा नृत्य)

वैश्वीकरण के दबाव में असम की कई परंपराएँ विलुप्ति के कगार पर हैं। "असमिया सिलपी" (पारंपरिक बुनकर) और "खेल गछेरा" (लोक नाट्य) जैसी कलाएँ संरक्षण की माँग करती हैं। राज्य सरकार द्वारा "सत्र संस्कृति संरक्षण योजना" और "जनजातीय संग्रहालयों" के माध्यम से इन्हें बचाने का प्रयास किया जा रहा है।

3. मणिपुर: सांस्कृतिक समृद्धि की अविरल धारा

मणिपुर, जिसे "ज्वेल ऑफ इंडिया" के नाम से भी जाना जाता है, भारत के पूर्वोत्तर में स्थित एक ऐसा राज्य है जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक विरासत का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। मैत्रेय से लेकर महाभारत काल तक के उल्लेखों वाला यह प्रदेश एक जीवंत सांस्कृतिक मोज़ेक है, जिसमें विविध जातीय समुदाय, प्राचीन परंपराएँ, समृद्ध भाषाई विविधता, रंगारंग उत्सव और नाजुक लोक कलाएँ समाहित हैं।

मणिपुरी समाज मुख्यतः दो समुदायों में विभाजित है – 'मैतेइ (मणिपुरी हिंदू)' जो घाटी के मध्य भाग में निवास करते हैं, और 'पहाड़ी जनजातियाँ' (जैसे नागा, कुकी–चिन–मिज़ो समूह) जो पर्वतीय क्षेत्रों में रहती हैं। मैतेइ समुदाय को वैष्णव हिंदू धर्म का अनुयायी माना जाता है, जिनके सामाजिक ढाँचे में 'सलाई' (कुल) और 'युम' (परिवार) की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनकी सामाजिक व्यवस्था में राजपरिवार (मणिपुर राजघराने) का ऐतिहासिक रूप से केन्द्रीय स्थान रहा है।

ISSN No. : 0970-9398

पहाड़ी जनजातियों में 'नागा' (जैसे टैंगखुल, माओ, काबुई) और 'कुकी' (जैसे थाडौ, पैइते, हमार) प्रमुख हैं। ये समुदाय अपनी पारंपरिक मान्यताओं, सामुदायिक जीवन शैली और स्वशासी संस्थानों के लिए जाने जाते हैं। इनमें से अधिकांश ईसाई धर्म अपना चुके हैं, परंतु उनकी सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक प्रथाएँ आज भी जीवित हैं। यह जातीय विविधता मणिपुरी समाज को बहुआयामी बनाती है।

मणिपुर की धार्मिक परंपराएँ अत्यंत समृद्ध और सम्मिश्रित हैं। 'सनामही धर्म' यहाँ का मूल निवासी धर्म है, जो प्रकृति पूजा, पूर्वजों की आराधना और अनेक देवी–देवताओं (लाई) में विश्वास करता है। इसमें 'उमंग लाई'(वन देवता), 'लेइमारेल' (संपदा की देवी) और 'सोरारेन' (घरेलू देवता) जैसे देवताओं की पूजा की जाती है।

आज मणिपुर में वैष्णव हिंदू धर्म, सनामही, ईसाई धर्म और इस्लाम सह–अस्तित्व में हैं। 'मणिपुरी वैष्णव धर्म' की विशेषता है भगवान कृष्ण और राधा की भक्ति, जिसमें 'रास लीला' का आध्यात्मिक नृत्य सबसे महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है।

मणिपुर भाषाई दृष्टि से एक समृद्ध राज्य है। मणिपुरी भाषा (मैतेइलोन) राज्य की आधिकारिक भाषा है, जो तिब्बती–बर्मन परिवार से संबंधित है और इसमें 'मैतेइ मायेक' लिपि (एक प्राचीन सिलेबरी) का प्रयोग किया जाता है। हालांकि बंगाली लिपि भी प्रचलन में है। यह भाषा अपने साहित्यिक इतिहास के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें 14वीं शताब्दी का "ओइगी खोंगगुप" महाकाव्य विशेष उल्लेखनीय है।

मणिपुर के उत्सव यहाँ के सामाजिक जीवन के दर्पण हैं, जो धार्मिक विश्वासों, ऋतु परिवर्तन और सामुदायिक एकता को दर्शाते हैं।

'याओशांग (होली)' मणिपुरी हिंदुओं का सबसे महत्वपूर्ण उत्सव, जो फाल्गुन माह में मनाया जाता है। इसमें 'थाबल चोंगबा' (एक सामूहिक नृत्य) और रंगों का खेल प्रमुख है।

'लाई हराओबा' सनामही धर्म का सबसे बड़ा उत्सव, जो प्रकृति और देवताओं को समर्पित है। इसमें 'माइबी' (पुजारी) विशेष अनुष्ठान करते हैं और 'खम्बा थोइबी' (एक पारंपरिक नृत्य नाटक) का मंचन होता है।

'नींगोल चक–काबा' मणिपुरी महिलाओं का एक अनूठा उत्सव, जो स्त्री शक्ति और सामुदायिक भोज को समर्पित है।

'चुम्फा (क्रिसमस)' पहाड़ी क्षेत्रों में ईसाई समुदाय द्वारा बड़े उत्साह से मनाया जाता है।

'कुट उत्सव' नागा समुदाय का फसल उत्सव, जो सामुदायिक भोज, नृत्य और पारंपरिक गीतों के साथ मनाया जाता है।

'गंग–न्गाई' कुकी समुदाय का प्रमुख उत्सव, जो बसंत के आगमन पर मनाया जाता है।

मणिपुर की लोक कलाएँ विश्व विख्यात हैं और यहाँ की सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न अंग हैं।

नृत्य कला: मणिपुरी नृत्य भारतीय शास्त्रीय नृत्य के सबसे पवित्र और आध्यात्मिक रूपों में से एक है।

रास लीला: भगवान कृष्ण और गोपिकाओं की लीलाओं पर आधारित यह नृत्य–नाट्य भक्ति की पराकाष्ठा है। वसंत रास, कुन्ज रास, नित्य रास आदि इसके विभिन्न प्रकार हैं।

लाई हराओबा नृत्य: पौराणिक कथाओं और सृष्टि की उत्पत्ति से जुड़ा पारंपरिक नृत्य।

'थाबल चोंगबा: पारंपरिक ड्रम (थाबल) की थाप पर युवक–युवतियों का सामूहिक नृत्य।

पुंग चोलोम: ड्रम नृत्य का एक कलात्मक रूप, जो मणिपुरी मार्शल आर्ट 'थांग–ता' से जुड़ा हुआ है।

लोक संगीत एवं वाद्ययंत्र: मणिपुरी संगीत में 'पेना' (एक तार वाद्य) का विशेष स्थान है। 'पेना गायक' (पेना खोंगगा) ऐतिहासिक गाथाएँ और धार्मिक भजन गाते हैं। अन्य वाद्ययंत्रों में 'मोइबुंग'(बाँसुरी), 'खोंगजोम परबा' (ढोल), और 'शिंग' (झांझ) शामिल हैं।

लोक नाट्य एवं मार्शल आर्ट–मणिपुरी थिएटर की समृद्ध परंपरा है, जिसमें 'शुमंग लीला'(पारंपरिक नाटक) प्रमुख है। 'थांग–ता'' (तलवार और भाला कला) न केवल एक मार्शल आर्ट है, बल्कि एक प्रदर्शन कला भी है।

मणिपुर की जातीय संरचना, धार्मिक परंपराएँ, भाषाई विविधता, उत्सव और लोक कलाएँ मिलकर एक ऐसी सांस्कृतिक धरोहर का निर्माण करती हैं जो हजारों वर्षों से अक्षुण्ण है। यहाँ की कला केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना, सामाजिक एकता और ऐतिहासिक स्मृति का माध्यम है। रास लीला की दिव्य भक्ति से लेकर थांग–ता की ओजस्वी ऊर्जा तक, और लाई हराओबा की प्रकृति–पूजा से लेकर समकालीन चुनौतियों के बीच अपनी पहचान बनाए रखने के संघर्ष तक – मणिपुर की सांस्कृतिक यात्रा भारत की सांस्कृतिक विविधता की जीवंत कहानी कहती है।

4. मेघालय : पर्वतों की धरती की सांस्कृतिक विरासत

मेघालय, जिसका नाम "बादलों का घर" है, भारत के पूर्वोत्तर में स्थित एक छोटा परंतु सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध राज्य है। यहाँ की हरी–भरी पहाड़ियाँ, झरने और सघन वन केवल प्राकृतिक सौंदर्य ही नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक विविधता के भी प्रतीक हैं। मेघालय मुख्यतः तीन प्रमुख जनजातीय समुदायों – खासी, गारो और जयंतिया का घर है, जिनकी विशिष्ट सामाजिक संरचनाएँ, परंपराएँ, भाषाएँ और कलाएँ इस राज्य को एक अद्वितीय पहचान प्रदान करती हैं।

मेघालय की सामाजिक संरचना मातृसत्तात्मक है, जो भारत के अधिकांश समाजों से इसे विशिष्ट बनाती है। खासी और जयंतिया समुदायों में वंशावली, उत्तराधिकार और संपत्ति का हस्तांतरण मातृलिंकीय होता है। सबसे छोटी बेटी (क्हादुह) को परिवार की संपत्ति विरासत में मिलती है और वह परिवार की प्रमुख होती है। यह व्यवस्था "का त्यन्चा" या "लिंग सङ्गोट" नामक एक पारंपरिक कानूनी ढाँचे द्वारा संचालित है। हालांकि, आधुनिक कानूनों ने इस प्रथा को कुछ संशोधित किया है, फिर भी यह सांस्कृतिक पहचान का केंद्र बनी हुई है।

'गारो समुदाय' भी मातृसत्तात्मक है, परंतु इसमें "नोकमा" (मामा) का महत्वपूर्ण स्थान है, जो परिवार के निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गारो समाज "चाची" (मातृकुल) में विभाजित है। ये समुदाय सामूहिकता, सामुदायिक सद्भाव और प्रकृति के साथ सहजीवन में विश्वास रखते हैं, जो उनके सामाजिक ढाँचे में स्पष्ट झलकता है।

मेघालय के लोगों का जीवन त्योहारों, अनुष्ठानों और प्रकृति पूजा से गहरे जुड़ा है। प्रत्येक समुदाय के अपने विशिष्ट उत्सव हैं जो कृषि चक्र और धार्मिक मान्यताओं से संबंधित हैं।

'खासी समुदाय' के प्रमुख त्योहार हैं: 'कासी सेम्पुई' (नए अन्य की फसल), 'शाद सुक माइसियम' (फसल कटाई का उत्सव), और 'बाह खासी' (नृत्य महोत्सव)। 'नोंगक्रेम नृत्य' इस समुदाय का एक पवित्र नृत्य है, जो राज्य के शिलाँग में आयोजित किया जाता है और देवी "का ब्लई स्यंति" को समर्पित है।

गारो समुदाय का सबसे महत्वपूर्ण त्योहार 'वांगला' है, जो सूर्य देवता "सालजोंग" को समर्पित एक फसल उत्सव है। इसमें ढोल–नगाड़ों की थाप पर रंग–बिरंगे परिधानों में किए जाने वाले नृत्य, पारंपरिक भोज और मदिरा (चू) का आदान–प्रदान शामिल है।

जयंतिया समुदाय बेहदियेनखलम नृत्य त्यौहार मनाता है, जो सामुदायिक एकता और आशीर्वाद के लिए आयोजित किया जाता है। इन सभी उत्सवों में प्रकृति के प्रति कृतज्ञता,

पूर्वजों का स्मरण और सामुदायिक बंधनों का उत्सव मनाया जाता है।

धार्मिक आस्था के स्तर पर, यहाँ स्वदेशी नीमगीत धर्म (जैसे खासी का "नियमरे" और गारो का "सोंसारेक") ईसाई धर्म (अधिकांश आबादी) और कुछ अन्य धर्म सह–अस्तित्व में हैं। पारंपरिक मान्यताएँ प्रकृति की आत्माओं, पहाड़ों, नदियों और जंगलों में निवास करने वाले देवताओं में विश्वास करती हैं।

मेघालय भाषाई समृद्धि का खजाना है। खासी भाषा (जिसे स्थानीय स्तर पर 'काटेन ब्लांग' कहा जाता है) ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवार से संबंधित है और इसमें लैटिन लिपि का उपयोग किया जाता है। यह राज्य की प्रमुख भाषा है और शिलाँग इसका केंद्र है। गारो भाषा (जिसे 'अचिक' भी कहते हैं) तिब्बती–बर्मन परिवार की सदस्य है और इसमें बांग्ला–असमिया लिपि के एक रूप का प्रयोग होता है। जयंतिया या प्नार भाषा भी खासी भाषा से मिलती–जुलती है।

मेघालय की लोक कलाएँ यहाँ के लोगों के जीवन, विश्वासों और सौंदर्यबोध की मूर्त अभिव्यक्ति हैं।

संगीत एवं नृत्यः संगीत और नृत्य यहाँ के सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग हैं। खासी समुदाय के शाद सुक माइनसियम नृत्य में महिलाएँ और पुरुष एक साथ पारंपरिक वाद्ययंत्रों जैसे 'बांसुरी', 'ड्रम' (काड्ड), बाँस की घंटी (बोम्बीता) की थाप पर नृत्य करते हैं। गारो लोक नृत्य जैसे दोरो–दोरो (समूह नृत्य), अजेमिया (युद्ध नृत्य) और चा–वोंगसिकाअत्यंत ऊर्जावान हैं। जयंतिया लोक नृत्य जैसे लाहो (द्वैत नृत्य) सामुदायिक भागीदारी के सुंदर उदाहरण हैं।

लोक साहित्य एवं मौखिक परंपराः कहानियों, किंवदंतियों (जैसे खासी मिथक "कि लिंग सनोव" या "लिविंग ब्रिज" की कथा), लोक गीतों और कहावतों की एक समृद्ध मौखिक परंपरा है जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित होती है।

वैश्वीकरण, शहरीकरण और आधुनिक शिक्षा के प्रभाव ने पारंपरिक जीवनशैली पर दबाव डाला है। युवा पीढ़ी का शहरों की ओर पलायन, पारंपरिक हस्तशिल्प की घटती माँग और मातृसत्तात्मक व्यवस्था में आ रहे बदलाव कुछ चुनौतियाँ

ISSN No. : 0970-9398

हैं। मेघालय की जातीय संरचना, परंपराएँ, भाषाएँ और लोक कलाएँ एक–दूसरे से गहरे अंतर्संबंधित हैं, जो एक सुदृढ़ सांस्कृतिक ताना–बाना बुनती हैं। यह सांस्कृतिक विरासत न केवल अतीत की गाथा है, बल्कि एक गतिशील वर्तमान भी है जो नए परिवेश में ढलकर भी अपना मूल सार बनाए रखने का प्रयास कर रही है।

5. मिजोरम : पहाड़ों और संगीत की धरती

मिज़ोरम, जिसका शाब्दिक अर्थ है "पर्वतवासियों की भूमि", भारत के पूर्वोत्तर में स्थित एक ऐसा राज्य है जहाँ प्राकृतिक सुंदरता और सजीव सांस्कृतिक विरासत का अनूठा संगम देखने को मिलता है। 1987 में राज्य का दर्जा प्राप्त करने वाला मिज़ोरम मुख्य रूप से मिज़ो जनजाति का निवास स्थान है, जिनकी समृद्ध सांस्कृतिक पहचान उनकी सामुदायिक जीवन शैली, मौखिक परंपराओं, संगीतमय विरासत और रंगीन उत्सवों में प्रतिबिंबित होती है।

मिज़ोरम की आबादी का बहुमत 'मिज़ो जनजाति' से संबंधित है, जो 'तिब्बती–बर्मन मूल' के हैं। ऐतिहासिक रूप से इन्हें 'कुकी' या 'लुशाई' के नाम से भी जाना जाता था, परंतु अब 'मिज़ो' (पर्वतवासी) नाम ही प्रचलित है। मिज़ो समाज विभिन्न 'कुलों (क्लैन्स)' में विभाजित है, जैसे – थंगूर, रालते, हनहार, चंगते, लियनगुरा, रेंगमा आदि। ये कुल पितृसत्तात्मक व्यवस्था का पालन करते हैं और सामाजिक संगठन की मूल इकाई हैं।

मिज़ो समाज की एक प्रमुख विशेषता इसकी समतावादी प्रकृति है। पारंपरिक रूप से सामाजिक स्तरीकरण कम था और 'गाँव प्रमुख (लाल)' तथा 'युवा संघ (ज़ावल्बुक)' के माध्यम से सामुदायिक निर्णय लिए जाते थे। 'ज़ावल्बुक' (बैचलर्स डॉर्मिटरी) न केवल युवाओं के निवास स्थान थे, बल्कि सामाजिक प्रशिक्षण, सांस्कृतिक हस्तांतरण और सामुदायिक सेवा के केंद्र भी थे। हालाँकि आधुनिकता के प्रभाव से इन संस्थाओं का महत्व कम हुआ है, फिर भी सामुदायिक भावना आज भी मिज़ो समाज की मजबूत नींव है।

19वीं शताब्दी के अंत तक मिज़ो लोग 'प्रकृति पूजा और जीववाद' में विश्वास रखते थे। उनकी मान्यताओं में 'पहाड़ों, नदियों, वनों और पूर्वजों की आत्माओं' का महत्व था। 'पुजारी (बोक्सो)' विभिन्न अनुष्ठान और बलि प्रथाएँ संपन्न कराते थे।

1894 में वेल्श मिशनरी रेवरेंड डी. एडवर्ड्स के आगमन के साथ ईसाई धर्म का प्रवेश हुआ। आज लगभग 87% मिज़ो आबादी ईसाई (प्रेस्बिटेरियन, बैप्टिस्ट, रोमन कैथोलिक) है। इस परिवर्तन ने सामाजिक ढाँचे, शिक्षा और जीवन शैली को गहराई से प्रभावित किया। 'चर्च' आज मिज़ो समाज का केंद्रीय स्तंभ है, जो केवल धार्मिक गतिविधियों तक ही सीमित

नहीं, बल्कि सामाजिक सुधार, शिक्षा और सामुदायिक सेवा का भी प्रमुख केंद्र है। इस परिवर्तन के बावजूद, कई पारंपरिक सांस्कृतिक तत्वों को ईसाई धर्म के साथ समायोजित कर लिया गया है।

मिज़ोरम के उत्सव सामुदायिक जीवन, धार्मिक विश्वास और प्रकृति के साथ सद्भाव को दर्शाते हैं। हालाँकि अधिकांश पारंपरिक उत्सव ईसाईकरण के बाद लुप्त हो गए, फिर भी कुछ को नए रूप में जीवित रखा गया है।

- **चपचर कुत (पारंपरिक फसल उत्सव):** यह मिज़ोरम का सबसे महत्वपूर्ण पारंपरिक उत्सव है जो फसल कटाई के बाद मनाया जाता है। इसमें समुदाय भोज, पारंपरिक नृत्य (चेराव) और गीत शामिल होते हैं। आज यह उत्सव एक सांस्कृतिक महोत्सव के रूप में मनाया जाता है, जिसे राज्य सरकार द्वारा प्रायोजित किया जाता है।
- **मिम कुत (शांति का उत्सव):** यह उत्सव मिज़ो राष्ट्रीय मोर्चा और भारत सरकार के बीच 1986 के शांति समझौते की स्मृति में मनाया जाता है। यह शांति, एकता और सामुदायिक सद्भाव का प्रतीक है।
- **ईसाई उत्सव:** क्रिसमस मिज़ोरम का सबसे बड़ा और सबसे महत्वपूर्ण उत्सव है। पूरा राज्य दिसंबर के महीने में जगमगा उठता है। चर्च सेवाएँ, सामुदायिक भोज, सांस्कृतिक कार्यक्रम और प्रार्थना सभाएँ इस उत्सव का हिस्सा हैं। ईस्टर भी बड़ी धार्मिक श्रद्धा के साथ मनाया जाता है।

लोक कला: जीवन की सुरीली अभिव्यक्ति

मिज़ोरम की लोक कलाएँ यहाँ के लोगों की रचनात्मकता, सौंदर्यबोध और सामुदायिक भावना को प्रतिबिंबित करती हैं।

1. संगीत और नृत्य: संगीत मिज़ो सांस्कृतिक पहचान का केंद्रीय तत्व है।

लोक गीत (हुनलैम): मिज़ो लोक गीतों में प्यार, प्रकृति, इतिहास और पौराणिक कथाओं के विषय शामिल हैं। ये गीत तानपुरा के समान वाद्य 'तुमदाह' की थाप पर गाए जाते हैं।

आधुनिक मिज़ो संगीत: मिज़ो संगीतकारों ने पॉप, रॉक और गॉस्पेल संगीत को अपनाया है। मिज़ो पॉप इंडस्ट्री पूरे पूर्वोत्तर में प्रसिद्ध है।

चेराव नृत्य: यह मिज़ोरम का राज्य नृत्य है। इस नृत्य में महिलाएँ बाँस की लट्ठियों के बीच नृत्य करती हैं, जबकि पुरुष उन लट्ठियों को एक विशेष लय पर एक–दूसरे से टकराते हैं। यह समन्वय, लयबद्धता और सामूहिक प्रयास का प्रतीक है।

मिज़ो सांस्कृतिक परिदृश्य वैश्वीकरण, शहरीकरण और पश्चिमी प्रभाव के कारण परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। युवा पीढ़ी की पारंपरिक जीवनशैली से दूरी, हस्तशिल्प के कम होते महत्व और डिजिटल संस्कृति का प्रभाव चुनौतियाँ हैं।

हालाँकि, सांस्कृतिक पुनर्जागरण के प्रयास भी देखे जा रहे हैं। मिज़ो साहित्य सोसायटी, यंग मिज़ो एसोसिएशन और शैक्षणिक संस्थान भाषा और साहित्य के संरक्षण में जुटे हैं। चपचार कुत और मिम कुत जैसे उत्सवों को राज्य सरकार द्वारा बढ़ावा दिया जा रहा है।

6. नागालैंड: पर्वतों और परंपराओं की धरती

यह भारत के पूर्वोत्तर में स्थित एक ऐसा राज्य है जहाँ प्राकृतिक सुंदरता और गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत का अनोखा मेल देखने को मिलता है। 1963 में अस्तित्व में आया यह राज्य अपनी 16 प्रमुख जनजातियों और कई उप–जनजातियों के साथ एक सांस्कृतिक समृद्धि का प्रतीक है। नागालैंड के लोगों की पहचान उनकी जनजातीय संरचना, मौखिक परंपराओं, विविध भाषाओं, रंग–बिरंगे उत्सवों और विशिष्ट लोक कलाओं में निहित है।

नागालैंड मुख्य रूप से नागा जनजातियों का निवास स्थान है, जो तिब्बती–बर्मन मूल के माने जाते हैं। इन 16 प्रमुख जनजातियों में अंगामी, अओ, चखेसांग, चांग, खियाम्निउंगान, कोंयाक, लोथा, फोम, पोचुरी, रेंगमा, संगतम, सुमी, यिमचुंगर और जेलियांग शामिल हैं। प्रत्येक जनजाति की अपनी विशिष्ट सामाजिक–राजनीतिक संरचना, रीति–रिवाज और सांस्कृतिक प्रथाएँ हैं।

जनजातीय संरचना कुलों में विभाजित है, और वंशावली पितृसत्तात्मक है। प्रत्येक जनजाति के अपने पारंपरिक कानून और नैतिक संहिता हैं, जो नैतिकता, सामुदायिक जीवन और प्रकृति के साथ सामंजस्य पर बल देते हैं।

नागालैंड की सांस्कृतिक परंपराएँ गहराई से प्रकृति पूजा, पूर्वज पूजा और जीववाद से जुड़ी हुई हैं। ऐतिहासिक रूप से, नागा समुदाय अनेक देवी–देवताओं और प्रकृति की आत्माओं में विश्वास रखते थे, जिन्हें प्रसन्न करने के लिए विभिन्न अनुष्ठान और बलि प्रथाएँ प्रचलित थीं। पत्थर के स्मारक स्थापित करना, मेमने की बलि देना और फसल की अच्छी पैदावार के लिए अनुष्ठान करना आम बात थी।

19वीं और 20वीं शताब्दी में ईसाई मिशनरियों के आगमन के बाद, लगभग 90% नागा आबादी ईसाई धर्म (बैप्टिस्ट, रोमन कैथोलिक, प्रेस्बिटेरियन) अपना चुकी है। हालाँकि, बहुत से पारंपरिक रीति–रिवाज और सामाजिक मूल्य ईसाई धर्म के साथ घुल मिल चुके हैं। आज, चर्च नागा समाज का केंद्रीय संस्थान बन गया है और इसने सामुदायिक जीवन, शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

नागालैंड के उत्सव यहाँ के सामाजिक जीवन का सार प्रस्तुत करते हैं। ये अधिकतर कृषि चक्र से जुड़े हैं और सामुदायिक एकता, आनंद और धन्यवाद की भावना को दर्शाते हैं। यद्यपि अधिकांश नागा अब ईसाई हैं, फिर भी कई पारंपरिक उत्सवों को ईसाई तत्वों के साथ मनाया जाता है।

हॉर्नबिल उत्सव: यह नागालैंड का सबसे प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण उत्सव है, जो हर साल 1 से 10 दिसंबर तक कोहिमा में आयोजित किया जाता है। इसका नाम नागालैंड के राज्य पक्षी हॉर्नबिल के नाम पर रखा गया है। यह उत्सव नागा संस्कृति को प्रदर्शित करने का एक आधुनिक मंच है, जिसमें सभी जनजातियाँ भाग लेती हैं। पारंपरिक नृत्य, लोक गीत, हस्तशिल्प प्रदर्शनी, स्थानीय भोजन और नागा किंग चिली प्रतियोगिता इस उत्सव के आकर्षण हैं।

- **जनजातीय उत्सव:** प्रत्येक जनजाति के अपने पारंपरिक उत्सव हैं:
- **अंगामी:** सेकरेन्यी(फसल उत्सव)
- **अओ:** मोआत्सु (बसंत उत्सव, अब ईस्टर के साथ मनाया जाता है)
- **चखेसांग:** सुकरेन्यी (फसल उत्सव)
- **कोंयाक:** अओलेंग(बसंत और नए साल का उत्सव)
- **लोथा:** तोखु एमोंग्गु
- **सुमी:** तुलुनी (फसल उत्सव)

ये उत्सव सामूहिक भोज, पारंपरिक गीत–नृत्य, अनुष्ठान और सामुदायिक प्रार्थनाओं के साथ मनाए जाते हैं। क्रिसमस भी नागालैंड में बड़े उत्साह और भव्यता से मनाया जाता है।

ISSN No. : 0970-9398

नागालैंड की लोक कलाएँ यहाँ के लोगों के सौंदर्यबोध, कौशल और सांस्कृतिक मूल्यों को प्रतिबिंबित करती हैं।

लोक संगीत और नृत्यः संगीत और नृत्य नागा जीवनशैली का अभिन्न अंग हैं। प्रत्येक जनजाति के अपने पारंपरिक लोक गीत (युद्ध गीत, प्रेम गीत, शोक गीत, बालाड) और नृत्य शैलियाँ हैं। नृत्य सामूहिक होते हैं, जिनमें पुरुष और महिलाएँ रंग–बिरंगे पारंपरिक परिधान पहनकर भाग लेते हैं। ड्रम, बाँसुरी और मुख से बजाए जाने वाले वाद्य संगीत के प्रमुख साधन हैं। आधुनिक नागा पॉप म्यूज़िक भी बहुत लोकप्रिय है।

नागालैंड की जातीय विविधता, गहन परंपराएँ, भाषाई बहुलता, जीवंत उत्सव और विशिष्ट लोक कलाएँ मिलकर एक ऐसी सांस्कृतिक पहचान बनाती हैं जो लचीली और गतिशील है। यह एक ऐसी संस्कृति है जिसने ऐतिहासिक परिवर्तनों को आत्मसात किया है, बाहरी प्रभावों को समायोजित किया है, और फिर भी अपने मूल सार को बरकरार रखा है। नागालैंड के लोगों की कला और उत्सव केवल मनोरंजन के साधन नहीं हैं, बल्कि सामुदायिक एकता, ऐतिहासिक स्मृति और सांस्कृतिक गौरव की अभिव्यक्ति हैं। यह सांस्कृतिक धरोहर न केवल भारत की विविधता को समृद्ध करती है, बल्कि पूरी मानवता के लिए एक मूल्यवान खजाना है, जिसके संरक्षण और सम्मान की आवश्यकता है।

7. त्रिपुरा : सांस्कृतिक विविधता और लोक परंपराओं की अनूठी धरा

पूर्वोत्तर भारत के हृदय स्थल पर स्थित त्रिपुरा राज्य, अपनी प्राकृतिक सुषमा के साथ–साथ एक अत्यंत समृद्ध और जीवंत सांस्कृतिक विरासत का धनी है। यहाँ की संस्कृति मूल रूप से जनजातीय समुदायों, विशेषकर त्रिपुरी (देबर्मा) समुदाय, के इर्द–गिर्द घूमती है, साथ ही बंगाली समुदाय सहित अन्य समुदायों के प्रभाव ने इसे एक सुंदर संगम का रूप दिया है। यहाँ की परंपराएँ, उत्सव और लोक कलाएँ न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि जीवन दर्शन, सामाजिक मूल्यों और प्रकृति के साथ सामंजस्य को व्यक्त करने वाले सशक्त माध्यम भी हैं।

त्रिपुरा की संस्कृति की मूल भावना सामूहिक जीवन और प्रकृति के प्रति गहरे आदर में निहित है। यहाँ के समाज का ढाँचा मुख्यतः 'होडा' (गाँव) के इर्द–गिर्द बना है, जिसका प्रमुख 'रोआ' या 'गाँव का मुखिया' होता है। सामूहिक निर्णय और सहयोग यहाँ की सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला हैं। त्रिपुरा के उत्सव जीवन के प्रति उत्साह और प्रकृति के प्रति कृतज्ञता से परिपूर्ण हैं। ये अधिकांशतः कृषि चक्र से जुड़े हैं।

खार्ची पूजाः यह त्रिपुरा का सबसे महत्वपूर्ण राजकीय त्योहार है, जो वर्ष के अंत में मनाया जाता है। यह चौदह देवताओं की पूजा से संबंधित है और समृद्धि की कामना को समर्पित है। इसमें पशु बलि, सामूहिक भोज (माई–बसी) और नृत्य–संगीत शामिल होते हैं।

गरिया पूजाः यह वसंत ऋतु में मनाया जाने वाला एक प्रमुख कृषि त्योहार है। इसमें लकड़ी के देवता 'गरिया' की पूजा की जाती है, ताकि फसलें अच्छी हों और गाँव सुरक्षित रहे। यह उत्सव हर्षोल्लास, नृत्य और आनंद से भरपूर होता है।

केर पूजाः नए साल की शुरुआत में मनाई जाने वाली केर पूजा गाँव की सीमाओं की रक्षा करने वाले देवता को समर्पित है। यह सामुदायिक एकता और सुरक्षा की भावना को मजबूत करता है।

बैशाखी (बिहु का प्रभाव): हालाँकि बिहु मुख्यतः असम का त्योहार है, लेकिन त्रिपुरा के कई समुदाय इसे उत्साह से मनाते हैं, जो क्षेत्र की सांस्कृतिक समानता को दर्शाता है।

दुर्गा पूजा एवं दीवालीः बंगाली समुदाय की प्रमुख उपस्थिति के कारण दुर्गा पूजा यहाँ बहुत धूमधाम से मनाई जाती है। अगरतला सहित राज्य के विभिन्न हिस्सों में सुंदर पंडाल बनाए जाते हैं। दीवाली भी उल्लास के साथ मनाई जाती है।

त्रिपुरा की लोक कलाएँ यहाँ के लोगों की सौंदर्य दृष्टि और कौशल का प्रमाण हैं। ये कलाएँ पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित होती हैं।

लोक नृत्य एवं संगीतः त्रिपुरा का लोक नृत्य और संगीत यहाँ की आत्मा है। ये नृत्य सामूहिक होते हैं और अक्सर त्योहारों के अवसर पर किए जाते हैं।

होजागिरीः यह त्रिपुरी महिलाओं द्वारा किया जाने वाला सबसे प्रसिद्ध नृत्य है। महिलाएँ एक साथ मिलकर, हाथों में थाली जैसे बर्तन ('खम') लेकर, संतुलन बनाते हुए अद्भुत नृत्य प्रस्तुत करती हैं। यह नृत्य गरिया पूजा से जुड़ा है।

ISSN No. : 0970-9398

गरिया नृत्यः यह पुरुषों द्वारा गरिया पूजा के अवसर पर किया जाने वाला ऊर्जावान नृत्य है।

बिजु नृत्यः बंगाली नववर्ष के अवसर पर किया जाने वाला यह नृत्य युवाओं में लोकप्रिय है।

लोक संगीतः त्रिपुरी लोक संगीत में प्रेम, प्रकृति और पौराणिक कथाओं के गीत शामिल हैं। 'सेरेंग' (एक तरह का बाँसुरी), 'खांब' (ड्रम), 'सुमुई' (बाँसुरी) और 'चोंगप्रेंग' (तार वाद्य) यहाँ के प्रमुख वाद्ययंत्र हैं।

त्रिपुरा की संस्कृति एक जीवित, साँस लेती हुई परंपरा है जो आधुनिकता के बीच भी अपनी मूल पहचान को संजोए हुए है। यहाँ की परंपराएँ, उत्सव और लोक कलाएँ न सिर्फ अतीत की झलक पेश करते हैं, बल्कि वर्तमान सामाजिक सरोकारों और आशाओं को भी अभिव्यक्त करते हैं। यह सांस्कृतिक विरासत न केवल त्रिपुरा के लोगों के लिए गर्व का विषय है, बल्कि भारत के सांस्कृतिक ताने–बाने का एक अनमोल धागा भी है। इसे संरक्षित करना और आगे बढ़ाना न केवल राज्य बल्कि समूचे राष्ट्र की सांस्कृतिक समृद्धि के लिए आवश्यक है। त्रिपुरा का सांस्कृतिक परिदृश्य यह संदेश देता है कि विविधता में एकता और प्रकृति के साथ सहअस्तित्व ही सच्चे सुख और समृद्धि का मार्ग है।

8. सिक्किमः धर्म, संस्कृति और प्रकृति का त्रिवेणी संगम

हिमालय की गोद में बसा सिक्किम भारत का एक ऐसा राज्य है जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक विविधता का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। 1975 में भारत का हिस्सा बना यह राज्य अपनी बहुजातीय समाज व्यवस्था, बौद्ध–हिंदू सहअस्तित्व, रंग–बिरंगे उत्सवों और समृद्ध कलात्मक विरासत के लिए विख्यात है। सिक्किम की संस्कृति पर तिब्बती, नेपाली और लेपचा प्रभावों की अमिट छाप है, जो इसे भारत की सांस्कृतिक बहुलता में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। सिक्किम की सामाजिक संरचना मुख्यतः तीन प्रमुख जातीय समूहों – लेपचा, भूटिया और नेपाली के सहअस्तित्व पर आधारित है। प्रत्येक समुदाय की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है, जो सिक्किम को एक सांस्कृतिक मोज़ेक बनाती है। सिक्किम के उत्सव राज्य की धार्मिक सहिष्णुता और सांस्कृतिक समृद्धि के जीवंत प्रमाण हैं।

❖ **लोसूंग (तिब्बती नववर्ष):** भूटिया समुदाय का प्रमुख उत्सव, जो चैत्र माह में मनाया जाता है। इसमें चाम नृत्य (मुखौटा नृत्य) का आयोजन गुम्पाओं में किया जाता है, जो बुराई पर अच्छाई की विजय को दर्शाता है।

ISSN No. : 0970-9398

- **सागा दावाः** भगवान बुद्ध के जन्म, ज्ञानप्राप्ति और महापरिनिर्वाण की स्मृति में मनाए जाने वाले इस उत्सव में पवित्र महीने के दौरान मानसरोवर झील की परिक्रमा और धार्मिक अनुष्ठान किए जाते हैं।
- **दस्सैं (दशहरा) और तिहारः** नेपाली समुदाय के प्रमुख हिंदू त्योहार, जो सामुदायिक भोज, पूजा–अर्चना और पारिवारिक मिलन के अवसर प्रदान करते हैं।
- **सोनम लोसूंगः** तिब्बती कैलेंडर के अनुसार फसल उत्सव जिसमें नये अन्न की पूजा और सामुदायिक नृत्य शामिल हैं।
- **माघे संक्रांति (माघे):** लिंबू समुदाय का प्रमुख उत्सव, जो सूर्य उपासना और नए फसल से जुड़ा है।
- **राज्योत्सव (16 मई):** सिक्किम के भारत में विलय की स्मृति में मनाया जाने वाला 'राष्ट्रीय पर्व'।

सिक्किम की लोक कलाएँ यहाँ के लोगों की सौंदर्यबोध, धार्मिक आस्था और प्राकृतिक प्रेम की अभिव्यक्ति हैं।

शास्त्रीय नृत्य कलाः

चाम नृत्यः तिब्बती बौद्ध मठों का पवित्र मुखौटा नृत्य। यह धार्मिक कथाओं पर आधारित है और मन की बुराइयों पर विजय का प्रतीक है।

मारुनी नृत्यः नेपाली समुदाय का शास्त्रीय नृत्य,जो दशहरा के अवसर पर किया जाता है।

लिम्बू नृत्यः धान बोते समय किया जाने वाला कृषि नृत्य।

लोक संगीत एवं वाद्ययंत्रः

पारंपरिक वाद्यः ड्रम (ढोल), झांझ, बाँसुरी, दम्फू (एक प्रकार का बाजा) लोक संगीत के मुख्य वाद्य हैं।

लोक गीतः गुरेडा (मौसमी गीत), सेलो (बौद्ध भजन), तामांग सेलो आदि प्रमुख लोक गीत शैलियाँ हैं।

सिक्किम की जातीय विविधता, धार्मिक सहिष्णुता, भाषाई बहुलता, रंग–बिरंगे उत्सव और समृद्ध लोक कलाएँ मिलकर एक अद्वितीय सांस्कृतिक पहचान का निर्माण करती हैं। यह एक ऐसा समाज है जहाँ बौद्ध धर्म की शांति और हिंदू धर्म के उल्लास का सामंजस्य, तिब्बती मठों की गूँज और नेपाली लोकगीतों की मधुरता का मेल देखने को मिलता है। थांगका चित्रकला की सूक्ष्मता से लेकर चाम नृत्य की ऊर्जा तक और लेपचा बुनाई की कलात्मकता से लेकर सिक्किमी व्यंजनों के स्वाद तक – यह सांस्कृतिक विरासत न केवल भारत बल्कि विश्व की सांस्कृतिक धरोहर का मूल्यवान हिस्सा है। सिक्किम का उदाहरण हमें सिखाता है कि विविध सांस्कृतिक धाराएँ किस प्रकार शांतिपूर्ण सहअस्तित्व में रहकर एक समृद्ध और सामंजस्यपूर्ण समाज का निर्माण कर सकती हैं। इस धरोहर का संरक्षण भारतीय सांस्कृतिक बहुलता को बनाए रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

उपर्युक्त तथ्यों से पता चलता है कि सच में ईश्वर ने पूर्वोत्तर क्षेत्र के कैनवस पर प्रकृति के सौन्दर्य के साथ–साथ मानवीय प्रकृति के सभी रंगों को बिखेरा है। यदि आपने अभी तक इन रंगों में सजे इन प्रदेशों का मजा नहीं लिया है तो देर मत कीजिए .. बस एक बार स्वर्गीय आनंद का मजा ले लीजिए।

ISSN No. : 0970-9398

राजभाषा हिंदी और पूर्वोत्तर भारत की भाषाएं

– सुनीता प्रसाद एवं बसंत कुमार दास
भाकृअनुप–केंद्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता

भारत विविधताओं का देश है–भाषा, संस्कृति, परंपरा, वेशभूषा, खान–पान और जीवन–शैली की विविधता यहाँ की पहचान है। इस विविधता में एकता का सूत्र पिरोए रखने वाली शक्ति ही भारत की आत्मा है। "एक भारत–श्रेष्ठ भारत" की अवधारणा इसी भाव को साकार करती है। इस व्यापक राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में राजभाषा हिंदी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, विशेषकर पूर्वोत्तर भारत जैसे बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक क्षेत्र में, जहाँ हिंदी एक सांस्कृतिक सेतु के रूप में उभरकर सामने आती है।

पूर्वोत्तर भारत : विविधताओं का संगम

पूर्वोत्तर भारत भारतीय उपमहाद्वीप का वह अनोखा भूभाग है, जहाँ प्रकृति, संस्कृति, भाषा और परंपराओं की असाधारण विविधता एक–दूसरे से घुल–मिलकर एक जीवंत सामाजिक ताने–बाने का निर्माण करती है। असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम–ये आठ राज्य मिलकर पूर्वोत्तर भारत का निर्माण करते हैं, जिसे अक्सर "सात बहनों और एक भाई" के नाम से भी जाना जाता है। हिमालय की पूर्वी पर्वतमालाएँ, हरे–भरे वन, विस्तृत नदी प्रणालियाँ, झरने और जैव विविधता से भरपूर यह क्षेत्र प्राकृतिक सौंदर्य का अनुपम उदाहरण है। परंतु इसकी वास्तविक पहचान यहाँ के लोगों, उनकी भाषाओं और सांस्कृतिक परंपराओं में निहित है। पूर्वोत्तर भारत में 200 से अधिक जनजातियाँ निवास करती हैं, जिनकी अपनी विशिष्ट सामाजिक संरचना, जीवन शैली, रीति–रिवाज हैं। यहाँ बोली जाने वाली असमिया, बोडो, मणिपुरी, खासी, गारो, मिज़ो, नागा भाषाएँ, कोकबोरोक और नेपाली जैसी अनेक भाषाएँ इस क्षेत्र की भाषायी समृद्धि को दर्शाती हैं।

राज्य	प्रमुख क्षेत्रीय भाषाएँ
असम	असमिया, बंगाली, बोडो
त्रिपुरा	बंगाली, त्रिपुरी
अरुणाचल प्रदेश	स्थानीय आदिवासी भाषाएँ (निसी, डाफला, आदि, हिंदी, अंग्रेजी, बंगाली आदि)
मणिपुर	मणिपुरी
मेघालय	खासी, गारो
मिजोरम	मिजो
नागालैंड	नागा उपभाषाएँ
सिक्किम	नेपाली, बंगाली

यहाँ के लोकगीत, लोकनृत्य, हस्तशिल्प, पारंपरिक वेशभूषा और उत्सव–जैसे बिहू, लोसार, संगाई, वांगला, हॉर्नबिल और चापचार कुट–पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक चेतना को जीवंत बनाए रखते हैं। यहाँ की संस्कृति में आदिवासी परंपराओं के साथ–साथ बौद्ध, हिंदू, ईसाई और अन्य धार्मिक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं, जो पारस्परिक अस्तित्व और सहिष्णुता की भावना को प्रबल करते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से भी पूर्वोत्तर भारत का योगदान महत्वपूर्ण रहा है–चाहे वह स्वतंत्रता आंदोलन में सहभागिता हो या सीमावर्ती क्षेत्रों की सुरक्षा और राष्ट्रीय एकता में भूमिका। आधुनिक समय में यह क्षेत्र शिक्षा, खेल, संगीत, साहित्य और पर्यटन के क्षेत्र में तेजी से उभर रहा है। इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि विविधताओं का ऐसा संगम है, जहाँ बहुलता में एकता का भारतीय आदर्श सजीव रूप में दिखाई देता है।

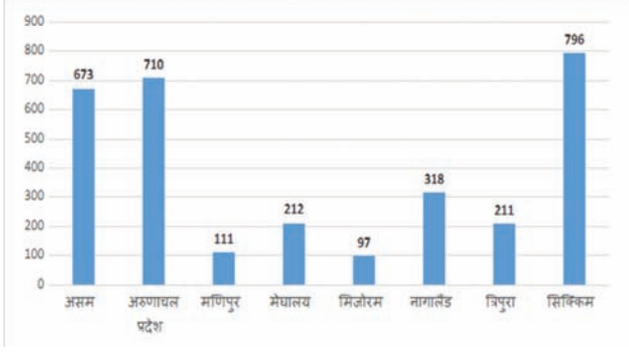

चित्र: पूर्वोत्तर राज्यों में प्रति 10000 व्यक्तियों में हिंदी बोलने वालों की संख्या (स्रोत जनगणना, 2011)

ISSN No. : 0970-9398

राजभाषा हिंदी : संवैधानिक आधार और राष्ट्रीय भूमिका

राजभाषा हिंदी को भारतीय संविधान द्वारा एक सुदृढ़ संवैधानिक आधार प्रदान किया गया है, जो उसे केवल एक प्रशासनिक भाषा के तौर पर ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समन्वय के महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में भी स्थापित करता है। संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार, देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी संघ की राजभाषा होगी तथा अंकों का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप प्रयुक्त किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, संविधान के भाग सत्रह (अनुच्छेद 343 से 351) में राजभाषा से संबंधित विस्तृत व्यवस्थाएँ की गई हैं, जिनका उद्देश्य प्रशासन में हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहित करना और साथ ही भारत की बहुभाषिक प्रकृति का सम्मान बनाए रखना है। अनुच्छेद 351 में यह स्पष्ट किया गया है कि हिंदी को इस प्रकार समृद्ध किया जाए कि वह भारत की मिश्रित संस्कृति की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन सके तथा अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों और अभिव्यक्तियों को आत्मसात कर सके। हिंदी का उद्देश्य किसी अन्य भाषा को प्रतिस्थापित करना नहीं, बल्कि भाषायी समन्वय और सहयोग को बढ़ावा देना है। राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी की भूमिका अत्यंत व्यापक और बहुआयामी है। यह केन्द्र सरकार, सार्वजनिक उपक्रमों, बैंकों, रेलवे, डाक, रक्षा सेवाओं और अन्य केंद्रीय संस्थानों में प्रशासनिक कार्यों की प्रमुख भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है, जिससे देश के विभिन्न हिस्सों के नागरिकों को सरकारी व्यवस्था से जुड़ने में सुविधा मिलती है। इसके साथ ही हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में देश के अलग–अलग भाषायी समुदायों के बीच संवाद स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। शिक्षा, मीडिया, साहित्य, सिनेमा और डिजिटल मंचों के माध्यम से हिंदी ने जन–जन तक अपनी पहुँच बनाई है और राष्ट्रीय चेतना को सशक्त किया है।

हिंदी : संवाद और संपर्क की भाषा

भारत के उत्तर–पूर्वी राज्य भाषायी, सांस्कृतिक और जातीय विविधता के अद्भुत उदाहरण हैं। इस क्षेत्र में सैकड़ों जनजातीय और स्थानीय भाषाएँ बोली जाती हैं, जिनमें तिब्बती–बर्मी, ऑस्ट्रो–एशियाटिक और इंडो–आर्यन भाषा परिवारों की भाषाएँ शामिल हैं। इतनी व्यापक भाषायी विविधता के बीच हिंदी एक संपर्क भाषा (Link Language) के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हिंदी न केवल विभिन्न समुदायों के बीच संवाद का माध्यम बनती है, बल्कि उत्तर–पूर्व और शेष भारत के बीच सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक सेतु का भी कार्य करती है। उत्तर–पूर्वी राज्यों में हिंदी का प्रयोग विशेष रूप से अंतर–राज्यीय संपर्क, शिक्षा, प्रशासन, व्यापार और मीडिया में देखा जाता है। असम में असमिया प्रमुख भाषा होने के बावजूद हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में व्यापक स्वीकृति प्राप्त है, विशेषकर शहरी क्षेत्रों और बहुभाषी समाज में। अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड जैसे राज्यों में, जहाँ अनेक जनजातीय भाषाएँ प्रचलित हैं, हिंदी विभिन्न समुदायों के बीच संवाद का सरल माध्यम बनकर उभरती है। मणिपुर, मिज़ोरम और मेघालय में भी हिंदी का प्रयोग मुख्यतः संपर्क, शिक्षा और बाहरी राज्यों से संवाद के लिए किया जाता है। त्रिपुरा और सिक्किम में, जहाँ हिंदी भाषी जनसंख्या का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक है, हिंदी दैनिक जीवन और प्रशासन में भी प्रभावी भूमिका निभाती है। शिक्षा के क्षेत्र में हिंदी का योगदान विशेष उल्लेखनीय है। केंद्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों, सैनिक स्कूलों तथा केंद्रीय विश्वविद्यालयों में हिंदी अनिवार्य या वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। इससे उत्तर–पूर्व के विद्यार्थियों को अखिल भारतीय प्रतियोगी परीक्षाओं, उच्च शिक्षा और रोजगार के अवसरों में सुविधा मिलती है। हिंदी उन्हें देश के अन्य हिस्सों से जोड़ने में सहायक होती है और राष्ट्रीय मुख्यधारा में उनकी भागीदारी को सशक्त बनाती है।

पूर्वोत्तर भारत से हिंदी प्रकाशनः बहुभाषी क्षेत्र में हिंदी की सृजनात्मक उपस्थिति

हिंदी साहित्य और पूर्वोत्तर भारत के बीच का संबंध निरंतर सुदृढ़ होता हुआ एक सृजनात्मक और सांस्कृतिक संवाद का रूप ले चुका है, जिसमें इस क्षेत्र की विविध जीवनानुभूतियाँ, प्रकृति, लोकसंस्कृति और सामाजिक यथार्थ हिंदी साहित्य को नई दृष्टि और व्यापकता प्रदान कर रहे हैं। लंबे समय तक साहित्यिक मुख्यधारा से भौगोलिक दूरी के कारण अपेक्षाकृत कम प्रतिनिधित्व पाने वाले पूर्वोत्तर भारत की आवाज़ अब हिंदी साहित्य में स्पष्ट और प्रभावशाली ढंग से सुनाई देने लगी है।

सामान्यतः यह क्षेत्र अपनी समृद्ध जनजातीय भाषाओं, असमिया, बांग्ला, मणिपुरी, खासी, मिज़ो और नागा भाषाओं के लिए पहचाना जाता है, किंतु इस बहुभाषी परिवेश में हिंदी ने भी धीरे–धीरे एक सशक्त संपर्क भाषा और साहित्यिक माध्यम के रूप में अपनी जगह बनाई है। उत्तर पूर्व से हिंदी में होने वाले प्रकाशन न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक संवाद को भी मजबूत करते हैं। अतः पूर्वोत्तर भारत से हिंदी प्रकाशन उस सांस्कृतिक सेतु का कार्य करते हैं, जो स्थानीय अनुभवों को अखिल भारतीय संदर्भ में प्रस्तुत करता है। ये प्रकाशन न केवल हिंदी साहित्य को नई संवेदनाएँ देते हैं, बल्कि पूर्वोत्तर और शेष भारत के बीच आपसी समझ और संवाद को भी सुदृढ़ करते हैं।

क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य जिनका हिंदी अनुवाद/रूपांतरण किया गया है–

क्षेत्रीय भाषा	क्षेत्रीय भाषा ग्रंथ
असम	असमिया साहित्य का हिंदी में व्यापक अनुवाद हुआ है, जिससे असम की भाषा–संस्कृति राष्ट्रीय साहित्यिक धारा से जुड़ी है। 1. आधुनिक असमिया कविता (हिंदी अनुवाद) – नलिनीबाला देवी, हेम बरुआ, नीलमणि फूकन 2. हिंदी साहित्यिक पत्रिका "पूर्वोत्तर संवाद" ने इस क्षेत्र की सामाजिक–सांस्कृतिक चिंताओं को हिंदी पाठकों तक पहुँचाया है।
अरुणाचल प्रदेश	अरुणाचल प्रदेश का साहित्य **(मुख्यतः मौखिक/ लोक परंपरा, तथा आदि, नयाशी, गालो, मोनपा, आपातानी, मिश्मी, वांचो** आदि जनजातीय भाषाओं में रचित) हिंदी अनुवादों के माध्यम से राष्ट्रीय पाठकवर्ग तक पहुँचाया है 1. मामंग दई (Mamang Dai)– हिंदी अनुवादः पेनसाम की कथाएँ, नदी की कविताएँ (चयनित) 2. येस्से दोर्जे थोंगची (Yeshe Dorjee Thongchi) – मौन होंठ, बोलते हृदय, सोनम
मणिपुर	मणिपुर के साहित्य (मुख्यतः **मैतेई/मणिपुरी,** साथ ही **तांगखुल, थाडौ–कुकी,** पाइटे आदि भाषाओं) के कई महत्वपूर्ण ग्रंथ और रचनाएँ हिंदी में अनूदित हुई हैं। 1. मणिपुरी लोकमहाकाव्य और शास्त्रीय ग्रंथ, "खम्बा–थोइबी" (मूल भाषाः मणिपुरी (मैतेई)) 2. "नुमित कप्पा" (सूर्य–वध कथा) 3. मणिपुरी कहानी साहित्य i). आर. के. रमेश्वर सिंह –लघुकथाएँ और कहानियाँ हिंदी में अनूदित।
मेघालय	मेघालय का साहित्य मुख्यतः खासी, गारो और जयंतिया (प्नार) भाषाओं तथा आधुनिक काल में अंग्रेज़ी में रचा गया है। इन भाषाओं के साहित्य के हिंदी अनुवादों ने मेघालय की लोक–संस्कृति, इतिहास और समकालीन चेतना को राष्ट्रीय पाठक वर्ग तक पहुँचाया है। 1. खासी साहित्यः आधुनिक लेखन (हिंदी अनुवाद) 2. नॉर्थ–ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी (NEHU), शिलांग– जनजातीय भाषाओं के साहित्य का हिंदी अनुवाद।
मिज़ोरम	मिज़ोरम का साहित्य मुख्यतः मिज़ो (लुशाई) भाषा में विकसित हुआ है और इसकी जड़ें लोकपरंपरा, गीत, कविता तथा आधुनिक कथा साहित्य में हैं। 1. आधुनिक मिज़ो कथा साहित्य (हिंदी अनुवाद) – लालछानहिमा और लालसांगजुआला
नागालैंड	नागालैंड का साहित्य मुख्यतः नागा जनजातीय भाषाओं (आओ, अंगामी, सेमा/सुमी, लोथा, चाकेसांग आदि) की समृद्ध मौखिक परंपरा और आधुनिक काल में अंग्रेज़ी में रचित साहित्य पर आधारित है। 1. नागा लोककथाएँ (हिंदी अनुवाद) 2. आधुनिक नागा साहित्य (अंग्रेज़ी से हिंदी) i) ईस्टराइन किरे (Easterine Kire)– कृतियाँः When the River Sleeps, A Terrible Matriarchy ii) तेम्सुला आओ (Temsula Ao) – कृतियाँः These Hills Called Home, Laburnum for My Head iii) मोनालिसा चांगकिजा (Monalisa Changkij) – कविताएँ और निबंध हिंदी में अनूदित (चयनित)।
त्रिपुरा	त्रिपुरा का साहित्य मुख्यतः बंगला (त्रिपुरा–बंगाली), कोकबोरोक तथा अन्य जनजातीय भाषाओं में विकसित हुआ है। 1. कोकबोरोक साहित्य (हिंदी अनुवाद) : महेश्वर देबबर्मा– कृतिः जूलन 2. अगरतला से प्रकाशित हिंदी पत्र–पत्रिकाएँ और सरकारी प्रकाशन स्थानीय संस्कृति, जनजातीय जीवन और ऐतिहासिक विषयों पर केंद्रित रहे हैं। त्रिपुरा हिंदी साहित्य सम्मेलन जैसे मंचों ने स्थानीय लेखकों को प्रोत्साहन दिया है। उदाहरणस्वरूप, हिंदी में प्रकाशित काव्य–संग्रह "पहाड़ी धूप" त्रिपुरा के प्राकृतिक सौंदर्य और सामाजिक बदलावों को रेखांकित करता है।
सिक्किम	सिक्किम का साहित्य मुख्यतः नेपाली, भूटिया (सिक्किमी), लेपचा तथा आधुनिक काल में अंग्रेज़ी में रचा गया है।

उपर्युक्त विवरण के अलावा संस्थागत प्रयास के तौर पर साहित्य अकादमी, नई दिल्ली और राष्ट्रीय अनुवाद मिशन की भी हिंदी अनुवादों के माध्यम से राष्ट्रीय साहित्यिक संवाद में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। लोकमहाकाव्य से लेकर आधुनिक कविता और कहानियों तक, ये अनुवाद न केवल पूर्वोत्तर राज्यों की सांस्कृतिक पहचान को व्यापक पाठकवर्ग तक पहुँचाते हैं, बल्कि हिंदी को सांस्कृतिक सेतु के रूप में भी सुदृढ़ करते हैं।

हिंदी और लोकसंस्कृति

भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में 200 से अधिक जनजातीय भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हैं, फिर भी हिंदी ने एक संपर्क भाषा (Link Language) के रूप में सांस्कृतिक बंधन को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जनगणना 2011 के आँकड़ों के अनुसार, असम की लगभग 35–36 प्रतिशत जनसंख्या हिंदी समझने या बोलने में सक्षम है, त्रिपुरा में यह आँकड़ा लगभग 40 प्रतिशत तक पहुँचता है, जबकि अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर और नागालैंड जैसे राज्यों में 25–30 प्रतिशत लोग हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग करते हैं। केंद्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों और राज्य शैक्षणिक संस्थानों में हिंदी की अनिवार्य या वैकल्पिक शिक्षा ने युवाओं के बीच हिंदी समझने की क्षमता को लगातार बढ़ाया है।

हिंदी ने उत्तर–पूर्वी राज्यों को शेष भारत से जोड़ने में सांस्कृतिक सेतु की भूमिका निभाई है। प्रशासन, सशस्त्र बलों, रेलवे, बैंकिंग और केंद्रीय सेवाओं में कार्यरत विभिन्न राज्यों के लोग हिंदी के माध्यम से आपसी संवाद स्थापित करते हैं। इसके अतिरिक्त, दूरदर्शन, आकाशवाणी और हिंदी समाचार पत्र–पत्रिकाओं की पहुँच ने इस क्षेत्र में हिंदी की स्वीकार्यता को और सुदृढ़ किया है। दूरदर्शन गुवाहाटी, इम्फाल और अगरतला केंद्रों से प्रसारित हिंदी कार्यक्रमों ने स्थानीय संस्कृति को राष्ट्रीय मंच प्रदान किया है। हिंदी फिल्मों और गीतों की लोकप्रियता भी युवाओं के बीच सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देती है; एक सर्वेक्षण के अनुसार, शहरी उत्तर–पूर्वी युवाओं में लगभग 60 प्रतिशत नियमित रूप से हिंदी मनोरंजन सामग्री देखते या सुनते हैं। पर्यटन और सांस्कृतिक उत्सवों में भी हिंदी की भूमिका महत्वपूर्ण है। हॉर्नबिल फेस्टिवल (नागालैंड), संगाई फेस्टिवल (मणिपुर) और बिहू महोत्सव (असम) जैसे आयोजनों में हिंदी का प्रयोग देश–विदेश से आए पर्यटकों और स्थानीय समुदायों के बीच संवाद को सहज बनाता है। इससे सांस्कृतिक आदान–प्रदान को गति मिलती है और आर्थिक अवसर भी बढ़ते हैं। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि हिंदी उत्तर–पूर्व में किसी स्थानीय भाषा का स्थान नहीं लेती, बल्कि बहुभाषिकता को प्रोत्साहित करती है।

मीडिया, सिनेमा और डिजिटल मंचों में हिंदी

भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों में हिंदी और सांस्कृतिक बंधन को सुदृढ़ करने में मीडिया (इलेक्ट्रॉनिक, प्रिंट और डिजिटल मीडिया) की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। दूरदर्शन और आकाशवाणी जैसे सार्वजनिक प्रसार माध्यमों ने प्रारंभ से ही हिंदी कार्यक्रमों के माध्यम से उत्तर–पूर्व को राष्ट्रीय सांस्कृतिक धारा से जोड़ा है। आकाशवाणी गुवाहाटी, इम्फाल, आइजोल, कोहिमा और अगरतला केंद्रों से प्रसारित हिंदी समाचार, सांस्कृतिक वार्ताएँ और नाटक स्थानीय मुद्दों को राष्ट्रीय संदर्भ से जोड़ते रहे हैं। आकाशवाणी, जिसकी स्थापना का उद्देश्य ही "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय" रहा है, उत्तर–पूर्व क्षेत्र में लगभग 50 से अधिक रेडियो केंद्रों और रिले स्टेशनों के माध्यम से प्रसारण करता है। इनमें गुवाहाटी, डिब्रूगढ़, सिलचर, कोहिमा, इम्फाल, आइजोल, अगरतला, तुरा, पासीघाट और ईटानगर जैसे प्रमुख केंद्र शामिल हैं। इन केंद्रों से प्रतिदिन समाचार बुलेटिन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, वार्ताएँ, फीचर, नाटक और युवा कार्यक्रमों का हिंदी में नियमित प्रसारण होता है।

दूरदर्शन ने भी उत्तर–पूर्वी राज्यों में हिंदी कार्यक्रमों के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दूरदर्शन गुवाहाटी (डी.डी. नॉर्थ ईस्ट), इम्फाल, अगरतला और आइजोल केंद्रों से हिंदी समाचार, साप्ताहिक पत्रिका कार्यक्रम और सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ प्रसारित की जाती हैं। दूरदर्शन गुवाहाटी से प्रसारित "पूर्वोत्तर समाचार", "संस्कृति संगम" और विशेष महोत्सव आधारित कार्यक्रम हिंदी में क्षेत्रीय पहचान को राष्ट्रीय मंच प्रदान करते हैं। प्रिंट मीडिया ने भी हिंदी और सांस्कृतिक बंधन को मजबूती दी है। असम, त्रिपुरा और अरुणाचल प्रदेश से प्रकाशित हिंदी समाचार पत्र और पत्रिकाएँ स्थानीय समाचारों को हिंदी में प्रस्तुत कर क्षेत्रीय आवाज़ को राष्ट्रीय पाठक वर्ग तक पहुँचाती हैं, जैसे दैनिक पूर्वोदय, पूर्वांचल प्रहरी, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी प्रचार में चुनौतियाँ और संभावनाएँ

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी प्रचार की प्रक्रिया चुनौतियों और संभावनाओं–दोनों से युक्त एक जटिल और संवेदनशील विषय है, क्योंकि यह क्षेत्र भाषायी, सांस्कृतिक और जातीय विविधता की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। इन राज्यों में सैकड़ों जनजातीय भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हैं, जिनका स्थानीय समुदायों की पहचान और सांस्कृतिक अस्मिता से गहरा संबंध है। शिक्षा और प्रशासन में अंग्रेज़ी की मजबूत पकड़, सीमित हिंदी शिक्षण संसाधन, प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी तथा स्थानीय भाषाओं में शिक्षण की प्राथमिकता भी हिंदी प्रसार में व्यावहारिक बाधाएँ उत्पन्न करती हैं। इसके बावजूद,

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी प्रचार की व्यापक संभावनाएँ भी विद्यमान हैं। केंद्र सरकार और विभिन्न संस्थानों द्वारा स्थापित हिंदी अध्ययन केंद्र, केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय और विश्वविद्यालयों के हिंदी विभाग हिंदी शिक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। यदि हिंदी प्रचार को स्थानीय भाषाओं और संस्कृति के सम्मान के साथ जोड़ा जाए, द्विभाषिक या बहुभाषिक शिक्षा मॉडल अपनाए जाएँ, और स्थानीय लोकसंस्कृति को हिंदी माध्यम से अभिव्यक्ति का अवसर दिया जाए, तो यह प्रक्रिया अधिक स्वीकार्य और प्रभावी बन सकती है। इस प्रकार, पूर्वोत्तर भारत में हिंदी प्रचार की सफलता इसी में निहित है कि इसे संवेदनशीलता, समन्वय और सहभागिता के साथ आगे बढ़ाया जाए, ताकि हिंदी स्थानीय भाषाओं के साथ सहअस्तित्व में रहकर राष्ट्रीय संवाद और एकता को सुदृढ़ करने वाली भाषा बन सके।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी भाषा एक सेतु के रूप में – भावी दिशाएँ

मेघालय के राज्यपाल, माननीय सी एच रविशंकर ने हिंदी दिवस के अवसर पर अपने अभिभाषण में कहा कि देश के युवाओं को हिंदी केवल स्कूली पाठ्यक्रम का हिस्सा ना समझ कर इसे अपनी रचनात्मक क्षमता (जैसे लेखन, ब्लॉगिंग, अनुवाद, फिल्म एवं डिजिटल सृजनात्मक लेख आदि) को बढ़ाने में प्रयोग करना चाहिए। पूर्वोत्तर भारत में हिंदी की भावी भूमिका एक सेतु भाषा के रूप में होनी चाहिए, जो क्षेत्रीय भाषाओं और संस्कृतियों के साथ सहअस्तित्व और सम्मान के आधार पर संवाद स्थापित करे। हिंदी को प्रतिस्पर्धी या वर्चस्वकारी भाषा के बजाय स्थानीय भाषाओं के पूरक के रूप में अपनाया जाना चाहिए। मातृभाषा आधारित बहुभाषिक शिक्षा, स्थानीय सांस्कृतिक संदर्भों से युक्त पाठ्यक्रम, तथा डिजिटल माध्यमों के उपयोग से हिंदी का स्वाभाविक प्रसार संभव है। सांस्कृतिक आदान–प्रदान, साहित्यिक अनुवाद और युवा सहभागिता हिंदी को आपसी समझ का माध्यम बनाते हैं। रोजगार, कौशल–विकास और प्रशासन में हिंदी की उपयोगिता पूर्वोत्तर के युवाओं को राष्ट्रीय अवसरों से जोड़ती है। इस प्रकार, संवाद, सम्मान और समावेशी विकास पर आधारित दृष्टिकोण के साथ हिंदी पूर्वोत्तर भारत और शेष देश के बीच एक सशक्त सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय सेतु के रूप में कार्य कर सकती है। हिंदी पूर्वोत्तर की भाषाओं और संस्कृतियों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलती है, और उनके सौंदर्य को व्यापक मंच प्रदान करती है। "एक भारत–श्रेष्ठ भारत" और "विकसित भारत @ 2047" के सपने को साकार करने में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, और इस यात्रा में हिंदी एक सशक्त, संवेदनशील और समन्वयकारी माध्यम के रूप में अपनी भूमिका निभाती रहेगी।

संदर्भः

1. Census 2011
2. https://www.languageinindia.com/feb2020/profmallikarjunmultilingualismnortheastindia.pdf
3. Jagran newspaper, 19 July 2022
4. The News Mill, 17 September 2025

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर राज्यों में राजभाषा हिंदी की भूमिका

– डॉ. पी. आर. वासुदेवन 'शेष'
चेन्नै, तमिलनाडु

बराक, दिबांग, धनश्री लुहित सोनाई, सुवान्सिरि, ब्रह्मपुत्र आदि सैंकड़ो नदियों के जल से सिंचित गारो, मिकिर, डफला, अका, जयतिया, खासी आदि पर्वत उपत्यकाओं से युक्त प्रकृति की रानी भारत की पुण्यधरा पर आज असम के अतिरिक्त अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, त्रिपुरा, नागालैंड, मेघालय एवं मिजोरम के नाम से गठित सात राज्य स्थित हैं। जिनको 'सात बहनों' के नाम से जाना जाता है।

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी भारत के भू–भाग को धीरे–धीरे अपने कब्जे में करते हुए उन्नीसवीं सदी के अंत तक उत्तर पूर्वांचल में अपना पंजा बढ़ा पाई, तब तक मणिपुर समेत सारे पूर्वांचल का इलाका बर्मा के अधीन था। कंपनी ने 1825 में बर्मा से साल भर युद्ध करके उसे 1826 में 'यंडोंबा संधि' के अंतर्गत बर्मा ने असम समेत सम्पूर्ण उत्तर पूर्वांचल का इलाका ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी को सौंप दिया था। उस समय असम, मेघालय और नागालैंड बंगाल प्रेसीडेंसी के अंग थे। अरूणाचल प्रदेश वर्जित क्षेत्र था तो मणिपुर और त्रिपुरा राजाओं के अधीन स्वतंत्र थे। वर्तमान मिजोरम का इलाका उत्तर में लुशाई सरदारों और दक्षिण में लखेर सरदारों के अधीन था ।

1864 में अंग्रेजों ने बंगाल से पृथक कर असम को अलग प्रांत बनाया, जिसका मुख्यालय शिलांग रखा गया। 1905 में लार्ड कर्जन ने इसे पुनः बंगाल में मिलाने की घोषणा की। बंग–भंग आंदोलन अंग्रेजों की प्रभुसत्ता के विरूद्ध मील का पत्थर माना जा सकता है। 1924 में अंग्रेजों ने असम को पुनः स्वतंत्र घोषित किया।

1826 से लेकर 1898 तक ईस्ट इंडिया कंपनी को मणिराम बरूआ द्वारा छेड़े गये स्वतंत्रता संग्राम ने खामटी, सिंगपो, जयंतिया तथा कछार जनजाति के विद्रोह ने और नागा एवं मिजो विद्रोहियों ने चैन से बैठने नहीं दिया। यंडोबा संधि के 62 वर्षों बाद 1898 में ब्रिटिश सरकार वर्तमान उत्तर पूर्वांचल को समग्र रूप से अपने अधीन कर पाई थी।

इन सात राज्यों में भारत की स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा राजभाषा हिंदी में किए गए उल्लेखनीय कार्य :

(1) असम – असम देश के उत्तर–पूर्वी भाग में स्थित है। श्री गोपीनाथ बरदलोई के प्रयास से असम को स्वतंत्र भारत में स्वतंत्र राज्य का स्तर मिला। कालांतर में इसी असम राज्य से नागालैंड, मेघालय, मिजोरम एवं अरूणाचल प्रदेश का जन्म हुआ। गुवाहाटी के निकट दिसपुर में प्रदेश की राजधानी का निर्माण किया गया है। असम का मुख्य पर्व बिहू है। असम में हिंदी विकास की प्रक्रिया कभी अवरूद्ध नहीं हुई। असम में हिंदी लेखन एवं प्रचार–प्रसार में 19वीं शताब्दी में थोड़ी शिथिलता अवश्य आई परन्तु उसकी धारा कभी विछिन्न नहीं हुई। यज्ञाराम खारधरिया फुकन नाम जोरहाट के एक पुलिस अधीक्षक ने सन् 1832 ई में 'हिंदी व्याकरण और अभिधान' नामक पुस्तक लिखकर एक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सौहार्द्र की ही मिसाल पेश नहीं की बल्कि आधुनिक भाषाई युग की भाषाई दहलीज पर खड़े इस प्रतिभाशाली सिपाही ने खड़ी बोली हिंदी का वंदन–अभिनंदन किया। यह असम में आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रचार प्रसार का स्वप्रेरणा काल था। सन् 1926 ई में श्री भुवनचंद्र गोगोई जी ने असम के शिवसागर में 'असम पोलिटेकनीक इस्टीटयूटशन' नाम का विद्यालय खोला और उसमें हिंदी पठन–पाठन को अनिवार्य विषय के रूप में लागू किया। अतः असम में खड़ी बोली हिंदी के प्रचार प्रसार में डा. भुवन चंद गोगोई का नाम वंदनीय है। असम में हिंदी प्रचार का यही सूत्र मजबूत होता चला गया। सन् 1927–1940 तक हिंदी का प्रचार प्रसार उत्तर प्रदेश के 'बरहज' निवासी बाबा राघव दास की प्रेरणा से फलता फूलता रहा। सन 1896 में महाराष्ट्र में जन्में बाबाजी ने बरहज में अपना आश्रम बनाया। इनके आश्रम में रहकर हिंदी शिक्षा पाने विद्यार्थी पूर्वांचल के विभिन्न स्थानों पर जा जाकर हिंदी का प्रचार करते थे एवं हिंदी विद्यालयों की स्थापना करते थे। बाबा राघवदास, जमुना प्रसाद श्रीवास्तव आदि प्रचारकों को लोकप्रिय गोपीनाथ बोरदोलाई जैसा हिंदी सेवी व्यक्ति मिला। बोरदोलाई की अध्यक्षता में हिंदी प्रचार समिति की स्थापना की गयी। 11 दिसंबर 1938 की बैठक में डॉ हरेकृष्ण दास एवं देवीकांत बरूवा को हिंदी प्रचार समिति का क्रमशः अध्यक्ष एवं मंत्री पद प्रदान कर दिया गया। इस समिति की स्थापना के बाद हिंदी का प्रचार प्रसार तीव्र गति से होने लगा। हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में भी असम में काफी विकास हुआ है। यहाँ से जो प्रमुख हिंदी दैनिक प्रकाशित हो रहे हैं, इनके नाम है– 'पूर्वांचल प्रहरी, 'सेंटिनल', 'पूर्वोदय खबर', कुछ दिनों पहले 'उत्तरकाल' नामक दैनिक का भी प्रकाशन हुआ पर वह कुछ दिनों के बाद बंद हो गया। असमी भाषा के महान गायक भारत रत्न डॉ. भूपेन हजारिका ने भी असमी भाषा के

साथ–साथ हिंदी फिल्मों के गीत गाए जो आज विश्व भर में प्रसिद्ध है उन्हें भारतीय ही नहीं विदेशों में मंत्रमुग्ध होकर सुनते हैं। हिंदी फिल्मी गीतों ने असम के दिलों पर बड़ी छाप छोड़ी है।

असम में इस समय कार्यरत पाँच प्रमुख संस्थाएँ हैं–

1. **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति** – यह संस्था कई वर्षों से असम राज्य में कार्यरत है। समिति अपनी परीक्षाओं के लिए पाठयक्रम और पाठयपुस्तकें तैयार करने और प्रकाशित करने का कार्य करती है। समिति का अपना भवन, सभागार, प्रेस है। समिति एक पत्रिका भी प्रकाशित करती है। हिंदी में लिखे मौलिक साहित्य और असमिया साहित्य के हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित करती है। समिति द्वारा समय–समय पर साहित्यिक, सांस्कृतिक, हिंदी दिवस, शिविर आदि कार्यक्रम भी आयोजित होते रहते हैं। मुझे भी इस समिति द्वारा आयोजित पॉच दिवसीय नवलेखक शिविर, गुवाहाटी में भाग लेने का अवसर मिला।

2. **उत्तर पूर्वांचल राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, उत्तर लखीमपुर** – उत्तरी असम क्षेत्र एवं अरूणाचल प्रदेश में हिंदी के कार्य पर विशेष ध्यान देने के लिए 1975 में इसकी स्थापना हुई। राष्ट्र भाषा प्रचार समिति वर्धा (महाराष्ट्र) इसकी परीक्षाओं को संचालित करती है।

3. **असम राष्ट्रभाषा सेवक संघ** – इस संघ की स्थापना 1953 में हुई। इसके मुख्य उद्देश्यः–

   (क) अन्य भाषा के रूप में हिंदी का प्रचार–प्रसार करना।

   (ख) राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी के माध्यम से हिंदीतर भाषाओं के साथ आदान–प्रदान करना।

   (ग) असम के शिक्षकों की उन्नति के लिए अन्य शिक्षण केंद्रों के साथ सम्पर्क करना। संस्था को केंद्र सरकार और राज्य सरकार दोनों से अनुदान मिलता है। संस्था का अपना भवन और पुस्तकालय है। संस्था दवारा 'संघम पत्रिका' भी प्रकाशित होती है। जिसमें हिंदी तथा असमिया दोनों भाषाओं के लेख प्रकाशित किए जाते हैं। यह संघ हिंदी के शिक्षकों की सबसे महत्वपूर्ण और प्रतिनिधि संस्था है और उनके हितों की रक्षा और उनमें सुधार करने के लिए कार्य करती है। हिंदी के शिक्षकों का एक संगठन है जिसका मुख्यालय 'गोलाघाट' है। 'जोरहाट' में भी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति है जो वर्धा से सम्बद्ध है और परीक्षाएँ संचालित करती है।

असम में हिंदी के तीसरे सोपान के लेखकों की नामावली काफी विस्तृत है– इन लेखकों में मोहन कोईराला, सौमित्रम, श्रीमती केशदा मंहत, डॉ. देवेन्द्र चंद दास, गोस्वामी माया शंकर 'भारती', अशोक वर्मा, मैना थापा 'आशा', भिक्षु कौण्डिलय, भविलाल लामिछाने, डॉ. गिरिधारी लाल मिश्र, गोपाल बहादुर नेपाली, डॉ. अंजनी कुमार दुबे 'भावुक', डॉ. भूपेन्द्र राय चौधरी आदि सैंकड़ों नाम जुड़े हुए हैं।

असम में हिंदी लेखन कोई पेशा नहीं बल्कि शौक एवं साहित्यिक अभिरूचि का प्रतिफलन है। यहाँ साहित्य की विभिन्न विधाओं पर सार्थक लेखन हो रहा है। कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, रेखाचित्र आदि मौलिक लेखन के अतिरिक्त अनुवाद कार्य भी विपुल मात्रा में हो रहे हैं। असमिया में हिंदी में अनुवाद करने वाले लेखकों में डॉ. सत्यदेव प्रसाद, नवारूण वर्मा 'दिनकर' कुमार, वीरेन्द्र कुमार, बसुमतारि अनुपम कुमार आदि प्रमुख हैं।

2. **अरूणाचल प्रदेश** – अरूणाचल प्रदेश की अपनी हिंदी सेवी स्वैच्छिक संस्था नहीं है। उत्तर पूर्वांचल राष्ट्र भाषा प्रचार समिति 1975 में लखीमपुर असम में स्थापित की गई है, जो लखीमपुर जिले के साथ–साथ अरूणाचल प्रदेश में भी कार्य करती है। यह संस्था राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा से संबंध है। अरूणाचल में हिंदी प्रचार प्रसार के क्षेत्र में श्री महेश्वर महंत एवं श्री चित्र महंत का अतुलनीय योगदान है ।

अरूणाचल से निकलने वाली पत्रिकाओं में अरूण नागरी, अरूणज्योति, आलोकारूण, अरूण प्रभा आदि प्रमुख हैं। अरूणाचल के हिंदी लेखकों में डॉ धर्मराज सिंह, श्री रमण शांडिल्य, डॉ नंदलाल रामगुप्त गाजीपुरी, डॉ विश्वनाथ शर्मा, डॉ अंनत कुमार नाथ, श्रीमती जोराम आनिया ताना आदि उल्लेखनीय हैं।

3. **नागालैंड** – नागालैंड में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, असम राष्टभाषा प्रचार समिति, मणिपुर हिंदी परिषद आदि स्वैच्छिक संस्थाओं के परीक्षा केन्द्र हैं जिनमें परीक्षार्थी कई स्तरों की परीक्षाओं में बैठते हैं। नागालैंड के विद्यालयों में पांचवी से आठवीं कक्षा तक हिंदी तृतीय भाषा के रूप में पढाई जाती है। नागालैंड में हिंदी के प्रचार हेतु शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान, दीमापुर की स्थापना हुई। इस प्रशिक्षण संस्थान को केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के सहयोग से चलाया जाता है। आज हजारों हिंदी प्रशिक्षित अध्यापक अध्यापिकाएं हिंदी सेवा में संलग्न हैं। श्री पी. तमजन आओ और श्री राबेमो लोथा नागालैण्ड के वरिष्ठ हिंदी प्रशिक्षक हैं। श्री राबेमो लोथा को हिंदी सेवाओं के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया जा चुका है। नागाभाषी हिंदी साहित्यकारों में के. फयोखामों लोता, टी माओ कमजक, जकिएनी अंगामी, किनजाकीर आदि प्रमुख हैं।

नागालैंड की एकमात्र स्वैच्छिक संस्था नागालैंड भाषा परिषद है। इस संस्था ने हिंदी के माध्यम से इस क्षेत्र की जनजाति भाषाओं की महत्वपूर्ण सेवा की है।

ISSN No. : 0970-9398

4. **मणिपुर हिंदी परिषद** – मणिपुर की हिंदी स्वैच्छिक संस्थाओं में अपने कार्यों की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण संस्था मणिपुर हिंदी परिषद है। इस परिषद की स्थापना 1953 में हुई थी। इसके अंतर्गत प्रारंभ से बी.ए. के समकक्ष स्तर की हिंदी परीक्षाएँ संचालित की जाती हैं। इन परीक्षाओं में बैठने वाले परीक्षार्थियों के लिए हिंदी शिक्षण महाविद्यालय चलाए जाते हैं और इन परीक्षाओं के लिए पाठयक्रम और पाठय पुस्तकें तैयार करने और आवश्यकतानुसार प्रकाशित करने का कार्य भी किया जाता है। यह परिषद मणिपुर भाषियों द्वारा हिंदी में लिखे गए ग्रंथों को भी प्रकाशित करती है। साथ ही मणिपुर साहित्य की रचनाओं को हिंदी में अनुदित करने के कार्य को प्रोत्साहित तथा प्रकाशित भी करती है। इस परिषद दवारा 'महिप' नामक एक हिंदी पत्रिका भी प्रकाशित की जाती है।

मणिपुर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, इंफाल – यह वर्धा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की मणिपुर शाखा है। इसकी स्थापना 1940 में हुई थी।

अखिल मणिपुर शिक्षक संघ, इंफाल – यह संघ मणिपुर के सभी हिंदी शिक्षकों का एक संघ है जो एक ओर तो राज्य में हिंदी का प्रचार और शिक्षण के कार्य को प्रोत्साहन देती है और दूसरी और अध्यापक के हित संबंधी प्रश्नों को राज्य सरकार के सामने रखती है। यह संघ संगोष्ठी, सम्मेलन आदि का आयोजन करती है। इस संघ की मुख पत्रिका कुंदो परेंग है जिसमें हिंदी और मणिपुरी में लेख प्रकाशित होते हैं। मणिपुर पूर्वांचल का दूसरा प्रमुख राज्य है, जहाँ हिंदी का विकास दुतगति से हुआ है। अविभाजित असम में मणिपुर एक स्वतंत्र प्रशासनिक इकाई के रूप मे मान्य था। मणिपुर में चालीस हजार वर्ष तक की मानव सभ्यता के अवशेष उखोवालु नगर के निकट 'सिरोई पर्वत' पर स्थित गुफा में प्राप्त हुए हैं। इसी से मणिपुर की प्राचीनता सिद्ध हो जाती है। अतः वैदिक युग, रामायण युग, महाभारत युग आदि में मानव सभ्यता काफी उन्नत थी, कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। मणिपुरी भाषा की लिपि ब्रम्ही भी उत्तरी शैली से विकसित हुई है। आचार्य राधा गोविन्द थोंगाम मणिपुरी भाषा को भारतीय परिवार की भाषा और लिपि के अंतर्गत मानने के पक्षधर हैं।

सन 1953 में मणिपुर हिंदी परिषद इंफाल और 1958 में नागरी लिपि प्रचार सभा इंफाल की स्थापना हुई। इसके पश्चात मणिपुर ट्राइबल हिंदी सेवा समिति 1982 और आज मणिपुर में राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी लेखन हो रहा है। मणिपुर के हिंदी व गैर हिंदी विदवानों ने साहित्य की विभिन्न विधाओं में लेखन कार्य कर हिंदी की श्रीवृद्धि की है। 6 मार्च 1951 ई. में पं. अतोम्बापू शर्मा की लिखी पुस्तक 'मणिपुर का सनातन धर्म' मणिपुर से प्रकाशित प्रथम हिंदी पुस्तक है। इसके बाद पदमश्री कालाचंद शास्त्री ने हिंदी में 'बभ्रुवाहन' नाटक लिखा जो आर्यन थियेटर में सन 1952 में मंचन किया गया।

आज मणिपुर में हिंदी के आधुनिक लेखको की संख्या सैकड़ों के करीब है। इन लेखकों में पं. राधामोहन शर्मा, नीलवीर शास्त्री, इबोमचा सिंह, हिजम बिजम सिंह, नारायण शर्मा, श्री के. याग्मा शर्मा, राधागोविंद थोंगम, डॉ. तोम्बा सिंह, डॉ. जगमल सिंह, इबोहल सिंह कांगजम, डॉ. शुवदीन देवी, डॉ. वी. विक्ओरिया आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मणिपुर के इन लेखकों ने अनुवाद कार्य को काफी समृद्ध किया है। इन लेखकों ने मणिपुरी भाषा की कई पुस्तकों का हिंदी में अनुवाद कर एक ओर हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की है तो दूसरी ओर मणिपुरी साहित्य को राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाने का सराहनीय कार्य किया है।

5. **मिजोरम** – मिजोरम में हिंदी प्रचार प्रसार को काफी गति मिली। सन 1987 में मिजोरम को स्वतंत्र राज्य का दर्जा मिला। अतः यहाँ हिंदी प्रचार प्रसार भी बहुत बाद में प्रारंभ हुआ। जब मिजोरम असम का एक जिला मात्र था। उस समय भी यहाँ हिंदी के प्रति लोगों में जागरूकता थी, 1952 से 1966 का अंतराल मिजोरम में हिंदी शिक्षण का आंरभिक काल माना जा सकता है।

बीसवीं सदी के सातवें दशक में मिजोरम में हिंदी प्रचार–प्रसार हेतु असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के साथ–साथ राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान जैसी संस्थाएँ महत्वपूर्ण काम करने लगीं। मिजोरम में हिंदी प्रचार–प्रसार के अग्रदूत श्री चित्र महंत के सद्प्रयास से हिंदी की नींव मजबूत होने लगी। सेलेत थाड और श्री वी.एल. डहाका मिजोरम में हिंदी प्रचार के ऐसे स्तम्भ साबित हुए जिनके सद्प्रयास से हिंदी के प्रति मिजो भाषियों का आर्कषण बढ़ा। सन 1975 में मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना हुई। इस संस्था के जरिये प्रशिक्षण प्राप्त हिंदी शिक्षक आज मिजोरम में हिंदी प्रचार प्रसार के द्वारा अपनी राष्ट्रभक्ति का परिचय दे रहे हैं। मिजोरम में कक्षा पांच से आठ तक हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। हिंदी को उच्च माध्यमिक कक्षाओं में वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाने का प्रावधान है।

मिज़ोरम में आज सक्रिय एवं सार्थक हिंदी लेखन भी हो रहा है। श्री. आर. जल्हैया, श्री सी.कामलोव, डॉ. सी.ई. जीनी, डॉ. बी.आर. राल्ते, सुश्री. आर. ललबथा मौनी, सुश्री लाल रिकिमी रेंथली आदि ऐसे मिजो भाषी साहित्यकार हैं जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी लेखन में प्रसिद्धि प्राप्त की है।

मिजोरम में हिंदी का कार्य करने वाली दो स्वैच्छिक संस्थाएँ हैं –

(क) मिजोरम हिंदी प्रचार समिति–इस समिति दवारा स्वैच्छिक संस्थाओं की परीक्षाओं के लिए विद्यार्थियों को हिंदी का शिक्षण दिया जाता है।

(ख) मिजोरम हिंदी शिक्षा संगठन–यह संस्था 25 वर्षों से हिंदी शिक्षण और हिंदी शिक्षकों के हित–साधन के

लिए कार्य कर रही है। यह संगठन हिंदी को समर्पित एक जागरूक मंच है।

6. **मेघालय** – मेघालय एवं मिजोरम में हिंदी की स्थिति प्रगति मूलक है। 1972 ई. में असम से अलग होकर मेघालय एक पूर्ण राज्य के रूप में स्वीकृत हुआ। सन 1976 में मेघालय की राजधानी शिलांग में केन्द्रीय हिंदी सस्थान की स्थापना की गयी। इस केन्द्र में दो तरह के पाठयक्रम चलाये जाते हैं– 'लघु अवधिय नवीकरण' तथा 'लघु अवधिय सुधारात्मक'। केंद्रीय हिंदी संस्थान ने हिंदीतर भाषी क्षेत्रों में हिंदी प्राध्यापकों को प्रशिक्षित करने का बहुत महत्वूपर्ण काम किया है।

सन 1952 में मिसामारी हिंदी प्रशिक्षण केन्द के सक्रिय योगदान से मेघालय में हिंदी शिक्षा के प्रचार में काफी अभिवृद्धि हुई। पहले की अपेक्षा मेघालय में हिंदी प्रचार कार्य में निरन्तर वद्धि हो रही है। यहाँ ईसाई मिशनरियों के वर्चस्व के वाबजूद भी हिंदी एवं उसके बढ़ते प्रभाव को लोग समझने लगे हैं।

मेघालय राज्य में हिंदी प्रचार– प्रसार कार्य करने वाली स्वैच्छिक संस्थाएं अपनी सीमित वित्तीय अभाव से हिंदी के कार्य में जुड़ी है। मेघालय में हिंदी के आंरभिक प्रचार कर्ताओं में महात्मा सिंह, बैकुण्ठनाथ सिंह, केशव शर्मा, विश्वनाथ उपाध्याय, पदमनाथ बरठाकुर आदि के नाम विशेष रूप से लिए जाते हैं। मेघालय के विद्यालयों में, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में अध्यापन कर रहे हिंदी के अध्यापक गण अपने–अपने स्तर से हिंदी प्रचार कार्य में संलग्न हैं। ऐसे हिंदी विद्वानों में डॉ. विवेक श्रीवास्तव, डॉ. दिनेश कुमार चौबे, डॉ माधवेन्द्र प्रसाद पाण्डेय तथा अकेला भाई प्रमुख है। इन विद्वानों ने राष्ट्रीय स्तर के हिदी लेखन में अपना नाम दर्ज करा दिया है।

7. **त्रिपुरा** – त्रिपुरा में हिंदी प्रचार कार्य की प्रगति धीमी रही है। त्रिपुरा राज्य में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा की एक शाखा काफी समय से हिंदी के कार्य से जुड़ी है, परंतु जनता की उदासीनता एवं राज्य सरकार की उपेक्षा के कारण त्रिपुरा में हिंदी की स्थिति चिंताजनक है। लेकिन अब धीरे–धीरे वैश्वीकरण के युग में जनता यह समझने लगी है कि हिंदी को अपनाना उनके लिए लाभकारी है और केंद्र सरकार भी इस ओर ध्यान देने लगी है और त्रिपुरा में हिंदी केंद्र खोलने की योजना बना रही है और उन्हें हिंदी शिक्षण से जोड़ने का कार्य कर रही है। केंद्रीय हिंदी निदेशालय भी यहाँ स्कूलों एवं कॉलेजों में निरीक्षण कर वस्तु स्थिति को परख रहा है। राजधानी अगरतला में हिंदी निदेशालय के साथ हिंदी शिक्षण कालेज की भी स्थापना हुई। यहाँ के प्रमुख प्रचारकों में श्री रमेनद्र कुमार पाल का नाम सर्वप्रथम है। उनके द्वारा लिखित पुस्तकों में देवी माँ, वर्षा वंदन, जानवरों की क्रांति तथा प्राथमिक कोक बोरक भारती प्रसिद्ध हैं।

निष्कर्ष:

स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा हिंदी शिक्षण और हिंदी प्रचार प्रसार का कार्य बडी निष्ठा से किया जा रहा है। इन संस्थाओं और राजकीय प्रयासों में तालमेल है, असम, मणिपुर और मिजोरम में हिंदी का कार्य अधिक सक्रियता और गतिशीलता से हो रहा है। अरूणाचल प्रदेश की जनजातियों में पारस्परिक सम्पर्क भाषा हिंदी बन चुकी है और शिक्षा व्यवस्था में भी उच्च स्तर तक हिंदी पढ़ने की पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इस प्रदेश में हिंदी के प्रति अपनेपन का भाव देखने को मिलता है। अंत में मेरा यह मानना है कि हिंदी के कार्य के साथ जब स्थानीय प्रतिभाएँ जुड़ेगीं तभी हिंदी सेवियों का उचित सम्मान होगा। केंद्र सरकार और राज्य सरकार स्थानीय शिक्षकों के हितों का ध्यान रखेगी तो पूर्वात्तर राज्यों में हिंदी की प्रगति आसमान को छुएगी।

संदर्भ–

1. हिंदी गौरव ग्रंथ (प्रथम खण्ड), सम्पादक –डॉ. राजेन्द्रनाथ मेहरोत्रा, पृ सं 181–187
2. पूर्वोत्तर राज्यों के साहित्यकारों का हिंदी को योगदान, डॉ. हरेराम पाठक
3. पूर्वाचंल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य, डॉ. सी. ई. जीनी
4. असम प्रांतीय हिंदी साहित्य, डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद'मगध'
5. हिंदी दशा और दिशा–संपादक –डॉ. महेश दिवाकर, डॉ. जंगबहादुर पाण्डेय, डॉ रामगोपाल भारतीय, प्रकाशक –विश्व पुस्तक प्रकाशन, पश्चिम विहार, नई दिल्ली 11063 प्रकाशन वर्ष 2014.

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत और नागालैंड का 'हार्नबिल' उत्सव

–राजीव रंजन प्रकाश,
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा),
भारतीय स्टेट बैंक, लखनऊ

प्राचीन मान्यतानुसार नागराज की पुत्री उलूपी का निवास स्थान नागालैंड के दक्षिण पश्चिम में है। चूंकि यह क्षेत्र नागराज के अधीन था इसीलिए यहां के लोगों को नागा कहा जाता हैं। कुछ मानते हैं कि नागाओं के संबंध भारत आए मंगोलियाई समूह से था जो पूरब की ओर से प्रवास करके आए थे। नागाओं को उनके जनजातियों के नाम से नहीं बल्कि उनके गांवों के समूह के नाम से जाना जाता था। धीरे–धीरे वे अपनी जनजातियों के नाम से पहचाने जाने लगे। नागालैंड की प्रमुख जनजातियां हैं: अंगमी, आओ, चखेसंग, चांग, दिमासा कचारी, खियांनियुंगन, कोनयक, कूकी, लोथा, फोम, पोचुरी, रेंगमा, संगतम, सुमी, तिखिर, यिमखियुंग और जेलियांग। इन सबकी अपनी अलग–अलग भाषा, वेशभूषा एवं परम्पराएं हैं जो आज भी उसी रूप में विद्यमान हैं।

नागा जनजातियों में अतीत सहेजकर रखने की परम्परा नहीं रही है। ब्रिटिशकाल से पूर्व यहां के इतिहास के बारे में कोई लिखित जानकारी उपलब्ध नहीं है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान नागालैंड असम राज्य का हिस्सा था। असम के अहोम साम्राज्य में नागा समुदाय, उनकी अर्थव्यवस्था और रीति–रिवाजों का उल्लेख किया गया था। 1816 में म्यामांर के शासक बर्मन ने असम पर आक्रमण कर 1819 में वहां बर्मन शासन की नींव रखी जो 1826 में यहां ब्रिटिश शासन की स्थापना तक चली। इस दौरान ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना विस्तार करते हुए असम पर कब्जे के उपरांत नगा हिल्स पर भी कब्जा कर लिया। अंग्रेजों ने एक बड़े नगा इलाकों पर कब्जे के बावजूद भी यहां के रहन–सहन व रीति रिवाजों में हस्तक्षेप न करने की नीति अपनाई।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जापान ने कोहिमा रिज पर कब्जे के लिए आक्रमण किया था। 4 अप्रैल से 22 जून 1944 के बीच भारतीय व ब्रिटिश सैनिकों ने जापान का मुकाबला कर उसे युद्ध में हराकर कोहिमा रिज छोड़ने को मजबूर कर दिया परन्तु कोहिमा–इंफाल मार्ग पर उनका कब्जा बरकरार रहा। जिसे बाद में जापानी कब्जे से मुक्त कराया गया।

नागालैंड की समृद्ध परम्परा एवं रीति–रिवाज इस छोटे से राज्य को एक अनोखी पहचान देते हैं। यहां की आदिवासी जनजातियां अपनी सभ्यता, संस्कृति एवं परम्पराओं के समर्थन एवं संरक्षण हेतु प्रसिद्ध हैं। यहां हर जनजाति के रीति–रिवाज, वेशभूषा, भाषाएं आदि अन्य जनजातियों से भिन्न हैं। सदियों से उन्होंने यहां अपनी सांस्कृतिक गतिशीलता का जीवंत मंच विकसित किया है। यहां के सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। नागा जनजातियों की अपनी स्वतंत्र मान्यताएं व परम्पराएं जनजाति एवं उप जनजाति समूहों का मिश्रण हैं। शारीरिक एवं सामाजिक संरचना, रीति–रिवाज, महोत्सव एवं धारणाएं, परिधान एवं अन्य सांस्कृतिक विशेषता एक दूसरे से भिन्न होने के बावजूद भी सभी जनजातियों ने यहां सौहार्दपूर्ण सांस्कृतिक गतिशीलता का जीवंत मंच विकसित किया है।

हेड हंटिंग की प्राचीन परम्परा:

नागा इतिहास मजबूत योद्धाओं एवं लड़ाकुओं से भरा है। प्राचीनकाल में यहां के गांवों में सशस्त्र छापामार दस्ते बनाए जाते थे। हेड हंटिंग परम्परा के तहत यहां अपने शत्रुओं को पराजित कर उनका सिर काटकर लाने की परम्परा रही है। विशेषकर युवा वर्ग शत्रुओं का सिर काटकर लाकर अपनी बहादुरी सिद्ध करते थे तथा उन्हें ट्रॉफी तथा सम्मान के प्रतीक के रूप में सजाते थे जो सामान्यतः उनकी समृद्धि और प्रतिष्ठा में वृद्धि का भी परिचायक था। 20वीं सदी के प्रारंभ में ईसाईयों के आगमन तथा अंग्रेजी शासनकाल में यह प्रथा समाप्त कर दी गई। प्रतीकात्मक रूप से आज भी स्थानीय निवासी अपने पुरखों की पौराणिक युद्ध परम्परा का स्मरण करते हैं।

अपनी प्राकृतिक सौदर्य के लिए प्रसिद्ध नागालैंड वनस्पतियों एवं जैव विविधता में भी अत्यधिक समृद्ध है। कई अत्यंत सुंदर पौधों एवं जीवों के निवास स्थल नागालैंड में कई प्रकार के सुंदर पक्षियों की प्रजातियां भी मौजूद हैं। पक्षियों की उपलब्धता के मामले में अपनी इसी विविधता के कारण नागालैंड को "द फाल्कन कैपिटल ऑफ द वर्ल्ड" भी कहा जाता है। यहां बहुत सारे पक्षी, पशु तथा सरीसृप हैं। यहां पाए जाने वाले पक्षियों में सफेद गिद्ध, काला तीतर, धूसर तीतर, सामान्य मोर, ब्लू रॉक कबूतर, चितकबरा कबूतर, हुपु, मालाबार पाइड हॉर्नबिल, सामान्य बैबलर, महरत्ता कठफोड़वा, कोयल, चितकबरा उल्लू, ग्रेट होर्ण्ड उल्लू तथा पशुओं में जंगली सुअर, भौंकने वाला हिरण, हिमालयी काला हिरण, जंगली बकरी, जैकाल, जंगली बिल्ली, रॉयल बंगाल टाइगर, भेड़िया, तेंदुआ, जंगली कुत्ता, अजगर, बारहसिंगा, हाथी, भूमि कछुआ और अन्य सरीसृप प्रमुख हैं।

अपनी भाषाई विविधता हेतु प्रसिद्ध नागालैंड की मुख्य भाषा नागामीज है जो नागा और असमिया का मधुर मिश्रण है जिसे उड़िया, बंगाली तथा मैथिली भाषी आसानी से समझ जाते हैं। इसके अलावा यहां लगभग 36 स्थानीय भाषाएं व बोलियों में संगतम, चोकरी, आओ, कोन्याक, लोथा, सेमा, अंगामी, जेलिआंग, जेमी, इमचूंगरे, चांग, खिअमनीउंगन, रेंगमा, फोम आदि प्रमुख हैं। असमिया, बांग्ला आदि भाषाएं भी यहां प्रमुखता से बोली जाती हैं।

संगीत एवं सांस्कृतिक परम्पराः

अपनी सांस्कृतिक विरासत संजोकर रखने वाले नागा समुदाय के पास अपने स्थानीय गीत–संगीत, वाद्ययंत्र और नृत्यों की एक समृद्ध विरासत, शास्त्रीय गीत–संगीत, लोकसंगीत एवं लोकगीतों की समृद्ध परम्परा के अलावा यहां आधुनिक गीत–संगीत भी काफी लोकप्रिय हैं। नागालैंड के प्रमुख नृत्यों में नागा युद्ध, जेलियांग लोकनृत्य, मुर्गा नृत्य, क्रिकेट नृत्य, भालू नृत्य, मोडसे, अगरशिकुकुला, बटरुलाई, अलॉयट, सड़ल केकई, चंगाई नृत्य शामिल हैं। यहां का सबसे प्रसिद्ध लोकनृत्य लीम और छोंग है। नागालैंड के स्थानीय आधुनिक म्यूजिक बैंड अपने गीत, संगीत एवं डांस से सबका मन मोह लेते हैं। इनमें से कई स्थानीय संगीत बैंडों ने अपनी प्रतिभा के बल पर विश्व स्तर पर अपनी पहचान बनाई है।

नागालैंड अपनी कला एवं शिल्प के कारण भी काफी प्रसिद्ध है। यहां महिलाएं शिल्पकला में निपुण हैं। यहां की पीतल और टिन धातुओं की सुंदर मूर्तियों के अलावा सुंदर आभूषणों, बाजूबंदों, चूड़ियों तथा अन्य प्रकार के आभूषण बेहद खूबसूरत होते हैं। बीड्स के उपयोग से इनकी खूबसूरती और बढ़ जाती हैं। यहां की बांस से निर्मित स्थानीय शिल्पकलाएं पर्यटकों में बेहद लोकप्रिय हैं।

नागालैंड के परम्परागत पोशाक एवं अस्त्र–शस्त्र

यहां की अधिकांश जनता प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर होने से यहां के अधिकांश त्यौहार भी कृषि आधारित हैं। नागालैंड में प्रत्येक जनजातियों के अपने त्यौहार हैं तथा इनमें भाग लेना अनिवार्य माना जाता हैं। ये त्यौहार अपने विशिष्ट मौसमी त्यौहार, तड़क–भड़क, रंगों, संगीत से भरपूर हैं। यहां के त्यौहारों का प्रमुख विषय विभिन्न नागा बोलियों में विभिन्न नामों से प्रचलित परमात्मा से प्रार्थना है। यहां फसल बोने या काटने से पहले भरपूर फसल के लिए गांव के पुजारी द्वारा बलि देकर देवताओं एवं पुण्यात्माओं को प्रसन्न किया जाता है।

नागालैंड में पूरे वर्ष त्यौहार की शुरूआत जनवरी में चखेसंग सुकुन्ये त्यौहार से होती है, फिर फरवरी में कुकीर मिमकूट, अंगमी सेक्रेनयी मनाया जाता है। अप्रैल माह के पहले सप्ताह में कोनयक आओलिंग और फोम मोनयू त्यौहार के साथ शुरू होकर आओ मोतसू और खियाम्निउंगन मिउ मई में तथा सुमी तुलूनी और चांग न्कन्युलम त्यौहार जुलाई माह में मनाया जाता है। अगस्त और सितम्बर माह में यीम्चूंगर मेटेन्मेओ और संगतम मोड़ंग्मोंग त्यौहार तथा नवम्बर माह में लोथा तोखू एमोंग और रेंगमा नगाड़ा त्यौहार मनाया जाता है। दिसम्बर में जेलिंग डांडंई, हॉर्नबिल त्यौहार और क्रिसमस के साथ ही वर्ष समाप्त होता है।

पयर्टन, कला एवं संस्कृति विभाग, नागालैंड सरकार द्वारा नागालैंड की सभी जनजातियों के अंतर जातीय संपर्क को प्रोत्साहित करने व उनके सांस्कृतिक विरासत को बढ़ावा देने हेतु हर वर्ष नागालैंड 01 दिसम्बर को अपनी स्थापना दिवस के अवसर पर 01 से 10 दिसम्बर तक राजधानी कोहिमा से 12 किलोमीटर दूर दक्षिणी अंगामी क्षेत्र में स्थित किसामा हेरिटेज विलेज में हॉर्नबिल फेस्टिवल आयोजित किया जाता है। किग्वेमा और फेमसा नामक दो गांव से मिलकर बना किसामा गांव का उद्देश्य नागा संस्कृति एवं परम्पराओं का संरक्षण व उन्हें बढ़ावा देना है। इस महोत्सव के माध्यम से पर्यटक एक ही जगह सभी नागा जनजातियों, उनकी संस्कृतियों तथा उनकी विशेष पहचान से परिचित हो सकते हैं। इस विरासत परिसर में 17 स्थानीय रूप से डिजाइन किए गए घर होते हैं, जिन्हें मौरंग कहा जाता है जिसका अर्थ यूथ डॉरमिटरी होता है।

ISSN No. : 0970-9398

नागालैंड में निवास करने वाली जनजातियों में आओ, अंगामी, चखेसांग, चांग, खियामनियुंग्न, कुकी, लोथा, फोम, पोचुरी, रेगामा, संगतम, सुमी, यिमचुंगर, जेलियांग, कान्याक एवं पोमाई जनजातियां प्रमुख हैं। इन जनजातियां की कला संस्कृतियों में काफी विविधता है। हॉर्नबिल सभी जनजातीय त्यौहारों को एक मंच पर प्रस्तुत करता है। इसलिए इसे ''फेस्टिवल ऑफ फेस्टिवल यानी उत्सवों का उत्सव'' भी कहा जाता है। जिसका उद्देश्य विभिन्न नागा संस्कृतियों का संरक्षण है। इस महोत्सव में एक ही जगह सांस्कृतिक प्रस्तुतियों की एक श्रृंखला होती है जिससे राज्य के सभी जनजातियों में एक बेहतर तालमेल स्थापित होता है। 16 प्रमुख जनजातियों के 16 परम्परागत नृत्यों के जरिए दर्शकों तक इन सभी जनजातियों के जीवन पर प्रकाश डाला जाता है।

2000 में आरंभ हुए इस महोत्सव के उपरांत राज्य के पर्यटन परिदृश्य में काफी बदलाव आया है। इस महोत्सव का उद्देश्य नागा जनजातियों को आपस में एक दूसरे से तथा देश दुनिया को नागा समाज की परम्परागत संस्कृति से परिचित कराने के अलावा नागा संस्कृति को पुनर्जीवित करना, उनका संरक्षण व इसके असाधारण परम्पराओं का प्रदर्शन करना है। गांव के वृद्धजन भी इस महोत्सव में भाग लेने कोहिमा जाकर अन्य गांवों के लोगों से मिलते हैं जिससे उन्हें संस्कृति को आत्मसात करने का अवसर मिलता है। इस त्यौहार में नागाओं के पारम्परिक खेलों, युद्ध कलाओं, नृत्य, गीत संगीत आदि का भी मंचन किया जाता है।

इस महोत्सव के दौरान यहां की जनजातियों द्वारा विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान, नृत्य व गीत, स्थानीय व्यंजनों के स्टॉल, परेड व शिल्पकलाओं की प्रदर्शनी आदि जैसी विभिन्न गतिविधियां होती हैं। यह महोत्सव सभी स्थानीय नागा जनजातियों को एकजुट करता है तथा वे सभी रंगारंग कार्यक्रम, शिल्प, खेल, व्यंजनों के अलावा पेंटिंग, लकड़ी की नक्काशी और मूर्तियां व पारंपरिक कलाओं आदि का आनंद लेते हैं। इस फेस्टिवल का मुख्य आकर्षण परम्परागत मोरंग्स प्रदर्शनी, कला, शिल्प एवं स्थानीय जड़ी बूटियों से निर्मित दवाएं, फूलों की प्रदर्शनी तथा बिक्री, सांस्कृतिक मेडली गीत, पारंपरिक तीरंदाजी, नागा कुश्ती, स्वदेशी खेल और नृत्य हैं। इस फेस्टिवल के दौरान आयोजित नाइट मार्केट में विभिन्न जनजातियों द्वारा निर्मित हस्तशिल्प और व्यंजनों के स्टॉल लगाए जाते हैं। यहां नागा जीवन से संबंधित हस्तकलाएं, पारंपरिक चित्र, शॉल, लकड़ी पर नक्काशी की गई वस्तुएं और मूर्तियां मिलती हैं। स्थानीय कलाकार इस फेस्टिवल में चित्रों, लकड़ी की नक्काशी और मूर्तियों सहित पारंपरिक कलाएं प्रदर्शित करते हैं तथा मेडली लोकगीत गाते हुए पारंपरिक नृत्य करते स्थानीय स्वदेशी खेलों का आनंद उठाते हैं। शाम को सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं जिनमें नागालैंड फैशन वीक, मिस्टर नागालैंड बॉडी बिल्डिंग और मिस नागालैंड सौदर्य प्रतियोगिता के अलावा अनेकानेक रंगारंग आयोजन शामिल हैं। इस आयोजन का एक प्रमुख आकर्षण हॉर्नबिल इंटरनेशनल रॉक फेस्टिवल है जिसमें स्थानीय एवं कई देशों से आए अन्तर्राष्ट्रीय रॉक बैंड भी अपना परफॉमेंस देते हैं।

हॉर्नबिल पक्षी **नागालैंड का राजकीय पशु मिथुन**

हार्नबिल फेस्टिवल का नाम यहां जंगलों में पाए जाने वाले पक्षी हॉर्नबिल के नाम पर रखा गया है। हॉर्नबिल एक बड़ा और रंगीन वनपक्षी है। इसे नागा जनजाति में पवित्र माना जाता है तथा पौराणिक नागा कथाओं व लोकगीतों में इसका उल्लेख मिलता है। हॉर्नबिल उष्णकटिबंधीय अफ्रीका, एशिया और मलेशिया में पाया जाने वाला पक्षी है। भारत में इसे धनेश नाम से जाना जाता है। हॉर्नबिल लंबे, धुमावदार और चमकीले होते हैं। भारत में हॉर्नबिल की 9 प्रजातियां पाई जाती हैं जिनमें प्रमुख हैंः भारतीय ग्रे हॉर्नबिल, मालाबार ग्रे हॉर्नबिल, मालाबारे पाइड हॉर्नबिल, ग्रेट हॉर्नबिल, रफस–नेक्ड हॉर्नबिल, ऑस्टेन ब्राउन हॉर्नबिल तथा नर्कोन्दम प्रजाति के हॉर्नबिल। विगत कुछ वर्षों में अवैध शिकार ने इस प्रजाति को संकटग्रस्त बना दिया है तथा इस महोत्सव द्वारा इस पक्षी को संरक्षित किए जाने के बारे में जागरूक किया जाता है।

01 दिसम्बर 1963 को 16वें राज्य के रूप में भारतीय गणराज्य में शामिल नागालैंड का क्षेत्रफल 16579 वर्ग किलोमीटर है। इसके उत्तर–पश्चिम में असम, पूर्व में म्यांमार एवं अरूणाचल प्रदेश तथा दक्षिण में मणिपुर स्थित है। अपने अप्रतिम नैसर्गिक सौन्दर्य एवं विविधता से भरपूर नागालैंड का तापमान पर्यटकों के अनुकूल है। गर्मियों में यहां का तापमान औसतन 31 डिग्री से अधिक और सर्दियों में औसतन 4 डिग्री सेल्सियस के कम नहीं होता। नागालैंड आने का सबसे बेहतरीन समय अक्टूबर से मई तक होता है। इस दौरान यहां का मौसम बेहद शानदार होता है और यहां की यात्रा को सुखद बनाता है।

सांख्यिकीय दृष्टि से यहां की जनसंख्या लगभग 22 लाख, जनसंख्या घनत्व 119 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर, लिंग अनुपात प्रति हजार पुरुष 931 महिलाएं तथा साक्षरता दर 79.55% (पुरुष 82.75% तथा महिलाएं 76.11%) है। यहां के प्राकृतिक सौन्दर्य व सुंदरता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि पहाड़ियों से घिरे इस हरे–भरे प्रदेश का केवल 9 प्रतिशत हिस्सा ही समतल है। नागालैंड खूबसूरत पहाड़ियों तथा नदियों के मधुर कलरव से सदैव गुलजार रहता है। हिमालय की तराई में बसा यह क्षेत्र अपने प्राकृतिक सौन्दर्य, रोचक इतिहास एवं अद्‌भूत संस्कृति का बेजोड़ मिश्रण है। नागालैंड के प्रमुख शहरों के नाम सुंदर स्थानीय फूलों के नाम पर है। मिथुन नागालैंड का राजकीय पशु है। मिथुन का सिर या सींग नागा वास्तुकला का हस्ताक्षर तथा धन, समृद्धि और उर्वरता का एक शक्तिशाली प्रतीक है। आम अवधारणा के बिल्कुल विपरीत यहां के स्थानीय लोग बेहद शांत स्वभाव के मिलनसार एवं बेहद आत्मीयता के साथ अपने अतिथियों का सत्कार करते हैं जिसका कोई सानी नहीं।

नागालैंड के प्रवेश द्वार दीमापुर में सड़क, रेल एवं वायुमार्ग से आसानी से पहुंचा जा सकता है। अपनी नैसर्गिक प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध नागालैंड में घूमने के लिए जुकोऊ घाटी, मोकुकचुंग, जुन्हेबोटो, तुएनसांग, नागा हेरिटेज विलेज कोहिमा, कोहिमा, खोनाम ग्राम, मोन, फेक, शीलोई झील, तौफेमा गांव तथा दीमापुर जैसे कई पर्यटन स्थल हैं जहां जाकर आप प्राकृतिक सुंदरता का भरपूर आनंद उठा सकते हैं। यहां के स्थानीय व्यंजन व खानपान भी बेहद लजीज है। यहां का मुख्य खाद्य चावल है। यहां के मुख्य व्यंजनों में एक्सोन, बाम्बू शूट, फर्मेन्टेड ड्राई फिश, अनिशी, समथू, एकिबे, ब्वॉल्ड बेजिटेबल्स, अकिनी, जुठो आदि शामिल हैं। यहां शाकाहारी व्यंजनों में नागा चिली, मक्के, धान और आर्गेनिक फल व सब्जियों से तैयार विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजनों का भी आनंद लिया जा सकता है।

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8) **पं.सं. 3246/77**

प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम
समाचार पत्रों का पंजीकरण (केंद्रीय) नियम
''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन का स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशन का नाम व पता	राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
6.	संपादक का नाम व पता	श्री राजेश कुमार श्रीवास्तव, संयुक्त निदेशक (पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, एन.डी.सी.सी.–2 भवन, चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, राजेश कुमार श्रीवास्तव घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–
प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली–6

ISSN No. : 0970-9398

विकसित भारत @2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका

–डॉ. आल अहमद
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

पूर्वोत्तर भारत का इतिहास और भूगोल भारतीय सभ्यता के उस सघन तथा बहुस्तरीय अनुभव का प्रतिनिधित्व करते हैं, जहाँ प्रकृति, संस्कृति और चेतना निरंतर संवाद में रही हैं। हिमालय की पूर्वी श्रृंखलाओं, पटकाई और बारैल पर्वतमालाओं तथा ब्रह्मपुत्र और बराक जैसी जीवनदायिनी नदियों से निर्मित यह क्षेत्र केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि एक जीवंत सभ्यतागत भू–दृश्य है, जिसने सहस्राब्दियों से मानव समाजों की स्मृति, आस्था और जीविका को आकार दिया है।[1] ऐतिहासिक दृष्टि से यह क्षेत्र आर्य, तिब्बतो–बर्मी, मंगोलॉयड और ऑस्ट्रो–एशियाटिक परंपराओं के सहअस्तित्व का साक्ष्य रहा है, जहाँ राज्य की अवधारणा से पहले समुदाय, परंपरा और प्रकृति के साथ संतुलन को प्राथमिक मूल्य माना गया।[2] प्राचीन कामरूप, मणिपुर और त्रिपुरा जैसे राज्य क्षेत्रों में शासन शक्ति का आधार केवल राजनीतिक प्रभुत्व नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्वीकृति और नैतिक अनुशासन रहा, जो इसे भारतीय दर्शन की 'लोकसंग्रह' परंपरा से जोड़ता है।[3,4] औपनिवेशिक काल में इस क्षेत्र का सीमांत के रूप में वर्गीकरण उसके जटिल इतिहास और स्वायत्त सामाजिक संरचनाओं को समझने में एक बौद्धिक चूक सिद्ध हुआ, क्योंकि यहाँ का भूगोल–घने वन, ऊँचे पर्वत और सीमावर्ती मार्ग–वास्तव में भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाला सेतु रहा है।[5] इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत का इतिहास और भूगोल किसी स्थिर अतीत का विवरण नहीं, बल्कि एक सतत प्रवाह है, जो यह दर्शाता है कि विविधता, सहअस्तित्व और प्रकृति के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व भारतीय सभ्यता की परिधि नहीं, बल्कि उसका मूल दार्शनिक आधार रहे हैं।[6]

विकसित भारत @2047 भारत सरकार की एक प्रेरणादायक और दूरदर्शी दृष्टि है, जो 2047 तक–जब देश अपनी आजादी की शताब्दी का उत्सव मना रहा होगा–भारत को एक समृद्ध, आत्मनिर्भर और वैश्विक नेता के रूप में स्थापित करने का संकल्प लेती है। इस विजन में न केवल आर्थिक उन्नति, सामाजिक न्याय और पर्यावरण संरक्षण शामिल हैं, बल्कि डिजिटल क्रांति, सांस्कृतिक संवर्धन तथा वैश्विक व्यापार में भारत की भूमिका भी प्रमुख है, जो देश को दुनिया की शीर्ष अर्थव्यवस्थाओं में स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करती है।[7] प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल एवं दूरदर्शी नेतृत्व में वर्तमान सरकार ने इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य के लिए एक ठोस और समावेशी ब्लूप्रिंट तैयार किया है, जिसमें हर क्षेत्र, हर वर्ग और विशेष रूप से पूर्वोत्तर भारत जैसे रणनीतिक क्षेत्रों को विकास की मुख्यधारा में लाकर महती भूमिका निभाने का अवसर प्रदान किया गया है।

पूर्वोत्तर भारत अपनी अनूठी जैव–विविधता, सांस्कृतिक समृद्धि और भौगोलिक स्थिति के कारण विकसित भारत @2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण एवं निर्णायक योगदानकर्ता के रूप में उभर रहा है। जहां पहले यह क्षेत्र भौगोलिक अलगाव, सीमित कनेक्टिविटी और विकास की चुनौतियों से जूझता था, वहीं मोदी सरकार की क्रांतिकारी नीतियों ने इसे भारत की विकास यात्रा का इंजन बना दिया है। विशेष रूप से 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी'–जो लुक ईस्ट से अधिक सक्रिय और प्रभावी रूप में विकसित हुई है–के माध्यम से पूर्वोत्तर को दक्षिण–पूर्व एशिया का प्रवेश द्वार बनाया जा रहा है, जो न केवल व्यापार, लॉजिस्टिक्स और निवेश को गति दे रहा है, बल्कि भारत को $30 ट्रिलियन अर्थव्यवस्था की दिशा में तेजी से आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।[8]

प्रधानमंत्री मोदी की दूरदृष्टि से प्रेरित इन प्रयासों ने पूर्वोत्तर को 'फ्रंटियर' से 'फ्रंट–लाइन ग्रोथ इंजन' में बदल दिया है। उदाहरणस्वरूप, ज्योतिरादित्य सिंधिया जी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि पूर्वोत्तर अब विकसित भारत की यात्रा में इंजन बन चुका है, जहां 36 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों वाली इस 'ट्रेन' का इंजन पूर्वोत्तर ही है।[9] सरकार की पहलों जैसे PM-DevINE, PM GatiShakti और NESIDS ने क्षेत्र में अवसंरचना, डिजिटल कनेक्टिविटी और ऊर्जा परियोजनाओं को तेज किया है, जिससे 18,000 से अधिक गांवों को 24x7 बिजली मिल रही है, नए हवाई अड्डे और रेल लाइनें विकसित हो रही हैं, तथा सेमीकंडक्टर और ऊर्जा क्षेत्र में बड़े निवेश आकर्षित हो रहे हैं।[10]

इसके परिणामस्वरूप पूर्वोत्तर अब केवल राष्ट्रीय एकता का प्रतीक नहीं रहा, बल्कि वैश्विक व्यापार और आर्थिक समृद्धि का प्रमुख केंद्र बन गया है। मल्टी–मोडल लॉजिस्टिक्स पार्क, इनलैंड वॉटरवे का विस्तार और अंतरराष्ट्रीय गलियारों

का निर्माण क्षेत्र को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़कर भारत की $30 ट्रिलियन अर्थव्यवस्था की कुंजी बना रहे हैं, जो विकसित भारत के सपने को साकार करने में पूर्वोत्तर की महती भूमिका को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।[11] मोदी जी की इन प्रगतिशील नीतियों ने क्षेत्रीय असमानताओं को कम किया है, युवाओं को रोजगार और उद्यमिता के अवसर दिए हैं, तथा पूर्वोत्तर को राष्ट्रीय विकास की मुख्य कहानी का अभिन्न अंग बना दिया है।

इस प्रकार विकसित भारत @2047 का लक्ष्य तभी पूर्ण होगा जब पूर्वोत्तर भारत अपनी पूर्ण क्षमता से योगदान देगा–और वर्तमान सरकार की दूरदर्शिता ने इसे न केवल संभव बनाया है, बल्कि इसे एक रोचक, प्रेरक और अपरिहार्य अध्याय बना दिया है, जहां पूर्वोत्तर की अनोखी क्षमताएं राष्ट्र की सफलता की महाकाव्य रचना कर रही हैं।

पूर्वोत्तर भारत, जिसमें असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा जैसे आठ राज्य शामिल हैं, प्राकृतिक संसाधनों की अपार खान, विश्व–स्तरीय जैव–विविधता, हरे–भरे पहाड़ों, नदियों और अनोखी सांस्कृतिक विरासत से समृद्ध है–यहाँ की मिट्टी में चाय, बांस, ऑर्गेनिक फल–सब्जियाँ और पारंपरिक हस्तशिल्प जैसे उत्पाद दुनिया भर में अपनी पहचान बना रहे हैं। ऐतिहासिक रूप से इस क्षेत्र को भौगोलिक अलगाव, सीमित कनेक्टिविटी और सुरक्षा संबंधी चुनौतियों के कारण विकास की मुख्यधारा से दूर रखा गया, जिससे यह 'सीमांत' माना जाता था। लेकिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व वाली वर्तमान सरकार ने इस तस्वीर को पूरी तरह बदल दिया है, और पूर्वोत्तर को विकसित भारत @2047 के लक्ष्य में एक महती एवं निर्णायक भूमिका वाला क्षेत्र बना दिया है।

सरकार ने 'लुक ईस्ट' पॉलिसी को अधिक सक्रिय और प्रभावी 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' में परिवर्तित कर पूर्वोत्तर को भारत की विदेश नीति का केंद्र बिंदु बना दिया, जिससे यह क्षेत्र अब दक्षिण–पूर्व एशिया का रणनीतिक प्रवेश द्वार बन चुका है। मोदी जी की दूरदर्शिता से प्रेरित इस नीति ने शांति स्थापना को प्राथमिकता दी–पिछले वर्षों में कई ऐतिहासिक शांति समझौते जैसे बोदो (2020), ब्रू–रियांग (2020), कार्बी आंगलोंग (2021) और अन्य ने हिंसा को काफी हद तक कम किया, जिससे क्षेत्र में स्थिरता आई और आर्थिक गतिविधियाँ तेज हुईं।[12]

सरकार की क्रांतिकारी पहलों जैसे PM-DevINE, PM GatiShakti, NESIDS और हाल के निवेश सम्मेलनों (जैसे Rising North East Investors Summit 2025) ने हजारों करोड़ रुपये के निवेश को आकर्षित किया है, जिससे नई राजमार्गें (16,000+ किमी), रेल लाइनें, हवाई अड्डे (जैसे गुवाहाटी T2 का उद्घाटन), और डिजिटल कनेक्टिविटी बढ़ी है–ये सब पूर्वोत्तर को राष्ट्रीय विकास का फ्रंट–रनर बना रहे हैं।[13]

मोदी सरकार की दूरदर्शी नीतियों ने पूर्वोत्तर को न केवल शांति और समृद्धि का प्रतीक बनाया है, बल्कि इसे विकसित भारत के सपने का अभिन्न अंग और इंजन बना दिया है–जहाँ क्षेत्र की अनोखी क्षमताएँ राष्ट्र को वैश्विक स्तर पर नई ऊँचाइयों तक ले जा रही हैं, और 2047 तक भारत को एक समृद्ध, एकजुट एवं विकसित महाशक्ति बनाने में इसकी महती भूमिका अपरिहार्य है।

वर्तमान सरकार ने पूर्वोत्तर भारत के विकास को एक नई ऊंचाई प्रदान करने के लिए कई क्रांतिकारी और दूरगामी योजनाएं लागू की हैं, जो न केवल क्षेत्र की आर्थिक मजबूती सुनिश्चित करती हैं, बल्कि विकसित भारत @2047 के लक्ष्य में पूर्वोत्तर की महती भूमिका को मजबूत बनाती हैं–एक ऐसा क्षेत्र जो अपनी रणनीतिक स्थिति से दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ भारत की वैश्विक व्यापारिक कड़ियों को मजबूत करने का प्रमुख माध्यम बन रहा है। सबसे प्रमुख उदाहरण है 'उत्तर पूर्व विशेष अवसंरचना विकास योजना' (NESIDS), जो 2017–18 में शुरू हुई एक केंद्रीय क्षेत्र योजना है और पूर्ण रूप से केंद्र द्वारा वित्त पोषित है, जिसमें अवसंरचना, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा जल आपूर्ति जैसे क्षेत्रों पर फोकस किया गया है, जिससे पूर्वोत्तर के राज्यों में बुनियादी सुविधाओं की कमी को दूर कर स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाया जा रहा है।[14] इसके अलावा 'उत्तर पूर्व परिवर्तनकारी औद्योगीकरण योजना' (UNNATI) 2024 के तहत 10,037 करोड़ रुपये का भारी–भरकम निवेश किया गया है, जो औद्योगिक इकोसिस्टम को मजबूत बनाने और नए निवेश आकर्षित करने के लिए डिजाइन की गई है, जिससे रोजगार सृजन में अभूतपूर्व वृद्धि हो रही है तथा पूर्वोत्तर को विकसित भारत के औद्योगिक केंद्र के रूप में स्थापित किया जा रहा है।[15] प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी की दूरदर्शी 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' ने पूर्वोत्तर को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाले आधुनिक राजमार्गों, रेलवे नेटवर्क और हवाई अड्डों का विस्तार किया है, जैसे कि 51.38 किलोमीटर लंबी बैराबी–सैरंग रेलवे लाइन जो मिजोरम की राजधानी आइजोल को राष्ट्रीय रेल नेटवर्क से जोड़ रही है, तथा शिलांग हवाई अड्डे का विस्तार जो क्षेत्रीय कनेक्टिविटी को नई गति दे रहा है–ये परियोजनाएं पूर्वोत्तर को वैश्विक व्यापार का गेटवे बनाकर 2047 तक भारत को +30 ट्रिलियन अर्थव्यवस्था बनाने में निर्णायक योगदान दे रही हैं।[16]

शांति समझौतों के माध्यम से मोदी सरकार ने पूर्वोत्तर की सामाजिक स्थिरता को एक नई दिशा दी है, जिसमें बोडो समझौता (2020) जो असम में बोडो समुदाय की लंबित मांगों को संबोधित करता है, ब्रू–रियांग समझौता (2020) जो प्रवासी समुदायों की स्थायी बसावट सुनिश्चित करता है, कार्बी आंगलोंग समझौता (2021) जो असम के कार्बी क्षेत्र में शांति स्थापित करता है, तथा त्रिपुरा मोथा समझौता (2024) जैसे 12 से अधिक ऐतिहासिक समझौते शामिल हैं, जिन्होंने 10,900

से अधिक युवाओं को हथियार छोड़कर मुख्यधारा में शामिल होने के लिए प्रेरित किया है, जिससे पूर्वोत्तर विकसित भारत के शांतिपूर्ण विकास मॉडल का प्रतीक बन रहा है।[17] ऊर्जा क्षेत्र में सरकार की पहलों ने क्रांति ला दी है, जहां 10,000 करोड़ रुपये से अधिक के निवेश से हाइड्रोइलेक्ट्रिक और सौर ऊर्जा परियोजनाएं शुरू की गई हैं, जैसे कि 2000 मेगावाट की सुबनसिरी लोअर हाइड्रोइलेक्ट्रिक परियोजना, जिसने पूर्वोत्तर के हजारों गांवों को 24x7 बिजली उपलब्ध कराई है और क्षेत्र को ऊर्जा निर्यातक बनाकर विकसित भारत के सतत विकास लक्ष्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।[18] इन सभी पहलों से पूर्वोत्तर अब एक मजबूत लॉजिस्टिक्स गेटवे के रूप में उभर रहा है, जहां मल्टी–मोडल ट्रांसपोर्ट सिस्टम का विस्तार भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया के साथ जोड़कर वैश्विक व्यापार केंद्र बनाने में योगदान दे रहा है, जिससे 2047 तक की विकास यात्रा में पूर्वोत्तर की महती भूमिका और स्पष्ट हो जाती है।[19] मोदी सरकार की ये प्रगतिशील नीतियां न केवल आर्थिक गति प्रदान कर रही हैं, बल्कि स्थानीय युवाओं के लिए अप्रेंटिसशिप और उद्यमिता के नए अवसर सृजित कर रही हैं, जैसे कि उत्तर पूर्व अप्रेंटिसशिप पायलट योजना जो युवाओं को संरचित, वेतनयुक्त प्रशिक्षण प्रदान करती है, जिससे वे विकसित भारत की आधारशिला बनकर राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भागीदार बन रहे हैं।[20]

मोदी सरकार के दूरदर्शी नेतृत्व में पूर्वोत्तर भारत ने अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल की हैं, जो इसे विकसित भारत @2047 के लक्ष्य प्राप्ति में एक महती एवं निर्णायक भूमिका निभाने वाली शक्ति बना रही हैं। 2024 में ही Ministry of Development of North Eastern Region (MDoNER) ने 86 परियोजनाओं के लिए लगभग 1,970 करोड़ रुपये की स्वीकृति प्रदान की और 1,590 करोड़ रुपये से अधिक राशि जारी की, जिससे क्षेत्र में अवसंरचना, शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यटन जैसे क्षेत्रों में तेज गति से कार्य हुआ।[21] इसके अलावा 111 से अधिक अवसंरचना परियोजनाओं की शुरुआत हुई, जिनमें नए हवाई अड्डे, रेल लाइनें और स्वास्थ्य संस्थान शामिल हैं, जो पूर्वोत्तर को वैश्विक कनेक्टिविटी का केंद्र बना रहे हैं।[22]

शिक्षा के क्षेत्र में यह परिवर्तन और भी प्रेरणादायक है–मिजोरम ने मई 2025 में 98.2% साक्षरता दर हासिल कर भारत का पहला पूर्ण साक्षर राज्य बनने का गौरव प्राप्त किया, जो मोदी सरकार की ULLAS – Nav Bharat Saaksharta Karyakram जैसी योजनाओं का जीवंत प्रमाण है।[23] इसी प्रकार Jal Jeevan Mission के तहत पूर्वोत्तर के हजारों गांवों में पाइप्ड ड्रिंकिंग वाटर पहुंचाया गया है, जिससे ग्रामीण जीवन में क्रांतिकारी बदलाव आया और स्वास्थ्य–संबंधी चुनौतियां कम हुईं।[24] उच्च शिक्षा में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है–पिछले दशक में विश्वविद्यालयों की संख्या में 39% की वृद्धि दर्ज की गई, जिससे युवाओं को बेहतर अवसर मिले और क्षेत्र की बौद्धिक क्षमता मजबूत हुई।[25]

कनेक्टिविटी में आयी यह क्रांति देखने लायक है–मेघालय के तुरा में आईटी पार्क का निर्माण जो डिजिटल अर्थव्यवस्था को बढ़ावा दे रहा है और युवाओं के लिए हजारों रोजगार के अवसर पैदा कर रहा है तथा यूनिटी मॉल जैसी परियोजनाएं स्थानीय हस्तशिल्प और उत्पादों को राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय बाजार से जोड़ रही हैं।[26] ये उपलब्धियां न केवल सरकार की अटूट प्रतिबद्धता का प्रमाण हैं, बल्कि पूर्वोत्तर को राष्ट्रीय विकास का चालक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

मोदी सरकार की ये ऐतिहासिक पहलें न केवल क्षेत्रीय असमानताओं को मिटा रही हैं, बल्कि पूर्वोत्तर की अनोखी क्षमताओं को राष्ट्र की महाकाव्य विकास यात्रा का अभिन्न अंग बना रही हैं, जो 2047 तक एक समृद्ध, एकजुट और वैश्विक स्तर पर अग्रणी भारत का निर्माण सुनिश्चित करेगी।

विकसित भारत @2047 के संकल्प में पूर्वोत्तर भारत अब केवल भौगोलिक परिधि नहीं, बल्कि रणनीतिक धुरी के रूप में उभर रहा है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र सरकार ने इस क्षेत्र को "सीमांत" से निकालकर "सेतु" के रूप में स्थापित करने की दूरदर्शी नीति अपनाई है। 2030 तक पूर्वोत्तर को एक बहु–मोडल कनेक्टिविटी हब के रूप में विकसित करने का लक्ष्य–जहाँ सड़क, रेल, वायु और जलमार्ग एकीकृत हों–भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाली 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' को ठोस आधार प्रदान करता है।[27] यह केवल संपर्क का विस्तार नहीं, बल्कि भारत के आर्थिक और कूटनीतिक प्रभाव का पूर्व की ओर सशक्त प्रसार है।[28]

सरकार की PM-DevINE (Prime Minister's Development Initiative for North East) जैसी योजनाएँ पूर्वोत्तर के युवाओं को केंद्र में रखकर बनाई गई हैं, जिनका उद्देश्य बुनियादी ढाँचे के साथ–साथ रोज़गार सृजन, कौशल विकास और स्थानीय उद्यमिता को गति देना है।[29] पर्यटन क्षेत्र में आध्यात्मिक, पारिस्थितिक और सांस्कृतिक विविधता को वैश्विक मानचित्र पर लाने के प्रयास–जैसे कामाख्या, तवांग और माजुली–स्थानीय अर्थव्यवस्था को नई ऊर्जा दे रहे हैं।[30] साथ ही कृषि और बागवानी में जैविक उत्पादों, बाँस उद्योग और मूल्य–संवर्धन आधारित क्लस्टरों के माध्यम से आत्मनिर्भरता का नया मॉडल उभर रहा है।[31]

विशेष रूप से जलमार्ग ग्रिड और लॉजिस्टिक कनेक्टिविटी–जैसे असम को राष्ट्रीय जलमार्ग–2 (ब्रह्मपुत्र) के माध्यम से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय व्यापार नेटवर्क से जोड़ना–पूर्वोत्तर को भारत के व्यापारिक भविष्य का अहम स्तंभ बनाता है।[32] ये पहल दर्शाती हैं कि वर्तमान सरकार की विकास–नीति केवल घोषणाओं तक सीमित नहीं, बल्कि

समयबद्ध, क्षेत्र–विशिष्ट और परिणामोन्मुख है।[33] इस प्रकार मोदी जी की दूरदृष्टि से प्रेरित ये समन्वित प्रयास पूर्वोत्तर भारत को वैश्विक मंच पर स्थापित करते हुए विकसित भारत के लक्ष्य में उसकी महती और निर्णायक भूमिका को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं।

विकसित भारत @2047 के महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य की पूर्ति में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका केवल सहायक नहीं, बल्कि निर्णायक बनकर उभर रही है। लंबे समय तक भौगोलिक दूरी, अवसंरचनात्मक अभाव और राजनीतिक उपेक्षा के कारण विकास की मुख्यधारा से कटे रहे इस क्षेत्र को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में पहली बार राष्ट्रीय विकास–विमर्श के केंद्र में स्थापित किया गया है। 'एक्ट ईस्ट नीति' को व्यवहारिक रूप देते हुए पूर्वोत्तर को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाला रणनीतिक प्रवेश–द्वार माना गया, जिसके परिणामस्वरूप सड़क, रेल, हवाई संपर्क और डिजिटल कनेक्टिविटी में अभूतपूर्व निवेश हुआ। यह केवल भौतिक अवसंरचना का विस्तार नहीं, बल्कि आर्थिक अवसरों, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और वैश्विक व्यापार में भारत की भूमिका को सुदृढ़ करने की दूरदर्शी पहल है।

वर्तमान सरकार की सबसे ऐतिहासिक उपलब्धियों में पूर्वोत्तर में स्थायी शांति की स्थापना को विशेष रूप से रेखांकित किया जाना चाहिए। दशकों से जारी उग्रवाद और अस्थिरता के समाधान हेतु किए गए शांति समझौते–जैसे बोडो समझौता, ब्रू–रीआंग समझौता और विभिन्न विद्रोही संगठनों के साथ संवाद–ने न केवल हिंसा में उल्लेखनीय कमी लाई, बल्कि विकास के लिए अनुकूल वातावरण भी निर्मित किया।[34] यह सुशासन और संवाद–आधारित नेतृत्व का प्रमाण है कि आज पूर्वोत्तर की पहचान संघर्ष से नहीं, संभावनाओं से जुड़ रही है।

आर्थिक दृष्टि से भी पूर्वोत्तर को 'विकास के फ्रंटियर' के रूप में रूपांतरित करने की स्पष्ट रणनीति दिखाई देती है। पर्यटन, जैविक कृषि, बांस उद्योग, हस्तशिल्प, जलविद्युत और स्टार्टअप संस्कृति को बढ़ावा देकर इस क्षेत्र को आत्मनिर्भर भारत की मजबूत कड़ी बनाया जा रहा है।[35] निवेश सम्मेलनों और विशेष औद्योगिक प्रोत्साहन योजनाओं के माध्यम से निजी और विदेशी पूंजी को आकर्षित किया गया, जिससे स्थानीय युवाओं के लिए रोजगार और उद्यमिता के नए द्वार खुले।

प्रधानमंत्री मोदी जी द्वारा 79वें स्वतंत्रता दिवस संबोधन में 'विकसित भारत @2047' की परिकल्पना के अंतर्गत पूर्वोत्तर को भारत की विकास–यात्रा का नेतृत्वकर्ता बताया जाना इस बात का संकेत है कि यह क्षेत्र अब हाशिये पर नहीं, बल्कि भविष्य के भारत की धुरी है।[36] राष्ट्रीय एकता, सीमावर्ती सुरक्षा और वैश्विक प्रतिस्पर्धा–तीनों ही आयामों में पूर्वोत्तर की भूमिका निर्णायक होती जा रही है। इस प्रकार वर्तमान सरकार की दूरदर्शी नीतियों और निर्णायक नेतृत्व के फलस्वरूप पूर्वोत्तर भारत न केवल अपनी ऐतिहासिक उपेक्षा से मुक्त हुआ है, बल्कि विकसित भारत @2047 के स्वप्न को साकार करने में अग्रणी शक्ति के रूप में स्थापित हो चुका है–जो एक समृद्ध, एकजुट और आत्मविश्वासी राष्ट्र के निर्माण की दिशा में सरकार की महान उपलब्धि को प्रमाणित करता है।

संदर्भ

[1] NCERT. (2006). *India: Physical Environment*. National Council of Educational Research and Training. https://ncert.nic.in/textbook.php?kegy1=0-7

[2] Barua, B. K. (1951). *A Cultural History of Assam (Early Period)*. K. K. Barooah.

[3] Kautilya. (1915). *Arthashastra* (R. Shamasastry, Trans.). Government Press. (Interpretative studies available at: https://apps.dtic.mil/sti/pdfs/AD1019423.pdf)

[4] Radhakrishnan, S. (1923). *Indian Philosophy (Vol. 1)*. George Allen & Unwin Ltd.

[5] Hazarika, S. (1994). *Strangers of the Mist: Tales of War and Peace from India's Northeast*. Penguin Books India.

[6] UNESCO. (2014). *Cultural Landscapes of North-East India*. UNESCO World Heritage Centre. https://whc.unesco.org/en/tentativelists/5893/

[7] Government of India. (2023). *Viksit Bharat 2047: Meaning, Vision, Objective*. ClearTax. https://cleartax.in/s/viksit-bharat-2047

[8] Government of India. (2024). *Viksit Bharat 2047: Northeast India as Logistics Gateway to Southeast Asia*. Business Standard. https://www.business-standard.com/opinion/specials/viksit-bharat-2047-northeast-india-as-logistics-gateway-to-southeast-asia-124030400269_1.html

[9] Scindia, J. M. (2025). *Northeast has become India's engine towards Viksit Bharat*. Morung Express. https://morungexpress.com/northeast-has-become-indias-engine-towards-viksit-bharat-jyotiraditya-scindia

[10] Scindia, J. M. (2025). *Northeast to be key growth engine for 'Viksit Bharat'*. Hindustan Times. https://www.hindustantimes.com/india-news/northeast-to-be-key-growth-engine-for-viksit-bharat-jyotiraditya-scindia-101748009755875.html

[11] PMO India. (2025). *Northeast holds key for India's $30-trillion vision towards Viksit Bharat*. The Hans India. https://www.thehansindia.com/news/national/northeast-holds-key-for-indias-30-trillion-vision-towards-viksit-bharat-pmo-974878

[12] Government of India. (2024). *Development of North East by Modi government*. DD News. https://ddnews.gov.in/en/development-of-north-east-by-modi-government

[13] Modi, N. (2025). *PM Modi opens Guwahati T2, pitches Assam as gateway to Viksit Bharat by 2047*. Assam Tribune. https://assamtribune.com/guwahati/pm-modi-opens-guwahati-t2-pitches-assam-as-gateway-to-viksit-bharat-by-2047-1601938

[14] Government of India. (2025). *Schemes for the Development of the NER*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2147368

[15] Government of India. (2024). *Cabinet approves Uttar Poorva Transformative Industrialization*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2012360

[16] Government of India. (2025). *The North East: Where the Sun of Development Rises*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressNoteDetails.aspx?ModuleId=3&NoteId=155194

[17] Shah, A. (2025). *12 peace accords signed, 10.9K youth gave up arms in Northeast*. Business Standard. https://www.business-standard.com/india-news/12-peace-accords-signed-10-9k-youth-gave-up-arms-in-northeast-amit-shah-125032200039_1.html

[18] Government of India. (2025). *Shri Manohar Lal Inaugurates Commercial Operation of the first Unit*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressRelease Page.aspx?PRID=2207797

[19] Government of India. (2024). *Viksit Bharat 2047: Northeast India as logistics gateway to Southeast*. Business Standard. https://www.business-standard.com/opinion/specials/viksit-bharat-2047-northeast-india-as-logistics-gateway-to-southeast-asia-124030400269_1.html

[20] Government of India. (2025). *North East Apprenticeship Pilot Scheme Jointly launched by*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressRelease Page.aspx?PRID=2129889

[21] Government of India. (2024). *Achievements of Ministry of Development of North Eastern Region- 2024*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2087705

[22] Government of India. (2024). *Northeast Emerges as New Hub of Development*. BPR&D. https://bprd.nic.in/uploads/pdf/Vigilant% 20India,%20Northeast%20(%2016-31%20 Dec,2024)%20Year-2,%20Volume%20No-18%20%20 Low%20Version.pdf

[23] Government of India. (2025). *Mizoram Achieves Full Functional Literacy*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2130080

[24] Government of India. (2025). *Jal Jeevan Mission: Ensuring Tap Water for 15 Crore Rural Families*. The Water Digest. https://thewaterdigest.com/jal-jeevan-mission-ensuring-tap-water-for-15-crore-rural-families

[25] Modi, N. (2024). *Transformational decade under Prime Minister Mr. Narendra Modi*. India Brand Equity Foundation. https://www.ibef.org/news/transformational-decade-under-prime-minister-mr-narendramodi-sparks-new-energy-in-northeast-india-union-minister-of-ports-shipping-waterways-mr-sarbananda-sonowal

[26] Modi, N. (2024). *Meghalaya: PM Modi Virtually Launches IT Park in Tura*. The Sentinel Assam. https://www.sentinelassam.com/north-east-india-news/meghalaya-news/meghalaya-pm-modi-virtually-launches-it-park-

in-tura-boosting-digital-economy-and-job-opportunities

[27] Government of India. (2022). *Act East Policy*. Ministry of External Affairs. https://www.mea.gov.in/distinguished-lectures-detail.htm?840=

[28] Government of India. (2025). *India's Northeast Emerges as Gateway to Southeast Asia*. The Irrawaddy. https://www.irrawaddy.com/opinion/guest-column/indias-northeast-emerges-as-gateway-to-southeast-asia.html

[29] Government of India. (2022). *PM-DevINE*. Ministry of Development of North Eastern Region. https://www.pmindia.gov.in/en/news_updates/cabinet-approves-new-scheme-prime-ministers-development-initiative-for-north-east-region-pm-devine-for-the-remaining-four-years-of-the-15th-finance-commission-from-2022-23-to-2025

[30] Government of India. (2025). *North East India Tourism*. Ministry of Tourism. https://tourism.gov.in/north-east

[31] Government of India. (2025). *NITI Aayog Reports on North East*. NITI Aayog. https://niti.gov.in/whats-new/north-eastern-region-district-sdg-index-2023-24

[32] Government of India. (2025). *Inland Waterways Authority of India*. IWAI. https://iwai.nic.in/

[33] Sonowal, S. (2025). *Unearthing the Northeast's Potential: Key to Building a Viksit Bharat*. The Statesman. https://www.thestatesman.com/exclusive-interviews/unearthing-the-northeasts-potential-key-to-building-a-viksit-bharat-sonowal-1503469050.html

[34] Government of India. (2025). *Ministry of Home Affairs, Peace Accords in North-East India*. Ministry of Home Affairs. https://www.mha.gov.in/sites/default/files/2024-12/NEMajorInitiativesPeacePr_11122024.pdf

[35] Government of India. (2025). *NITI Aayog, North Eastern Region Development Reports*. NITI Aayog. https://niti.gov.in/whats-new/north-eastern-region-district-sdg-index-2023-24

[36] Modi, N. (2025). *PM's 79th Independence Day Address: Vision for Viksit Bharat 2047*. PIB. https://www.pib.gov.in/PressReleseDetailm.aspx?PRID=2156841

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर का भक्ति-रंगमंच

– डॉ. मणि कुमार
सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

15वीं–16वीं शताब्दी में श्रीमंत शंकरदेव के माध्यम से पूर्वोत्तर भारत में वैष्णव धर्म का एक नया अध्याय प्रारंभ हो जाता है। "15वीं शताब्दी तक वैष्णव भक्ति अथवा भागवत धर्म शक्तिशाली देशव्यापी धार्मिक, सांस्कृतिक आंदोलन का रूप ले चुका था। अपने व्यापक रूप में सभी कलाओं एवं सामुदायिक जीवन के हर पक्ष को समृद्ध बना चुका था। महान उपदेशक एवं संत कवियों ने विष्णु के अवतारों – विशेषकर कृष्ण और राम के विषय में भावमय गीतों की रचना की। वैष्णव भक्ति आंदोलन द्वारा प्रवर्तित भक्ति एवं पूजा की संकल्पना ही मध्यकालीन नाट्य परंपरा की भावभूमि बनी।"[1]

श्रीमंत शंकरदेव ने अपने विवेकशील पांडित्य के आधार पर समयानुकूल परिष्करण के साथ तत्कालीन समाज में वामाचारियों एवं कर्मकांडियों के फैले हुए प्रभाव को लक्ष्य कर, उससे मुक्ति पाने के लिए भक्ति के सिद्धांत को सरलता और सुगमता का रूप दिया। फिर भी जब इन्हें अनुभव हुआ कि जन हृदय में पूर्व संस्कार ज्यों कर त्यों बने हुए हैं तो इन्होंने कीर्तन, पद, पुराणों के लेखन एवं अनुवाद आदि रचनात्मक कार्यों के साथ एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग भी प्रारंभ किया। जिस प्रयोग का नाम था अंकिया नाटक। "शंकरदेव असमिया नाट्य–साहित्य के जनक हैं। उनके पूर्व असम में नाटक–साहित्य की कोई परंपरा नहीं मिलती है। असम में प्रचलित 'ओजापालि', 'ढुलिया', 'पुतुली' नृत्य इत्यादि की कुछ लोक–नाट्य परंपरा अवश्य रही है पर पूर्ण रूपेण नाटक की परंपरा शंकरदेव के कारण ही संभव हो सकी। उन्होंने श्रीकृष्ण की लीला–माला को श्रव्य–दृश्य रूप में प्रस्तुत कर जन मानस को आह्लादित करने के लिए नाट्य–विधा को अपनाया था। इनके नाटकों में एक अंक होने के कारण 'अंकिया नाट' या नाटक कहा जाता है। असम में अंकिया का पर्याय है 'भाओना'। महापुरुष शंकरदेव ने इन्हें 'नाटक' की संज्ञा दी है।"[2]

दृश्य काव्य में प्रत्यक्षानुभूति के साथ ही श्रव्यता का गुण भी विद्यमान रहता है। शंकरदेव इस तथ्य से अपरिचित नहीं थे कि चाक्षुष प्रत्यक्ष के द्वारा हृदय–पटल पर अंकित चित्र का प्रभाव जितना स्थाई होता है, उस अनुपात में उपदेश और अध्ययन का प्रभाव अत्यंत क्षीण सिद्ध होता है। प्रत्यक्ष–दर्शन से मानस पटल पर उसका रूप अंकित हो जाता है और जिसका पुनर्स्मरण भी शीघ्र ही किया जा सकता है। यही कारण था कि श्रीमंत शंकरदेव ने अपने सिद्धांत के प्रचार के लिए नाट्य–रूपों को अपनाया। "मनोरंजन के साथ–साथ वैष्णव नाटक का उद्देश्य था धार्मिक और नैतिक प्रकार की शिक्षा देना। इस उद्देश्य के लिए दृश्य–काव्य से अधिक उत्तम साधन और क्या हो सकता हैं, विशेषतः उन अपढ़ लोगों की शिक्षा के हेतु जिनके लिए 'काला अक्षर भैंस बराबर' है।"[3] ईश्वर के गुण कर्मों को कृत्रिम प्रसाधनों के उपयोग एवं अभिनय कला के माध्यम से जन समूहों में प्रदर्शित करने से भक्ति के प्रचार के साथ ही कुप्रभावों को विनाश करने का लक्ष्य भी अनायस ही सिद्ध हो जाता है। यही कारण है कि शंकरदेव ने नाट्य–रूपों को अपनाकर एक नवीन साहित्यिक परंपरा का सूत्रपात किया। नेमीचन्द्र जैन ने श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित "अंकियानाट जैसे धार्मिक नाट्यरूप को मध्यकालीन भारत में हिंदू जाति के 'आत्मप्रतिष्ठा' के उस अभियान के रूप में देखा है जिसका मुकाबला मुसलमान शासकों से था।"[4] नेमीचन्द्र जैन श्रीमंत शंकरदेव के नाटकों को धार्मिक भावना के सबसे ऊपर आ जाने के रूप में देखते हैं।

श्रीमंत शंकरदेव के नाटकों के आधार और प्रेरणा के बिंदु को डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' इस प्रकार स्पष्ट करते हैं, "धर्म प्रचारार्थ शंकरदेव ने काव्य–रचना के साथ–साथ नाट्य रचना भी की। उनके नाटकों का रचनाकाल मोटे तौर पर सन् 1540–1568 ई. पड़ता है। सभी नाटक गीत–संगीत–प्रधान और एक अंक वाले (अंकिया) हैं।... इनके रचना विधान और मंचन पर विचार करने से विदित होता है कि इनके उदय और विकास के मूल में निम्नांकित परंपराएं रहीं हैं। यथाः

1. ह्रासोंमुखी संस्कृत नाटकों की परंपरा।
2. संगीतक परंपरा।
3. गीत गोविंद की नृत्य–नाट और लीला–गान–परंपरा।
4. मध्यकालीन लोकनाट्यों की परंपरा।
5. स्थानीय लोकनृत्य–नाच–परंपरा।"[5]

शंकरदेव के समय में संस्कृत रंगमंच ह्रासोन्मुखी था। शंकरदेव के समक्ष विकल्प तो अनेक थे, पर उन्होंने बेझिझक भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र को अपने नाट्य–प्रयोग में स्थान दिया। संस्कृत के उपनिषद् एवं पुराण साहित्य का उन पर स्पष्ट प्रभाव तो है ही, कतिपय वैसे वैष्णव ग्रंथों का भी प्रभाव उनके साहित्य पर दिखाई देता है, जिनका प्रचलन अखिल भारतीय था। संस्कृत नाटक और रंगमंच का भी प्रत्यक्ष प्रभाव शंकरदेव के नाटकों पर देखा जा सकता है। लेकिन इससे बेहतर यह कहना उचित होगा कि संस्कृत रंगमंच के पतन के बाद शंकरदेव के नाटक, परंपरा के विकास की कड़ी जोड़ने हेतु नए संस्करण में उद्भत हुए। शंकरदेव के नाटक संस्कृत रंगमंच की नकल नहीं हैं। शंकरदेव ने अपने नाटकों में उन तत्वों का समावेश किया, जिन तत्वों से असम्बद्धता के कारण

भी संस्कृत रंगमंच का पतन हुआ था। ये थे स्थानीय लोक प्रचलित या लोक–रुचि की भाषा और स्थानीय कला की परंपरा को अनदेखा करना। "महापुरुष शंकरदेव का आविर्भाव संस्कृत नाटकों के ह्रास काल में ही हुआ था। वे पूर्वांचल में वैष्णव धर्म के उन्नायक थे और जन–प्रचलित साधनों द्वारा वैष्णव धर्म का प्रचार करना चाहते थे। ... इनके लिए उन्होंने तत्कालीन जन–समुदाय में प्रचलित नृत्य, गीत तथा मनोरंजन के साधनों को ढाँचे के रूप में ग्रहण किया और उनके साथ अनेक संस्कृत नाट्यनियमों का संयोजन करके अंकिया नाट का नवीन स्वरूप ढाला।"[6]

संस्कृत रंगमंच की परंपरा से "भाव, रचना–कौशल, अंकहीनता और सूत्रधार के निर्माण में शंकरदेव को पर्याप्त सहायता मिली होगी।"[7] साथ ही कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि "अंकिया नाटकों के विकास में उपरूपकों ने किसी–न–किसी रूप में योगदान अवश्य किया होगा।"[8]

भारतीय नाट्य परंपरा में संगीतक का विशिष्ट स्थान हैं, वो दूसरी बात है कि संगीतक को जितना महत्व मिलना चाहिए, उतना विद्वानों द्वारा 'संगीतक' को महत्व मिला नहीं। लोकनाट्य के विशिष्ट विद्वान जगदीशचंद्र माथुर परंपराशील नाटकों का उद्‌गम 'संगीतक' से मानते हैं। वो कहते हैं, "'संगीतक' ही वर्तमान आंचलिक नाट्य–शैलियों का मूल है।"[9] कुछ लोग 'संगीत' और 'संगीतक' को एक ही मान लेते हैं किंतु दोनों में बहुत अधिक अंतर है। 'संगीत' शब्द मूलरूप से वाद्य तथा वाद्य के साथ गाए जाने वाले के लिए प्रयोग में लाया जाता है। वहीं "'संगीतक' में सहगान और सहवाद्य–वादन के अतिरिक्त नृत्य, गीत, संवाद ये सभी तत्त्व मिलते हैं और जब रंगशाला में प्रेक्षकों के सम्मुख इनका प्रदर्शन हो तभी उन्हें संगीतक कहा गया है।"[10] संगीत तथा संगीतक में अंतर को इस प्रकार से समझा जा सकता है कि, "संगीत तो प्रेक्षागृह के अतिरिक्त भी प्रस्तुत होता था, किंतु संगीतक के लिए रंगशाला में प्रदर्शन अनिवार्य था।"[11] इस प्रकार कहा जा सकता है कि संगीतक के महत्वपूर्ण तत्त्व–गीत, वाद्य, नृत्य तथा रंगशाला हैं।

भाषा संगीतकों का विकास जगदीश चंद्र माथुर ने लगभग 1000 ई. से 1500 ई. तक माना है। वो अपनी पुस्तक में लिखते हैं, "केरल, मिथिला–नेपाल, असम, उड़ीसा, ब्रजमंडल एवं आंध्र–कर्नाटक में अनुकूल स्थानीय परिस्थितियों और नेतृत्व के फलस्वरूप इस विधा का विकास हुआ और इन्हीं क्षेत्रों से इनका विस्तार सन्निकट भाषा क्षेत्रों में हुआ।"[12]

संगीतक का प्राचीनतम उल्लेख डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल द्वारा संपादित 'चातुर्भाणी' में, वररुचि कृत 'उभयभिसरिका', शुभंकर के ग्रंथ 'संगीतदामोदर' में प्राप्त होता है। विद्यापति द्वारा भी संगीतक शब्द का प्रयोग किया जाना इस बात का प्रमाण है कि यह नाट्य का रूप विद्वतमंडल में स्वीकृत हो चुका था। श्रीमंत शंकरदेव ने भी अपनी रचनाओं में परंपराओं का निर्वहन बड़ी ही सूक्ष्मता पूर्वक करते हैं। "शिवसिंह और विद्यापति के बाद संगीतक और भाषा–नाटक के उन्नायक असम के महापुरुष शंकरदेव हुए जिन्हें इस शैली का शीर्षस्थ विधायक और सबसे अधिक मौलिक सृष्टा माना जाएगा। उन्होंने संगीतक रंगशाला को नया मोड़ दिया, भाषा नाटक को संस्कृत नाटकों के फ्रेम से हटाकर एक नवीन और निजी विधान निर्मित किया, संस्कृत और प्राकृत गद्य के स्थान पर भाषा–संवाद को बेधड़क होकर शामिल किया तथा उत्तरी और दक्षिणी भारत को अन्य संगीतक शैलियों से विशेषतः मथुरा, वृन्दावन की रासलीलाओं से अनेक तत्वों को ग्रहण किया। शंकरदेव ने भाषा नाटक को वस्तुतः सर्वसाधारण का कंठहार बना दिया।"[13]

इस प्रकार यह कहना उचित होगा कि, "शंकरदेव के अंकिया नाटक वस्तुतः भारतीय साहित्य की उस उपेक्षित अथवा अल्पज्ञान परंपरा की अगली कड़ी में पड़ते हैं जिसे 'संगीतक' के नाम से अभिहित किया जाता है।"[14] साथ ही साथ श्रीमंत शंकरदेव ने 'संगीतक' परंपरा को आगे बढाते हुए उसमें नए अध्याय जोड़े। 'संगीतक' की परंपरा को श्रीमंत ने भक्ति के अनुकूल बनाया। "शंकरदेव के पूर्व संगीतक केवल राजाश्रय तक ही सीमित था। उनकी कथावस्तु राम और कृष्ण के आख्यानों पर आधारित होती थी, पर उनमें कृष्ण पुरुषार्थी, रसिक आदि के रूप में ही चित्रित होते थे। राजाश्रयी संगीतक परंपरा को वैष्णवभक्ति के साधनरूप में परिवर्तित करना निश्चय ही एक चमत्कारिक कार्य था जिसे पूर्ण किया था शंकरदेव ने। शंकरदेव ने राजाश्रयी संगीतक को राजमहलों के कैद से जनता के लिए मुक्त किया। उसे धर्माश्रयी बनाया।"[15]

गीत गोविंद की लीला गान परंपरा भी विभिन्न नाट्यशैलियों की प्रेरणास्रोत सिद्ध हुई। "सूत्रधार पद्धति और संगीत परंपरा के आधार पर विकसित काव्य कृति 'गीत–गोविंद' नवीन नाट्य–परंपरा के विकास की दृष्टि से युग प्रवर्तक बना।"[16] जयदेव का गीतगोविंद भारतवर्ष की नाट्यपरंपरा में एक लोकप्रवर्तक काव्य के रूप में अवतीर्ण हुआ। श्रीमद्‌भागवत के दशम स्कंध के रास प्रसंग को नृत्य और संगीत से संबद्ध करके जयदेव ने न सिर्फ दृश्य प्रबंध का विकास किया, वरन् एक नवीन संवाद पद्धति को भी प्रचलित किया जिसमें संलाप और सूत्रधार प्रधान होते हैं। यह संवाद पद्धति तथा सूत्रधार की भूमिका शंकरदेव के अंकिया नाटकों में भी द्रष्टव्य होता है। इसका कारण यह है कि, "भ्रमणकाल में शंकरदेव ने इस परंपरा का निकट से परिचय प्राप्त किया होगा। अतः उनके लिए इससे अप्रभावित रहना असंभव था। ललित संगीत–नृत्य एवं सूत्रधार पद्धति इसकी विशिष्टता थी जो अंकिया नाटकों के लिए अनुकूल सिद्ध हुई। एकाध स्थान पर शंकरदेव ने गीत–गोविंद की पंक्ति सर्वथा अपरिवर्तित रूप में रखी है।"[17]

प्रो. कालीराम मेधी का मन्तव्य है कि भारतीय भाषा–नाटकों का प्रभाव किस सीमा तक असम के अंकिया नाट पर पड़ा है, इसका अनुसंधान करना कठिन अवश्य है। रासलीला, रामलीला, कथकली, भवाई आदि जन–नाट्य रूपों का प्रभाव इन नाटकों पर अंशमात्र भी नहीं है। बंगाल के यात्रा नाटकों का उद्‌भव आसाम के जन–नाटकों के पश्चात् हुआ है, अतः इसका भी प्रभाव स्वीकार नहीं किया जा सकता। शंकरदेव जिस समय तीर्थयात्रा कर रहे थे उस समय उमापति और विद्यापति के कीर्तनियाँ नाटक सफलतापूर्वक अभिनीत हो रहे थे और साथ ही उनकी कोमल कांत पदावली पर्णकुटी से लेकर राजप्रासाद तक गुंज रही थी। अतः संभवतः मिथिला की कीर्तनियाँ शैली के नाटकों का प्रभाव अंकिया नाट पर पड़ा हो।

किंतु इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध नहीं होता कि अंकिया नाट के पुरष्कर्ता शंकरदेव के कीर्तनियाँ नाटकों में कथोपकथन में संस्कृत–प्राकृत का व्यवहार हुआ है और केवल गीतों में मैथिली का। इसके विपरीत अंकिया नाट में सम्पूर्णतः ब्रजबुली ही व्यवहृत हुई है। एक अन्य अंतर सूत्रधार के स्वरूप का भी है। कीर्तनियाँ नाटकों में संस्कृत नाटक के सदृश प्रस्तावना के पश्चात् सूत्रधार पुनः रंगमंच पर नहीं आता, जब कि अंकिया नाट में वह सदा रंगमंच पर विद्यमान रहकर कथा के तारतम्य का निर्वाह करता रहता है।

इन दोनों नाट्य रूपों में केवल एक समानता है कि ये दोनों एकांकी होते हैं। अतः केवल इस सादृश्य के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि कीर्तनियाँ शैली के अनुकरण पर अंकिया नाट की रचना हुई है। अतएव उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर असंदिग्ध रूप से यह कहा जा सकता है कि भारतीय भाषाओं के नियमित नाट्य रूप में असम का अंकिया नाट प्राचीनतम है। असमी नाटक और असमी गद्य भारतीय भाषा–साहित्य में प्रथम स्थान प्राप्त करते हैं।

शंकरदेव ने विभिन्न स्थलों की यात्रा की थी और उन स्थलों के वैष्णव–आंदोलन से प्रेरणा ग्रहण करने के पश्चात् ही इन्होंने असम में इसका सूत्रपात किया था। प्रथम अध्याय में इसकी विस्तार से चर्चा हुई है। शंकरदेव से पूर्व नाटक लिखने तथा उसके अभिनय की सुव्यवस्थित परिपाटी असम में विद्यमान नहीं थी। इससे इतना तो अनुमान किया जा सकता है कि उत्तर भारत के, विशेषरूप से ब्रज क्षेत्र, मिथिला के तथा उड़ीसा के कृष्ण विषयक नाट्य रूपों को देखकर और उनसे प्रभावित होकर उन्होंने नाटकों की रचना एवं अभिनय द्वारा अपने धर्म का प्रचार प्रारंभ किया होगा। "बारह वर्षों (सन् 1481–1493 ई.) तक शंकरदेव ने उत्तर से दक्षिण तक फैले भारत के प्रमुख तीर्थों का भ्रमण किया था। वहीं की रीति–नीति, गीत–नृत्य, प्रदर्शन–अभिनय–सबको उन्होंने मनोयोग पूर्वक देखा समझा था। बंगाल के टप–कीर्तन, मगध के यम–पट्टक (यमपुरी नाटक) और पंवरिया नृत्य, मिथिला की यात्रा और कीर्तनिया नाटक, ब्रज के रास और धमार, राजस्थान के पाड़, गुजरात की भवाई, केरल की कुट्टी, कर्नाटक के यक्षगान इत्यादि की चित्ताकर्षक विशेषताएं उन्होंने सूक्ष्मता से परखी होंगी। संगीत और नाटक की विभिन्न शैलियाँ–झांकियों की लोकप्रियता और उनमें निहित भावोन्मेष–क्षमता का अंदाज उन्होंने किया होगा। फिर उन सबों का सम्मिलित विशेषताओं को अंकिया नाटकों में यदि उन्होंने सन्निविष्ट किया, तो आश्चर्य कैसा?"[18]

कुछ विद्वान शंकरदेव के नाटकों का प्रेरणा स्रोत मैथिल लोकनाट्य एवं मध्यकालीन मिथिला प्रदेश का भक्ति आंदोलन मानते हैं। इन विद्वानों में प्रमुख हैं प्रो. बी.के. बरुआ, जिनका मानना है कि शंकरदेव उनके परवर्ती वैष्णव नाट्यकारों के नाटकों की भाषा में अधिकांशतः मैथिली का पुट प्राप्त होता है। तीर्थ यात्रा के पूर्व शंकरदेव ने विशुद्ध असमिया भाषा में रचना प्रस्तुत की थी, किंतु इस समिश्रित भाषा को अकस्मात् अपनाया जाना एक आश्चर्यपूर्ण रहस्य ही कहा जाएगा। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि भाषा में दृढ़ता के साथ सर्व जन योग्यता भी विद्यमान थी। मध्यकाल में मिथिला प्रदेश इस वैष्णव आंदोलन का प्रधान केंद्र था और विद्यापति की संवेदनशील शब्दावली इस सिद्धांत के अनुकूल सिद्ध हुई। पर्याप्त साहित्यिक एवं ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कामरूप के कतिपय विद्वान और भक्तों ने मिथिला प्रदेश की यात्रा की तथा वहाँ की भाषा भी सीखी। एक प्रकार से असम का नवीन जागरण विद्यापति से ही प्रभावित रहा। कामरूप के भक्तों ने विद्यापति के अनुकरण पर ही रचनाएँ प्रस्तुत कीं। अधिकांशतः संभावना यही है कि उमापति के परिजात हरण नाटक के अभिनय को देखकर तथा उससे प्रभावित होकर ही शंकरदेव ने अपने नाटकों की रचना प्रस्तुत की।

इस तरह लोकनाट्य की परंपराओं की प्रेरणा और प्रभाव किसी न किसी रूप में श्रीमंत शंकरदेव के नाटकों में बड़ी सुविधा से खोजे जा सकते हैं। शंकरदेव ने समकालीन प्रचलित प्रत्येक नाट–योजना को अपनी समन्वयात्मक बुद्धि से अंकिया नाटकों में सन्निविष्ट करने की सफल चेष्टा की है।

प्रो. बी.के. बरुआ का कथन है कि अंकिया नाटक कथा–वस्तु के विन्यास एवं शैली से अधिकांशतः शास्त्रीय शैली का अनुवर्ती है। अतएव विभिन्न प्रभावों के अनुसंधान के लिए प्रस्तुत प्रसंग पर अंकिया नाटकों के स्वरूप के साथ ही उनके पूर्व प्रचलित असम के जन नाट्य रूपों पर संक्षेप में विचार कर लेना प्रासंगिक ही होगा। कृष्ण नारायण प्रसाद 'मागध' मानते है कि शंकरदेव के नाटकों पर स्थानीत लोकनृत्य परंपरा का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप में पड़ा है। उनका कहना है कि, "शंकरदेव कालीन असम में लोकरंजना और धार्मिक उत्सवों के विभिन्न रूप प्रचलित थे। नाच, धुलिया नाच, ओजापालि और देऊधनी नृत्य। यहाँ इनकी सुदीर्घ परंपराएं रहीं हैं। ... ओजापालि वृन्दावन और अभिनय की एक शैली विशेष थी। अंकिया नाटकों पर इनका सीधा प्रभाव पड़ा है।"[19]

असम में सामान्यतः अभिनय अथवा अभिव्यक्ति के लिए 'भाउना' शब्द का प्रयोग होता है। यह शब्द संभवतः 'भाव' से बना है जिसका अर्थ होता है दिखावा या अनुकरण और इसका संबंध स्पष्टतः हर्ष–शोकादि के व्यभिचारी भावों से रहा करता है। व्यावसायिक 'ढुलिया' के अश्लील एवं असभ्य प्रदर्शनों को भी 'भाव' कहा जाता है। धीरे– धीरे इस 'ढुलिया' की मंडली का प्रदर्शन लोकप्रिय बनता गया और विशेष सामाजिक एवं धार्मिक उत्सवों पर भी इन्हें आमंत्रित किया जाने लगा, जिस से इस प्रदर्शन का परिष्करण भी प्रारंभ हो गया। इस मंडली में वह व्यक्ति सम्मिलित हो सकता था जो ढोल बजा सके, मूक अभिनय के साथ–साथ छद्म नृत्य करने तथा नट के समान रस्सा पर चलने में निपुण हो। कालांतर में इस प्रदर्शन में अनेक परिवर्तन हुए, जिसके परिणाम स्वरूप दो रूपों का विकास हुआ, जिसे 'भावरिया' और 'ओजापाली' प्रदर्शन कहते हैं। ओजापाली के मुख्य दो अंग हैं – समूह गान और नृत्य। "इस प्रदर्शन में चार–पाँच व्यक्ति विभिन्न प्रकार के गीत गाते हैं। प्रधान गायक 'ओजा' कहलाता है और शेष व्यक्तियों को पाली की संज्ञा दी जाती है। गीत के पद को 'ओजा' आगे–आगे कहता है और सभी सहायक उसे दुहराते हैं। बीच–बीच में कभी–कभी कथोपकथन भी रहा करता है जिसके माध्यम से ओजा कथा–वस्तु एवं उसके तारतम्य का ज्ञान सामाजिकों को

कराता रहता है। नृत्य के साथ विभिन्न मुद्राओं का सुस्पष्ट अभिव्यक्तिकरण इस प्रदर्शन का मुख्य अंग है। इस में इस तथ्य को स्वीकार कर लिया गया है कि ईश्वर और नृत्य में अभिन्न संबंध है। जब इस मंडली के अभिनेता हस्त–मुद्राओं के द्वारा गीतों के भावों को प्रदर्शित कर उसे सामाजिकों तक पहुँचाते हैं तो उस प्रदर्शन में पूर्ण नाटकीयता विद्यमान रहती है और उसका प्रभाव भी नाटक के सदृश हुआ करता है।"[20] ओजापाली का संपूर्ण रूप धार्मिकता की भावना से परिपूर्ण रहता है। इसी ओजापाली प्रदर्शन से समयानुकूल परिवर्तन और परिष्कार के साथ अंकिया नाटक का विकास हुआ। श्रीमंत शंकरदेव की प्रारंभिक प्रेरणा अवश्य संस्कृत नाटक से मिली हो किंतु, "'ओझापालि' नृत्य जैसी स्थानीय रीतियों के प्रति वे उदासीन नहीं थे। इन नृत्यों की शिल्प–विधि में, चरित्रांकन और घटना–चक्र को छोड़, रंगमंच के बाकी सभी प्रारंभिक गुण मौजूद थे। सच पूछा जाए तो वैष्णव नाटक की इमारत किसी हद तक 'ओझापालि' नृत्यों की नींव से ही खड़ी की गई।... शंकरदेव ने संभवतः अपने नाटकों का कलेवर संस्कृत से लिया, और लोक–कला के तत्कालीन भंडार में पाए जाने वाले अभिनय, आदि की परंपराओं के रंग उसमें भर दिए। गानों, कथोपकथन और अंग संचालनों वाले उन लोकप्रिय सूक्ष्म नाटकों, 'ओझापालि' नृत्य से ही शंकरदेव के तत्वावधान में प्रायोजित रंगमंचीय नाट्य कला को प्रोत्साहन मिला होगा।"[21]

शंकरदेव को अपने क्षेत्र में वैष्णव–भक्ति का प्रचार प्रसार करना था, अतः यह नितांत आवश्यक था कि वे उस स्थल के जन–नाट्य–रूपों को भी अपनाते। अतएव ओजापालि का, विभिन्न उत्सवों में पड़ने वाले प्रभावों के आधार पर, परिष्कृत रूप ही अंकिया नाटकों में दृष्टिगत होता है। साथ ही साथ मध्यकालीन मैथिली नाटक, भारत की विभिन्न लोकनाट्य की परंपरा के साथ संगीतक और संस्कृत नाट्य परंपरा भी शंकरदेव के नाटकों की रचना के प्रेरणास्रोत सिद्ध हुए। शंकरदेव संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे, अतः वे अपने नाटकों में उस परंपरा के मोह का त्याग नहीं कर सके। इतना अवश्य है कि समयानुकूल परिष्करण के साथ ही शंकरदेव ने अपने नाटकों में उपस्थित किया है। "शंकरदेव के नाटकों की मूल प्रेरणा 'संगीतक' में ही खोजी जा सकती है। उपापति, विद्यापति और शंकरदेव में संगीतक ने अपना स्वतंत्र और स्थान–कालानुरूप विकास किया है। शंकरदेव के नाटक उपपति अथवा विद्यापति से अप्रभावित हैं। संस्कृत के ह्रासोन्मुखी नाटकों का प्रभाव भी उन पर लक्षित होता है। मध्यकालीन विभिन्न लोकधर्म नाट्य–योजनाओं और ओजापालि जैसे स्थानीय नृत्यों ने अंकिया नाटकों को मांसल बनाने में पूर्ण योगदान किया है।"[22]

श्रीमंत शंकरदेव ने जहाँ नाट्यशास्त्र एवं संस्कृत नाट्य परंपरा के साथ तद्युगीन भारतीय लोक कलाओं का सुंदर समन्वय अपने अंकिया नाट्य में किया हैं वहीं स्थानीय प्रचलित कलारूपों की उपेक्षा नहीं की। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शंकरदेव के समक्ष सृजन के कई विकल्प थे लेकिन उन्होंने न तो किसी परंपरा विशेष का पल्ला पकड़ा और न किसी की उपेक्षा की, सबके समन्वय और उचित सामंजस्य से ही नवीन नाट्यविधा को स्थापित किया। "कहा जाएगा कि ऊपर वर्णित सभी नाट्य–परंपराओं और रंजक विधाओं की उपयोगिता शंकरदेव के ध्यान में आई। जिस समाज में उन्हें एकशरणिया धर्म का प्रचार करना था, उनकी आंतरिक भावनाओं को उभारने की उनमें पर्याप्त आंतरिक क्षमता दिखलाई पड़ी और उन्होंने सबका मनोयोगपूर्वक अंकिया नाटकों में समन्वय और समाहार किया। संस्कृत के निष्णात पंडित होने के बावजूद उनका ज्ञान अथवा पंडिताउपन इसमें बाधक नहीं बना। परिणामतः उन्होंने न तो किसी परंपरा विशेष का पल्ला पकड़ा और न किसी को दुत्कारा ही, सबके समन्वय और उचित सामंजस्य से ही नवीन नाट्यविधा को जन्म दिया।"[23]

संदर्भः

1. हे सामाजिक – सुरेश अवस्थी, पृष्ठ – 15
2. श्रीमंत शंकरदेवः व्यक्तित्व और कृतित्व – डॉ. भूपेंद्र राय चौधरी, पृष्ठ – 48–49
3. असमिया साहित्य – हेम बरुआ, पृष्ठ – 84
4. भारतीय लोकनाट्य – डॉ. विशिष्ट नारायण त्रिपाठी, पृष्ठ – 24
5. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 463
6. महापुरुष शंकरदेव ब्रजबुली ग्रंथावली – सं.– डॉ. लक्ष्मीशंकर गुप्त, पृष्ठ – 18
7. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 464
8. प्राचीन भाषा नाटक – सं. – डॉ. दशरथ ओझा, जगदीशचंद्र माथुर, पृष्ठ – 22
9. परंपराशील नाट्य – जगदीश चंद्र माथुर, पृष्ठ – 10
10. परंपराशील नाट्य – जगदीश चंद्र माथुर, पृष्ठ – 10
11. परंपराशील नाट्य – जगदीश चंद्र माथुर, पृष्ठ – 10
12. परंपराशील नाट्य – जगदीश चंद्र माथुर, पृष्ठ – 13
13. प्राचीन भाषा नाटक – सं. – डॉ. दशरथ ओझा, जगदीशचंद्र माथुर, पृष्ठ – 18–19
14. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 464
15. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 467
16. नटरंग, अंक – 72, पृष्ठ – 69
17. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 437
18. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 468
19. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 469
20. अंकिया नाट – सं.–प्रो.बी.के. बरुआ, पृष्ठ – 9–10
21. असमिया साहित्य – हेम बरुआ, पृष्ठ – 84–85
22. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 469–470
23. महाकवि शंकरदेव : विचारक एवं समाज सुधारक – डॉ. कृष्ण नारायण प्रसाद मागध, पृष्ठ – 470

ISSN No. : 0970-9398

शंकरदेव और तुलसीदास की भक्ति-भावना

– प्रो. रामनारायण पटेल, दिल्ली विश्वविद्यालय एवं
– आशुतोष सिंह, शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत की संस्कृति–परंपरा में भक्ति–भावना अति प्राचीन है। प्राचीन ग्रंथो से यह स्पष्ट होता है कि पुराणों के पूर्व ही वेदों में भक्ति के बीजरूप विद्यमान रहे हैं। भारतीय भक्ति–साधना के पोषक ऋषि–महर्षियों ने भक्ति–पद्धति पर बहुत गंभीरतापूर्वक विचार किया है। भक्ति को परिपूर्णता प्रदान करने वाले आचार्य रामानंद के अनुसार, अनन्य भाव से भगवत्परायण होकर की जाने वाली उपाधि निर्मुक्त परमात्मसेवा ही 'भक्ति' है–

'उपाधिनिर्मुक्तमनेकभेदकं, भक्तिः संयुक्ता परमात्मसेवनम्।
अनन्यभावेन निर्णयं मानसं, महर्षिमुख्यैर्भगवत्परत्वतः।।

इसी तरह अन्य आचार्यों ने भी भगवान के श्रीचरणों में अनन्य प्रेम का होना भक्ति माना है। महर्षि शांडिल्य ने भक्ति को ईश्वर के प्रति परमानुरक्ति बताया है। उनके अनुसार 'परानुरक्तिरीश्वरे' ही भक्ति है।

सामान्यतः भक्ति के दो भेद स्वीकार किये जाते हैं– 1. साधनरूपा भक्ति और 2. साध्यरूपा भक्ति। इसमें से साधनरूपा भक्ति के पुनः दो वर्ग माने गये हैं– (क) नाम साधना और (ख) बीज साधना। लेकिन गुण के आधार पर भी साधनरूपा भक्ति के तीन भेद स्वीकार किए गये हैं– सात्विकी, राजसी और तामसी। वहीं श्रीमद्भागवत में भक्ति के नौ साधनों का उल्लेख मिलता है–

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।।[1]

शंकरदेव और तुलसीदास–दोनों की भक्ति नवधा भक्ति के अंतर्गत आती है लेकिन गुण के आधार पर विचार किया जाए तो इन्हें सात्विकी भक्ति इष्ट है। तुलसीदास ने जैसा कहा है–

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।[2]

इसी प्रकार शंकरदेव ने भी चारों वेदों के सार श्रीकृष्ण के चरणों में रत रहने की बात करते हैं–

"चारिओ बेदर इतो निज अर्थ।
तोमार पदे थकोक भक्ति।।"[3]

भगवान की उपासना के मार्ग की दृष्टि से शंकरदेव और तुलसीदास दोनों साधु–संतों की सेवा को सर्वाधिक महत्व प्रदान करते हैं। इनका मानना है कि साधु–संतों की संगति से व्यक्ति का मन निर्मल होता है और इससे भगवान के प्रति अनुराग उत्पन्न होता है। श्रीमंत शंकरदेव ने जैसे संतों के सान्निध्य लाभ और उनकी विशेषता बताते हुए उनके नेत्रों को सगुण–निर्गुण ब्रह्म के समान ज्ञान–दीप बताया है–'संत चक्षूसि सगुण निर्गुण ज्ञानादीनि।' और जिस प्रकार देव–दर्शन की अपेक्षा सन्तों के दर्शन को उन्होंने अधिक महत्वपूर्ण माना और उन्हें परमार्थ साधन में रत रहने वाला घोषित किया है–'देवाः स्वकार्य्य–साधनपराः साधवस्तु परानुग्रहपराः परमार्थश्च।'[4] उसी प्रकार तुलसीदास ने भी स्वीकार किया है कि बिना सत्संग के भक्ति प्राप्त नहीं होती–'बिनु सतसंग भक्ति नहिं कोई'[5] तथा 'बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।'[6] और उन्होंने यह भी कहा कि ईश्वर की कृपा से ही साधु–संगत की प्राप्ति होती है–'जब द्रवै दीनदयाल राघव साधु संगति पाइयै।'

वस्तुतः शंकरदेव और तुलसीदास जनमानस के प्रतिनिधि कवि हैं। लेकिन वे पहले भक्त हैं बाद में कवि। दोनों को भक्ति–हृदय मिला था। दोनों प्रमुखतः सगुण ब्रह्म के उपासक हैं। दोनों ने दर्शन और धर्म के मध्य भक्ति को स्थान दिया है। शंकरदेव ने कहा –

अन्य देव–देवी न करिबा सेव, न खाइबा प्रसाद तार।
मूर्तिको नचाइबा गृहों नपशिबा, भक्ति हैब व्यभिचार।।[7]

तुलसीदास भी श्रीराम के अनन्य भक्त हैं। वे तो श्रीकृष्ण के विग्रह के आगे यह हठ कर बैठते हैं कि–'तुलसी मस्तक तब नवै, जब धनुष बाण लेउ हाथ।'

शंकरदेव और तुलसीदास की भक्ति भावना की सबसे बड़ी विशेषता है कि उनकी भक्ति व्यक्ति और समाज– दोनों का कल्याण करने वाली है। कहने का आशय यह है कि उनकी भक्ति जीवन से विमुख नहीं है वह लोकोन्मुख है। जीवन को सुखी और सार्थक बनाने वाली है। इन्होंने न तो कभी संसार को क्षणभंगुर माना और न ही कभी मृत्यु के गीत गाए, वरन संसार में रहते हुए संसार के बंधनों से मुक्त होने की बात कही। 'कृष्णवस्तु भगवान स्वयं' शंकरदेव का मूल मंत्र था और चित्तवृत्तियों का निरोध उनके आचार–व्यवहार/दाम्पत्य प्रेम की गूढ़ता, प्रसन्नता और एक देव के प्रति निष्ठा का भाव उनकी भक्ति के केंद्र में है–'एक देउ, एक सेउ, एके बिना नाहि केउ।।' तुलसीदास भी कहते हैं–'ऐसी मूढ़ता या मन की। परहरि रामभगति सुरसरिता आस करत ओसकन की।'[8] वे यहां तक कहते हैं कि 'अबलौं

नसानी अब ना नसैहों।'[9] इसी तरह दोनों भक्त कवि व्यक्तित्व परिष्करण के लिए अहंकार का त्याग आवश्यक मानते हैं। उनके अनुसार भक्ति के लिए उदारता, नम्रता और मर्यादा का पालन अत्यंत आवश्यक है. इन्होंने भक्ति की कोटियां भी निर्धारित की हैं–उत्तम, मध्यम, प्राकृत और आचार भ्रष्ट भक्त। शंकर देव ने मध्यम भक्त के संबंध में लिखा है–

एकान्ते करय प्रेम यिटो ईश्वरत। मैत्रिक आचरे हरि भकत सबत।।
अज्ञक करूणा क्षमा करें बिपक्षत। सेहि जन जानिबा मध्यम भकत।।[10]

इसी तरह तुलसीदास ने भी– ज्ञानी, जिज्ञासु, अर्थार्थी और आर्त– इन चार प्रकार के भक्तों की चर्चा की है–'राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।।'[11] आर्त भक्त का उदाहरण देखिए–'जपहिं नामु जन आरत भारी।मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।।'[12] इस प्रकार देखा जाए तो शंकरदेव और तुलसी ने भक्ति के स्वरूप का सांगोपांग निरूपण किया है ठीक वैसे ही जैसे प्राचीन भारतीय मनीषियों ने वर्णन किया है।

शंकरदेव और तुलसीदास की भक्ति–भावना व्यक्तिगत साधना न होकर लोक–कल्याण से समन्वित है। उनकी भक्ति में समस्त सांसारिक मर्यादाओं और मार्गों का आदर्श अक्षुण्ण है जिसमें साधुमत और लोकमत दोनों का समन्वय है। तुलसी के मानस में अभिमानी काकभुशुण्डि और भगवान शिव का अभिशाप प्रसंग, चित्रकूट में महर्षि वशिष्ठ और निषाद राज मिलन–प्रकरण जैसे अनेक प्रसंग साधुमत और लोकमत के सुंदर उदाहरण हैं। इसी तरह वे शैव और वैष्णव मत में भी समन्वय स्थापित करते हैं। समन्वय का ऐसा ही भाव शंकरदेव की भक्ति में भी है। 'हरमोहन' में शिव के प्रति विष्णु की यह उक्ति दृष्टव्य है–

शुना शुना शूलपाणि जानो तुमि महाज्ञानी,
तरिला दुस्तर माया घोर।

तुमिसे तत्वक जाना नाहिं आर तुम बिना;
आओर अपर प्रिय मोर।[13]

'भागवत' में भी उन्होंने मार्कंडेय ऋषि के वृतांत द्वारा त्रिदेवों में समन्वय किया है–'एक मूर्ति जानो ब्रह्मा विष्णु त्रिनयन।'[14] तथा भगवान शंकर की यह उक्ति– 'मइ ब्रह्मा विष्णु आमि तिनउ ईश्वर'[15] इस संदर्भ में उल्लेख्य हैं। इतना ही नहीं, शंकरदेव ने तो देव स्तुति के साथ–साथ देवी पूजा पर भी आस्था प्रकट की है। 'भागवत' में शंकरदेव की गोपियां कृष्ण की प्राप्ति के लिए देवी कात्यायनी का व्रत करती हैं। कात्यायनी देवी भद्रकाली ही हैं। 'रुक्मिणीहरण' में रुक्मिणी के कृष्ण की प्राप्ति भवानी पूजन के पश्चात ही होती है। यह प्रसंग ठीक वैसे ही है, जैसे तुलसीदास ने 'मानस' में सीता जी के गौरी पूजन की चर्चा की है–'जय जय गिरिबर राज किशोरी। जय महेस मुख चंद चकोरि।' 'औरेषा वर्णन' में शंकर देव ने सुभद्रा को भी कात्यायनी देवी के रूप में स्तुति की है– 'तात पाछे मंत्रे सुभद्राक पूजि,प्रणामि करिब स्तुति।' इसी संदर्भ में नारी सम्मान अथवा समाज में नारी के प्रति विगर्हणा भाव को भी देखा जाना चाहिए। तुलसी के बारे में अक्सर यह बात की जाती है कि वह नारी निंदक थे और इस संबंध में उनकी इस उक्ति को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है– 'ढोल गंवार शूद्र, पशु, नारि।' परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि यह प्रसंग वर्ग–विशेष पर नहीं, वरन् चरित्र–विशेष पर है। इसी तरह शंकरदेव के संदर्भ में भी कहा जाता है कि उन्होंने– 'धीर नारी माया सर्व मयारो कुंठित' कहा है। परंतु उन्होंने यह स्पष्ट विधान किया है कि 'स्त्री–शूद्रे करे यदि आम्हात भकति, ताहात कहिबा इहो ज्ञान महामति।'

इस प्रकार समग्रतः कहा जा सकता है कि श्रीमंत शंकरदेव और गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति आराध्या के प्रति श्रद्धा मात्र नहीं है, बल्कि उनकी भक्ति एक ऐसी विराट चेतना की अनुभूति है जिसमें समस्त लोग के प्रति कल्याण की भावना निहित है।

संदर्भः

1. श्रीमद्भागवत महापुराण (7/5/23)
2. मानस, अयोध्याकाण्ड (दोहा–204)
3. कुरूक्षेत्र,170
4. शंकरदेव, भक्ति रत्नाकर 3/9
5. मानस, बालकाण्ड, (दोहा–57)
6. वही दोहा–57/3
7. शंकरदेव, भागवत, 2/1341
8. तुलसीदास, विनय–पत्रिका, पद–90
9. तुलसीदास, विनय पत्रिका, पद–105
10. शंकरदेव, नि.न.सि–81
11. तुलसीदास, मानस,1/21/3
12. वही, 1/21/3
13. शंकरदेव, कीर्तन,593
14. शंकरदेव,भागवत 12/436
15. वही,12/438

ISSN No. : 0970-9398

स्वतंत्रता आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत का योगदान

– प्रो. चन्दन कुमार
कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन एक दीर्घकालिक, बहुस्तरीय और बहुभाषिक संघर्ष था, जिसमें देश के प्रत्येक क्षेत्र ने अपनी ऐतिहासिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप योगदान दिया। प्राचीन समय में जब भारत में संचार साधनों का अभाव था, जीवन में एक स्थिरता विद्यमान थी। उस समय भी भारत की सीमाओं पर वीरों ने अपने पराक्रम की गाथाएँ लिखीं और राष्ट्र को विदेशी आक्रान्ताओं की कुदृष्टि से बचाये रखा। भारत का स्वाधीनता संग्राम, अंग्रेजी राजसत्ता के विरुद्ध भारतीय जनता के प्रतिरोध का जीवंत आख्यान है। स्वाधीनता संग्राम के समय पहली बार हमने अपने आत्मबल की सही अर्थों में पहचान की थी। इस समय हमने अपने समाज के सामान्य जनों को नायक बनाते हुए विदेशी सत्ता से संघर्ष किया था। अतः यह संघर्ष हमारे इतिहास का सबसे गौरवशाली पृष्ठ है। इसी समय हमने अपनी अस्मिता को पुनर्स्थापित करने हेतु अतीत के गौरवशाली प्रतीकों से प्रेरणा ग्रहण की थी। पूर्वोत्तर भारत की भौगोलिक दूरी, भाषाई–सांस्कृतिक विविधता और औपनिवेशिक प्रशासन की विशिष्ट नीतियों के कारण यहाँ का प्रतिरोध प्रायः स्थानीय जनजातीय और सांस्कृतिक रूपों में विकसित हुआ। यही कारण है कि मुख्यधारा के इतिहास में इसके अनेक आयाम उपेक्षित रह गए। भारत की स्वतंत्रता को समर्पित स्वाधीनता का संग्राम एक ऐसा महान यज्ञ था जिसमें हर भारतीय अस्मिता के प्रति समर्पित राष्ट्रभक्त ने निःस्वार्थ भाव से अपने प्राणों की आहुति दी थी। भारत भूमि पर कोई भी भाग आत्मोत्सर्ग के इस पर्व में पीछे नहीं रहा था। हमारा पूर्वोत्तर जिसे आज हम अष्टलक्ष्मी अर्थात 8 राज्यों के रूप में पहचानते हैं, इसके शूरवीरों ने भी स्वतंत्रता संग्राम में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई परंतु शेष भारत में प्रायः उनकी चर्चा नहीं हुई। अंग्रेजों के दमन चक्र का शिकार बनने के विरोध में पूर्वोत्तर के स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान का वर्णन करने से पूर्व पूर्वोत्तर की चर्चा करना समीचीन होगा। हमारा पूर्वोत्तर जिसका वर्णन रामायण, महाभारत और पुराणों से पूर्ववर्ती वैदिक काल में किरात देश के नाम से मिलता है, वह कामरूप और प्रयाग प्राग्ज्योतिषपुर के नाम से विश्व के प्राचीन साहित्य और यात्रा वर्णनों में समृद्ध प्रदेश के रूप में अपना स्थान रखता है।[1]

पूर्वोत्तर हमारे विवेचन में एक तिलिस्म की तरह उभरता है। यह सात बहनों और एक भाई यानी आठ राज्यों का एक विशिष्ट क्षेत्र है। यहाँ के सांस्कृतिक परिदृश्य विश्वविद्यालयों की साहित्यिक परिधि से बाहर रहे हैं। पर विश्वविद्यालय विश्व नहीं हैं। जो विश्वविद्यालयों से बाहर है वह विश्व में नहीं है यह मान लेना एक प्रकार की मूढ़ता है। इन आठ राज्यों से भारत के सांस्कृतिक राग के अविच्छिन सूत्र जुड़ते हैं। मैं तो वहां के सार्वजनिक जीवन में हूँ। साधू–संतों की परंपरा, भक्तों की परंपरा, मंदिर मठों की परंपरा, परिव्राजकों और संन्यासियों की परंपरा, सत्र और सत्राधिकारियों की परंपरा आदि इस देश को भारत बनाती है। इसी परंपरा की भाव–भूमि में विष्णुपुराण का एक वाक्य है जिससे भारतीयता के बिंदुओं की ओर इशारा हुआ होगा–

"उत्तरम यत समुद्रस्य, हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम,
वर्ष तत भारतं नए नाम भारती यत्र संतति।"

आसेतु हिमालय प्राग्ज्योतिषपुर (पूर्वोत्तर का सांस्कृतिक नाम) को जोड़ने का प्रथम तत्व ब्रह्मपुत्र के रूप में व्याख्यायित है और दूसरा तत्व हिमालय है। उत्तर–पूर्व के हिमालय से उत्तर–पश्चिम के हिमालय तक फैली हिमालयी संस्कृति के सूत्र भारतीय सांस्कृतिक जीवन की सातत्यता को व्यक्त करते हैं। अरुणाचल से लेकर हिमाचल तक का हिमालय और उसका सांस्कृतिक सामाजिक जीवन भारतीय राष्ट्र के बोध को परिभाषित करने का सूत्र देता है। यही स्थिति मैदान में ब्रह्मपुत्र की है। "भारत की विशाल बहुरंगी संस्कृति के सौंदर्य का अभिन्न तथा अनन्य भाग है – पूर्वोत्तर प्रदेश। अपनी मनोहरी प्राकृतिक छटा के मध्य सुरीले–सुरम्य लोकगीतों और अपनी अनेकों भाषा–बोलियों में रचित मौखिक–लिखित साहित्य के माध्यम से इस प्रदेश के सभी राज्यों ने तथा इन राज्यों की आदिवासी जनजातियों ने भारत के भाषिक साहित्य के आगार को विविधता, व्यापकता के साथ बहुमुखी रंजकता भी प्रदान की है। भारत की राष्ट्रीय संस्कृति के विकास में पूर्वोत्तर की अप्रतिम साहित्य धाराएं प्राचीनकाल से अपना दायित्व समर्पित करती आई हैं।"[2] पूर्वोत्तर के सांस्कृतिक राग को अगर समझना हो तो असम को, यहाँ के सांस्कृतिक–सामाजिक जीवन को, धार्मिक मूल्यबोध को समझना होगा।

कर्मठता जीवन की विषमता का प्रतिफल है। पूर्वोत्तर भारत के वनवासी बंधुओं का जीवन इस बात का साक्षी रहा है कि व्यक्ति अपने जीवन में धीरोदात्त गुणों के साथ वीरवृत्ति का आधान विषमताओं के मध्य रहकर करता है। भौगोलिक स्थितियों के प्रतिकूलन में भी यहाँ के निवासियों ने अपनी जीवनधर्मिता को स्थिर रखा है। अतः पूर्वोत्तर के वनांचलों में भारतीय

संस्कृति की वीर भावना के एक भिन्न रूप के दर्शन होते हैं। पौराणिक कथानकों में प्राग्ज्योतिषपुर और मणिपुर के वीर योद्धाओं एवं पराक्रमी राजाओं के आदर्श चरित्रों के दर्शन किये जा सकते हैं। इन राजाओं की वीरगाथाएँ भारतवर्ष के कोने–कोने में व्याप्त थीं। प्रकृति के साहचर्य से यहाँ के लोगों में स्वातंत्र्य भावना का विकास हुआ। उन्होंने स्वावलंबी जीवन जीने और प्रकृति की अधिसत्ता के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति केन्द्रित सत्ता की अधीनता स्वीकार नहीं की। यहाँ की लोकसंस्कृति में प्रकृति के स्वाधीन रूपों की प्रतिष्ठा विद्यमान है। पूर्वोत्तर के लोकाख्यानों में स्वतंत्रता का ध्येय लेकर संघर्ष करने वाले वीरों का चरित्र वर्णित किया गया है। ब्रिटिश शासन ने पूर्वोत्तर को रणनीतिक सीमा–क्षेत्र, कच्चे माल के स्रोत और प्रशासनिक प्रयोगशाला के रूप में देखा। चाय बागानों की स्थापना, आंतरिक सीमा रेखाएँ, मिशनरी गतिविधियाँ और दमनकारी कर–प्रणालियाँ इन सबने स्थानीय समाजों में असंतोष को जन्म दिया। यह असंतोष समय के साथ संगठित प्रतिरोध में बदला, जिसने अखिल भारतीय आंदोलनों से संवाद स्थापित किया। पूर्वोत्तर भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता का विस्तार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में तीव्रता से हुआ। 1826 ई. में सम्पन्न यांडाबू संधि इस क्षेत्र के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुई, जिसके परिणामस्वरूप असम पर अंग्रेज़ों का औपचारिक नियंत्रण स्थापित हो गया। "यह संधि 24 फरवरी 1826 को अवा (वर्तमान म्यांमार और आसपास का क्षेत्र) के राजा और अंग्रेजों के बीच संपन्न हुई थी। इस संधि के तहत, असम को बर्मा (जो उस समय असम पर अस्थायी रूप से नियंत्रण में था) द्वारा अंग्रेजों को सौंप दिया गया था।"[3] इस संधि के बाद ब्रिटिश प्रशासन ने धीरे–धीरे अपनी राजनीतिक और सैन्य शक्ति का विस्तार करते हुए मणिपुर, खासी–जैंतिया पहाड़ियों, नागा क्षेत्रों तथा लुशाई पहाड़ियों को भी अपने अधीन कर लिया। "एक ब्रिटिश अभियान दल ने भी लुशाई पहाड़ियों का दौरा किया। हालाँकि, 1888 में इस अभियान दल को पकड़ लिया गया और लेफ्टिनेंट जे. एफ. स्टीवर्ट को जनजाति द्वारा मार दिया गया। अपने सेनापति की हत्या से अंग्रेज चिंतित हो गए और उन्होंने जवाबी कार्रवाई की। अंग्रेजों ने 1889 से 1890 के दौरान कई अभियान चलाए और अंततः ऐजल पर्वतमाला पर एक स्थायी चौकी स्थापित करने में सफल रहे। कई अभियान चलाए गए और 1890 में अंग्रेजों ने लुशाई पहाड़ियों पर कब्जा कर लिया। लुशाई पहाड़ियों पर कब्ज़ा करने के बाद, अंग्रेजों ने इस क्षेत्र को उत्तरी लुशाई और लुशाई में विभाजित कर दिया। उत्तरी लुशाई असम का हिस्सा बन गया, जबकि दक्षिणी लुशाई बंगाल से जुड़ गया।"[4] इस प्रक्रिया में कई स्थानों पर स्थानीय शासकों और जनजातीय समुदायों के साथ संघर्ष हुए, जिन्हें ब्रिटिश अभिलेखों में प्रायः 'शांतिपूर्ण समावेशन' के रूप में प्रस्तुत किया गया, जबकि वास्तविकता में यह औपनिवेशिक वर्चस्व की एक कठोर प्रक्रिया थी। "गारो पहाड़ियों का एक हिस्सा, जो बंगाल का भाग था, गोलपारा और सिलहट सहित 1765 में ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंप दिया गया था। इस प्रकार, अठारहवीं शताब्दी में असम, अहोम साम्राज्य के विलय से बहुत पहले ही ब्रिटिश क्षेत्र का हिस्सा बन चुका था।"[5] ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही पूर्वोत्तर भारत की पारंपरिक सामाजिक–आर्थिक संरचना में गहरे परिवर्तन आरंभ हो गए। अंग्रेज़ों ने इस क्षेत्र को मुख्यतः आर्थिक संसाधनों के स्रोत के रूप में देखा। असम में चाय–उद्योग का तीव्र विकास हुआ, जिसके लिए विशाल भू– भाग अधिग्रहित किए गए और बाहरी श्रमिकों की जबरन भर्ती की गई। इसके साथ–साथ वनों के अंधाधुंध दोहन ने स्थानीय जनजातियों की आजीविका और जीवन–शैली को गंभीर रूप से प्रभावित किया। "लुशाई पहाड़ियों के दोनों क्षेत्रों में ब्रिटिश प्रशासन के खिलाफ कई विद्रोह हुए। इन विद्रोहों को अंग्रेजों ने दबा दिया। 1890 में, उत्तरी लुशाई के गांवों पर अंग्रेजों का पूर्ण नियंत्रण हो गया और पूर्वी लुशाई पर 1892 में नियंत्रण कर लिया गया।"[6] पारंपरिक भूमि–अधिकारों की उपेक्षा और नई कर–प्रणालियों ने ग्रामीण और जनजातीय समाजों में असंतोष को और अधिक गहरा किया। प्रशासनिक दृष्टि से भी ब्रिटिश शासन ने पूर्वोत्तर भारत को शेष भारत से अलग रखने की नीति अपनाई। 'एक्सक्लूडेड एरिया' और 'पार्शियली एक्सक्लूडेड एरिया' जैसी व्यवस्थाओं के माध्यम से इस क्षेत्र को राजनीतिक रूप से अलग–थलग रखा गया। यद्यपि औपनिवेशिक सत्ता ने इसे स्थानीय परंपराओं की रक्षा के रूप में प्रस्तुत किया, पर वास्तव में यह नीति राजनीतिक चेतना के विकास को नियंत्रित करने और औपनिवेशिक हितों की रक्षा करने का एक साधन थी। इस प्रशासनिक अलगाव ने पूर्वोत्तर भारत के लोगों को राष्ट्रीय राजनीति की मुख्यधारा में रखने का प्रयास किया। फलस्वरूप अब संग्राम होना तय हो गया। यह इतिहास का पहला संग्राम था जिसमें समस्त भारत के लोगों ने अपने आपसी मतभेदों का त्याग करते हुए राष्ट्रभावना से अभिभूत होकर विदेशी सत्ता से युद्ध किया था। यह युद्ध हिंसक भी था और अहिंसक भी, वैचारिक भी था और सांस्कृतिक भी, आर्थिक भी था और सामाजिक भी। 'आसिन्धुपर्यन्त' समस्त भारतीय औपनिवेशिक दासता से मुक्ति तथा नव भारत के निर्माण हेतु अपनी सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित कर रहे थे। इस स्वाधीनता संग्राम में पूर्वोत्तर क्षेत्र की भूमिका भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में सत्ता–केंद्रित इतिहास लेखकों ने पूर्वोत्तर भारत की निरंतर उपेक्षा की। इसी कारण यहाँ के लोगों की महनीय कीर्ति गाथाएँ भारत के गौरवशाली इतिहास का भाग बनने से वंचित रह गयीं किंतु पूर्वोत्तर के अंचलों में आज भी उनकी पुण्य परंपरा का प्रत्यक्ष दर्शन किया जा सकता है। पूर्वोत्तर भारत की नैसर्गिक वन–संपदा के प्रति लालायित विदेशियों ने निरंतर इसे अपना उपनिवेश बनाना चाहा। स्वाधीनता संग्राम के समय पूर्वोत्तर में यातायात एवं संचार साधनों का अभाव था; किंतु ऐसे कठिन समय में भी यहाँ पर स्वाधीनता हेतु अनेक लड़ाइयाँ लड़ी गयीं।

असम की पावन धरती पर स्वतंत्रता–संग्राम केवल राजनीतिक संग्राम नहीं, अपितु आत्मसम्मान, सांस्कृतिक अस्मिता और स्वाधीनता की चेतना का विराट उद्‌गार था। इस संग्राम में अनेक वीर–वीरांगनाओं ने अपने प्राणों का उत्सर्ग कर इतिहास को आलोकित किया। 1828 में गोमधर कोनवार द्वारा

ब्रिटिश शासन के विरुद्ध किया गया सशस्त्र विद्रोह असमिया आत्मनिर्णय की प्रथम उद्घोषणा बना। "आज असम के इतिहास में गोमधर कोनवार साहस और दृढ़ विश्वास के प्रतीक के रूप में जाने जाते हैं। उनका विद्रोह, यद्यपि बाद के राष्ट्रीय आंदोलनों की तुलना में छोटा था, फिर भी अन्याय और विदेशी उत्पीड़न के विरुद्ध प्रतिरोध का एक उदाहरण स्थापित किया। अपनी अनूठी संस्कृति और भाषा के लिए प्रसिद्ध इस भूमि में, कोनवार के कार्यों ने आत्मनिर्णय के महत्व और अत्याचार के विरुद्ध खड़े होने की आवश्यकता को पुनः स्थापित किया।"[7] इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए पियोली फूकन ने 1830 में औपनिवेशिक सत्ता को चुनौती दी और बलिदान देकर प्रतिरोध की अमिट विरासत छोड़ी। "पियोली फुकन को मृत्युदंड दिया गया और उन्होंने निडरता और गरिमा के साथ अपनी फांसी का सामना किया। 1830 में उनकी शहादत ने असमिया मानस पर गहरी छाप छोड़ी। वे प्रतिरोध के प्रतीक बन गए और लोकगीतों और कहानियों में उन्हें याद किया जाता है।"[8] 1857 के महासंग्राम में मणिराम दीवान ने अहोम राजसत्ता की पुनर्स्थापना के उद्देश्य से विद्रोह का नेतृत्व किया और स्वतंत्रता हेतु प्राणार्पण कर असमिया स्वाभिमान का प्रतीक बने। "मणिराम ने अगस्त 1857 में अहोम राजा कंदरपेश्वर सिंह के शासन को पुनर्स्थापित करने के इरादे से एक विद्रोह की कल्पना की और शिवसागर और डिब्रूगढ़ को अंग्रेजों से मुक्त कराने की योजना बनाई। उन्होंने इस योजना को अंजाम देने के लिए अपने साथी पियाली बरुआ का समर्थन प्राप्त किया। मणिराम ने नेताओं को पत्र भेजे, लेकिन दुर्भाग्य से वे अंग्रेजों द्वारा रोक लिए गए और उन्हें योजना का पता चल गया। मणिराम को उनके साथी पियाली बरुआ के साथ हिरासत में ले लिया गया और जोरहाट की जेल में डाल दिया गया। मुकदमा 26 फरवरी 1858 को चला और मणिराम और पियाली बरुआ को जोरहाट की केंद्रीय जेल में सार्वजनिक रूप से फांसी दे दी गई।"[9] बीसवीं शताब्दी में यह चेतना साहित्य, संगठन और जनांदोलन के रूप में विकसित हुई। अंबिकागिरी रायचौधरी अपनी काव्य–प्रतिभा और सक्रियता से औपनिवेशिक अन्याय का प्रतिकार करते हुए असमिया संस्कृति, न्याय और स्वाधीनता की मुखर वाणी बने। "उनकी सबसे प्रभावशाली साहित्यिक रचनाओं में से एक 1909 में मासिक पत्रिका 'असम बंधु' की स्थापना थी, जिसने राष्ट्रवादी विचारों, सांस्कृतिक पुनरुद्धार और औपनिवेशिक नीतियों की आलोचनाओं के लिए मंच प्रदान किया। अपने लेखन के माध्यम से, रायचौधरी ने असमिया पहचान पर गर्व जगाने और स्वतंत्रता आंदोलन के लिए समर्थन जुटाने का प्रयास किया। उनकी काव्य रचनाएँ, जैसे 'तुमी डांगोर नोहोउ' 'मुकुटा' और 'डेका असोमिया' जैसे संग्रह, देशभक्ति को गीतात्मक सौंदर्य के साथ जोड़ते हैं, जिससे यह विचार पुष्ट होता है कि साहित्य की भी स्वाधीनता आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका है। अंबिकागिरी रायचौधरी की सक्रियता 1920 और 1930 के दशक के असहयोग आंदोलन और सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान अपने चरम पर पहुंची। वे ब्रिटिश नीतियों के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों में अग्रणी थे, जिन्होंने असमिया संस्कृति, भाषा और अर्थव्यवस्था को हाशिए पर धकेल दिया था। एक कट्टर गांधीवाद के रूप में, उन्होंने स्वदेशी का समर्थन किया, स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा दिया और आर्थिक प्रतिरोध के रूप में ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार किया।"[10] हेम बरुआ 'त्यागबीर' के रूप में स्वतंत्रता, कृषक अधिकारों और सांस्कृतिक संरक्षण के लिए सतत संघर्षरत रहे। "हेम बरुआ का स्वतंत्रता आंदोलन में प्रवेश महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन के आह्वान के बाद देशव्यापी प्रतिरोध की लहर के साथ हुआ। गांधी के सत्याग्रह और अहिंसा के सिद्धांतों से प्रेरित होकर, बरुआ ने असम की जनता को स्वतंत्रता संग्राम में बड़े पैमाने पर भाग लेने के लिए संगठित करने का बीड़ा उठाया।"[11] गोपीनाथ बोरदोलोई ने लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति अडिग रहते हुए असम की विशिष्ट पहचान की रक्षा की और ब्रिटिश सत्ता को निर्भीक चुनौती दी। "सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930–1934) के दौरान, बोरदोलोई ने कई प्रदर्शनों का नेतृत्व किया और उपनिवेशवाद विरोधी प्रदर्शनों में भाग लेने के कारण ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा उन्हें कई बार जेल में डाला गया। कारावास और दमन का सामना करने के बावजूद, वे अहिंसा और संवैधानिक तरीकों में अपने विश्वास पर अडिग रहे। 1947 में स्वतंत्रता की शुरुआत के साथ ही, गोपीनाथ बोरदोलोई असम के पहले मुख्यमंत्री बने। इस भूमिका में उन्होंने अपनी जनता के कल्याण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को जारी रखा। बोरदोलोई के मुख्यमंत्री कार्यकाल में कई प्रगतिशील सुधार हुए, जिनमें भूमि सुधार, शिक्षा का विकास और आदिवासी समुदायों के अधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से बनाई गई नीतियां शामिल हैं।"[12] भारत छोड़ो आंदोलन में असम की नारी–शक्ति अद्वितीय रूप से प्रकट हुई। कनकलता बरुआ ने ध्वजारोहण जुलूस का नेतृत्व करते हुए वीरगति प्राप्त की। "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा अगस्त 1942 में शुरू किए गए भारत छोड़ो आंदोलन में अंग्रेजों से भारत को तुरंत छोड़ने की मांग की गई थी। असम में, आंदोलन ने तेजी से गति पकड़ी, और कस्बों और गांवों में विरोध प्रदर्शन, हड़तालें और सविनय अवज्ञा के कार्य आयोजित किए गए। 20 सितंबर 1942 को, गोहपुर के लोगों ने, जहाँ कनकलता स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग ले रही थीं, स्थानीय पुलिस स्टेशन पर भारतीय राष्ट्रीय ध्वज फहराने के लिए एक जुलूस निकाला। यह कार्य प्रतीकात्मक और क्रांतिकारी दोनों था; यह ब्रिटिश सत्ता के लिए एक सीधी चुनौती थी, एक घोषणा थी कि असम के लोग स्वयं को भावना और कर्म दोनों में स्वतंत्र मानते हैं।"[13] भोगेश्वरी फुकनानी ने राष्ट्रीय ध्वज की रक्षा करते हुए तथा तिलेश्वरी बरुआ ने 1942 के आंदोलन में अपने प्राणों का बलिदान देकर स्त्री–साहस की अमर मिसाल प्रस्तुत की। "सन् 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन, अंग्रेजों के खिलाफ जन विद्रोह का आह्वान था, जिसकी गूंज पूरे देश में सुनाई दी और असम के सुदूर कोनों तक भी पहुंची। इस आंदोलन के दौरान जन–प्रदर्शनों में तेजी आई, जिसमें समाज के हर वर्ग के लोगों ने ब्रिटिश शासन के अंत की मांग की। पचास वर्ष से अधिक आयु होने के बावजूद, भोगेश्वरी फुकनानी इन प्रदर्शनों में अग्रणी भूमिका निभा रही थीं। "टाइलेश्वरी ने सशस्त्र औपनिवेशिक पुलिस के सामने गाँव वालों का नेतृत्व करते हुए तिरंगा झंडा फहराया। धमकियों और हिंसा से बेपरवाह होकर वह दृढ़ता से

खड़ी रहीं, उनकी आवाज़ में स्वतंत्रता की माँग गूंज रही थी।"[14] मंगरी ओरंग ने महिलाओं को संगठित कर स्वदेशी अधिकारों के लिए संघर्ष किया। "मंगरी ने अन्यायपूर्ण करों को समाप्त करने और स्वदेशी लोगों के भूमि अधिकारों की बहाली की मांग को लेकर विरोध प्रदर्शनों का नेतृत्व किया। इन प्रदर्शनों को अक्सर गंभीर दमन का सामना करना पड़ा; औपनिवेशिक अधिकारियों ने असहमति को दबाने के लिए बल का प्रयोग किया, और नेताओं को अक्सर गिरफ्तार या प्रताड़ित किया गया। फिर भी, मंगरी ओरंग ने अपने प्रयासों को जारी रखा, गुप्त बैठकें आयोजित कीं, पर्चे बांटे और स्थानीय नेताओं तथा व्यापक राष्ट्रीय आंदोलन के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य किया।"[15] चंद्रप्रभा सैकियानी ने स्त्री–शिक्षा, अधिकार और राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए आजीवन सक्रिय रहकर सामाजिक जागरण को नई दिशा दी। "राष्ट्रीय आंदोलन के गति पकड़ने के साथ ही चंद्रप्रभा सैकियानी असम के ब्रिटिश–विरोधी आंदोलनों में एक प्रमुख चेहरा बन गईं। उन्होंने महात्मा गांधी के नेतृत्व में चले असहयोग आंदोलन (1920–22) में सक्रिय रूप से भाग लिया और पुलिस दमन तथा कारावास का सामना किया। उनके भाषणों ने सैकड़ों असमिया पुरुषों और महिलाओं को आंदोलन में शामिल होने के लिए प्रेरित किया और वे अधिकारियों का सीधे सामना करने से भी नहीं डरती थीं।"[16] गांधीवादी पथ पर चलने वाले कुशल कोनवार ने अहिंसक संघर्ष में भाग लेकर अन्यायपूर्ण मृत्युदंड सहा और नैतिक साहस का प्रतीक बने। "20वीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में पूरे भारत में राष्ट्रवादी भावना का तीव्र उभार देखा गया। अपनी अनूठी सांस्कृतिक पहचान और परंपराओं के साथ असम भी परिवर्तन की इस लहर से अछूता नहीं रहा। असहयोग आंदोलन और गांधीवादी विचारधारा से प्रेरित अन्य अभियानों में असम के युवाओं ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। इसी दौरान कुशल कोनवार ने राजनीतिक मंच पर कदम रखा। कुशल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल हुए और स्वशासन के लिए कई अभियानों में सक्रिय रूप से भाग लिया। वे गांधीवादी सिद्धांतों में दृढ़ विश्वास रखते थे और शांतिपूर्ण समाधान की वकालत करते थे।"[17] इस प्रकार असम का स्वतंत्रता संग्राम वीरता, बलिदान, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक परिवर्तन का समन्वित इतिहास है, जिसमें इन सभी स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान राष्ट्र की स्वाधीनता–गाथा में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

अरुणाचल प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के मध्य में अंग्रेजों द्वारा पुलिस चौकियाँ बनाने का विरोध करते हुए स्वाधीनता आंदोलन की शुरुआत हुई। धीरे–धीरे अंग्रेजों ने यहाँ की भूमि पर अपना नियंत्रण बढ़ाना प्रारंभ कर दिया। पासीघाट के यंगरु गाँव के मुखिया मातमुर जमोह ने केबाँ गाँव में अंग्रेजों के विरुद्ध एक सैन्यदल का निर्माण किया। अंग्रेज अधिकारी मि. नोमेल विलियम्सन के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने इनसे युद्ध किया। कठिन संघर्ष के बीच 31 मार्च सन् 1911 ई. को मातमुर जमोह एवं उसके साथियों ने मि. नोमेल विलियम्सन एवं डॉ. ग्रेगरसन जैसे अंग्रेज अधिकारियों समेत 42 सिपाहियों को मौत के घाट उतार दिया। "अंग्रेजों ने आदिवासियों को बिना कोई पैसा दिए मजदूरों और कुलियों के रूप में अपने सामान की ढुलाई के लिए इस्तेमाल किया और इस प्रकार उनका शोषण किया। आदिवासियों से छोटे–मोटे काम भी करवाए गए। अंग्रेजों ने आदिवासियों से अपनी श्रेष्ठता साबित करने की कोशिश की और इस तरह उनका अपमान किया। मार्च 1911 में, नोएल विलियमसन, डॉ. जे.डी. ग्रेगर्सन और 44 अन्य लोगों ने आदि पहाड़ियों का दौरा किया। उसी समय मतमुर ने अपने साथियों के साथ मिलकर उनकी हत्या की साजिश रची। उन्होंने गुप्त रूप से योजना बनाई और रोइंग और केबांग गांवों के कुछ लोगों का समर्थन हासिल किया। 31 मार्च 1911 को, मातमुर ने अपने मित्रों नामू नोनांग और लुनरुंग तामुक के साथ मिलकर विलियमसन और उसके कुलियों के दल को मार डाला। केबांग से उसके अन्य परिचितों ने सिसेन नदी के किनारे डॉ. ग्रेगोर्सन और उसके कुलियों को मार डाला।"[18] अन्ततः अक्टूबर, 1911 ई. में मेजर जनरल हेमिल्टन बाओर ने विद्रोहियों को कैद करके अंडमान जेल भेज दिया। स्वाधीनता संग्राम की संघर्ष–परंपरा में यहाँ पर ताजी मीदेरिन का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिन्होंने सन 1905 ई. में विक्रान्त नदी के तट पर तीन अंग्रेज अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया था। अंग्रेजों ने उन्हें गिरफ्तार करके सन् 1918 ई. में फाँसी की सजा सुना दी। अरुणाचल प्रदेश में स्वाधीनता–संघर्ष की उदारवादी धारा के प्रवर्तक संत मीजे रीबा थे। "स्वतंत्रता आंदोलन में रीबा की प्रत्यक्ष भागीदारी ने जल्द ही औपनिवेशिक अधिकारियों को नाराज कर दिया। उन्हें उनकी गतिविधियों के लिए अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया और कई महीने जेल में बिताने पड़े। कारावास के दौरान, मोजे रीबा ने कठोर परिस्थितियों का सामना किया। फिर भी, उनका हौसला नहीं टूटा और उनका संकल्प और भी मजबूत हो गया।"[19] इन्होंने अरुणाचल में कांग्रेस के स्वाधीनता आंदोलन को गति प्रदान की। नगालैंड में चाय उत्पादन पर राजस्व वसूली को लेकर अंग्रेजों से नगाओं का विवाद प्रारंभ हुआ। 1841 ई. में विफीमा नामक स्थान पर दौरे से लौट रहे सिपाहियों का नगाओं ने वध कर दिया। इस घटना से क्रोधित होकर लेफ्टिनेंट कर्नल फोकुडट ने 10 दिसम्बर, 1850 ई. को नगाओं के खोनोमा गाँव पर आक्रमण कर दिया। सोलह घण्टे तक ग्रामवासी अंग्रेजों से युद्ध करते रहे किन्तु शस्त्रों की कमी होने के कारण वे मैदान छोड़ने को विवश हो गये। अंग्रेजों ने उनके घरों में आग लगा दी। खोनोमा और मेजोमा गावों के वीर अंजामी निरंतर युद्ध करते रहे। अन्ततः अंग्रेजों को विवश होकर सामगुटिंग से अपनी चौकी हटानी पड़ी। "हेराका आंदोलन ने तेज़ी से गति पकड़ी और हज़ारों ज़ेलियांग्रोंग नागा कंबिरोन स्थित जदोनांग के मुख्यालय में एकत्रित हुए। उनके अनुयायियों ने मंदिर बनवाए, सामूहिक प्रार्थनाएँ आयोजित कीं और खुले तौर पर औपनिवेशिक सत्ता का विरोध किया।"[20] नगाओं के इतिहास में स्वतंत्रता के सबसे प्रभावशाली नायक के रूप में जादोनांग का नाम लिया जाता है। उन्होंने आदिवासी युवकों के मध्य स्वातंत्र्य–भावना का विकास किया। रानी गाइडिन्ल्यू ने स्थानीय युवतियों को एकत्र करके एक सैन्य टुकड़ी का निर्माण किया। इन सैन्य टुकड़ियों के नायक लुरींगुपु अर्थात् 'मुक्तिदाता' कहे

जाते थे। जादोनांग के देशभक्तिपूर्ण कार्यों से कुपित होकर ब्रिटिश सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया एवं षड्यंत्र के तहत मुकदमा चलाकर 29 अगस्त 1931 को उन्हें फाँसी दे दी गयी। रानी गाइडिन्ल्यू को आजीवन कारावास की सजा सुनायी गयी। "उन्होंने हैपो जादोनांग द्वारा गठित 'हेराका आंदोलन' में भाग लिया, जो संयोगवश गैडिनलिउ के चचेरे भाई थे। जादोनांग नागाओं के आध्यात्मिक नेता थे। आध्यात्मिक गतिविधियों के अलावा, हेराका आंदोलन ब्रिटिश शासन के घोर विरोधी था। 1931 में एक फर्जी मुकदमे के बाद जादोनांग की गिरफ्तारी और फांसी के कारण हेराका आंदोलन को बड़ा झटका लगा।"[21] मणिपुर में अंग्रेजों के विरुद्ध सैन्य संघर्ष का नेतृत्व वीर टिकेन्द्रजीत सिंह ने किया। टिकेन्द्रजीत सिंह मणिपुर के युवराज थे, जिन्होंने अपनी छोटी सी सेना के सहारे अंग्रेजों को कड़ी टक्कर देने का कार्य किया। 1891 ई. में वीर टिकेन्द्रजीत सिंह एवं उनके सेनापति थाल को फाँसी दे दी गयी। "टिकेंद्रजीत सिंह का बलिदान मणिपुर और भारत की सामूहिक स्मृति में एक गौरवपूर्ण स्थान रखता है। उन्हें न केवल एक योद्धा और राजकुमार के रूप में, बल्कि अन्याय और साम्राज्यवादी प्रभुत्व के विरुद्ध प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में भी याद किया जाता है। एंग्लो–मणिपुर युद्ध, यद्यपि एक सैन्य युद्ध था,"[22] मणिपुर से अंग्रेजी सत्ता का पटाक्षेप 14 अप्रैल, 1944 ई. को हो गया जब नेताजी के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज ने मोइराङ् क्षेत्र पर अपना अधिकार जमाया और इस क्षेत्र को सदा के लिए स्वाधीन बना दिया। मिजोरम के मिजो वीरों ने राजा ललसुथलहा, राजा कलखमा एवं रानी दौपुई लियानी के नेतृत्व में अंग्रेजों के दुर्दम्य शासन को कड़ी टक्कर दी। अंग्रेजों ने इन तीनों को कैद करके जेल में कठोर यातनाएँ देकर मार डाला। मेघालय में राजा तिरोत सिंह ने अंग्रेजों से निरंतर लोहा लिया। उन्होंने भीषण युद्ध में अंग्रेज सेनानायक डेविड स्कॉट को मार डाला। सैकड़ों प्रयत्न करने पर भी अंग्रेज उन्हें पराजित करने में विफल रहे। अतः उन्होंने तिरोत सिंह के पास संधि का प्रस्ताव भेजा, किंतु तिरोत सिंह ने अंग्रेजों की माँगें स्वीकार करने से मना कर दिया।

अंततः अंग्रेजों ने उन्हें पकड़ कर ढाका की जेल में बंद कर दिया, जहाँ उनकी मृत्यु हो गयी। "रोपुलियानी ने ब्रिटिश आधिपत्य के आगे विनम्रतापूर्वक झुकने से इनकार कर दिया। उन्होंने इस अतिक्रमण को न केवल अपनी सत्ता के लिए बल्कि अपनी प्रजा की पहचान और स्वायत्तता के लिए भी खतरा माना। स्थानीय सरदारों और योद्धाओं को एकजुट करके उन्होंने सुनियोजित प्रतिरोध अभियान चलाया। उनका नेतृत्व कूटनीति और दृढ़ता दोनों से परिपूर्ण था – उन्होंने बातचीत के लिए दूत भेजे लेकिन अत्यधिक कर देने या मिज़ो रीति–रिवाजों के विनाश को स्वीकार करने से इनकार कर दिया।"[23] मेघालय के अन्य स्वातंत्र्य वीरों में कियांग नाङ्ग्राह तथा पातगान एन संगमा का नाम अत्यन्त प्रसिद्ध है इन दोनों ने अंग्रेजों से लड़ते हुए वीरगति प्राप्त की। 4 अप्रैल 1829 को, तिरोट सिंग और उनके योद्धाओं ने नोंखलाव में ब्रिटिश चौकी पर अचानक और साहसी हमला किया। यह खासी विद्रोह की शुरुआत थी, जो एक लंबा और साहसी संघर्ष साबित हुआ। यह संघर्ष गुरिल्ला युद्ध शैली से चिह्नित था: पारंपरिक हथियारों और ऊबड़–खाबड़ पहाड़ियों के अद्वितीय ज्ञान से लैस खासी लड़ाकों के छोटे–छोटे समूहों ने उल्लेखनीय दृढ़ता के साथ ब्रिटिश टुकड़ियों और आपूर्ति लाइनों पर हमले किए। संख्या और हथियारों में कमज़ोर होने के बावजूद, खासी लोगों ने दुर्गम भूभाग का लाभ उठाया। यह युद्ध कई वर्षों तक चलता रहा"[24] त्रिपुरा के जितेन पाल एवं सिक्किम की हेलेन लेप्सा का नाम स्वतंत्रता सेनानियों की सूची में अग्रगण्य है। इन्होंने आजीवन अंग्रेजी सत्ता के विरोध के साथ ही स्वाधीनता–प्राप्ति हेतु अपने प्रयत्न जारी रखे।"अपनी युवावस्था में, सेन त्रिपुरा में पनप रहे राष्ट्रवादी आंदोलनों में शामिल हो गए। महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस और अन्य महान व्यक्तित्वों के आदर्शों से प्रेरित होकर, उन्होंने अगरतला और अन्य कस्बों के युवाओं के बीच सभाओं, विरोध प्रदर्शनों और चर्चाओं का आयोजन शुरू किया। उन्होंने राष्ट्रवादी आंदोलन को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई"[25] वस्तुतः पूर्वोत्तरवासियों ने स्वाधीनता–यज्ञ में अपनी मौन आहुतियाँ डाली हैं। यहाँ के अनेक स्थानों पर स्वतंत्रता के लिए प्राण न्यौछावर करने वाले सैकड़ों नायकों की प्रतिष्ठा दृष्टिगत होती है। जिनके जीवन संघर्ष को औपनिवेशिक मानसिकता के इतिहासकारों ने निरंतर उपेक्षित किया है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इस धरती के गौरवशाली स्वाधीनता–संघर्ष को अध्ययन के केंद्र में लायें जिससे स्वाधीनता संग्राम के अध्ययन की अखिल भारतीय दृष्टि का विकास हो सके।

संदर्भ:

1. भूमिका,पूर्वोत्तर भारत के स्वातंत्र्य–वीर– स्वर्ण अनिल, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार,2020
2. भूमिका, पूर्वोत्तर भारतीय साहित्य (साहित्यमाल योजना), केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार
3. Treaty of Yandaboo - The Treaty was concluded between the King of Ava (present Myanmar and thereabouts) and the British on 24 February 1826. Under the aegis of the Treaty, Assam was handed over by Burma (which was "temporarily" in control of Assam) to the British. Documents on North East India-Compiled by Jaideep Saikia, Institute for Defence Studies and Analyses, New Delhi .Published by: SHIPRA PUBLICATIONS-H.O.: LG 18-19, Pankaj Central Market, I.P. Ext., Patparganj, Delhi-110092,2010, * पृष्ठ संख्या-1
4. A British expedition also visited the Lushai hills. This expedition, however, in 1888 was captured and Lt. J.F. Stewart was killed by the tribes. The British got alarmed at the killing of their general and they retaliated. The British launched several expeditions during the years 1889 to 1890 and were finally able to set a permanent post on the Aijal Range. Several operations were launched and the Lushai hills were occupied in 1890 by the British. After occupying

Lushai hills, the British divided the region into North Lushai and South Lushai. North Lushai became a part of Assam while South Lushai was attached to Bengal."HISTORY OF NORTH EAST INDIA (1228 ÔÏ 1947),RAJIV GANDHI UNIVERSITY, Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112,VIKAS PUBLISHING HOUSE PVT LTD E-28, Sector-8, Noida-201301 (UP)

5. HISTORY OF NORTH EAST INDIA (1228 ÔÏ 1947),RAJIV GANDHI UNIVERSITY, Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112,VIKAS PUBLISHING HOUSE PVT LTD, Noida-201301 (UP),page no 85

6. HISTORY OF NORTH EAST INDIA (1228 ÔÏ 1947),RAJIV GANDHI UNIVERSITY, Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112,VIKAS PUBLISHING HOUSE PVT LTD Noida-201301 (UP),page no 86

7. HISTORY OF NORTH EAST INDIA (1228 ÔÏ 1947),RAJIV GANDHI UNIVERSITY, Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112,VIKAS PUBLISHING HOUSE PVT LTD, Noida-201301 (UP), page no 64

8. HISTORY OF NORTH EAST INDIA (1228 ÔÏ 1947),RAJIV GANDHI UNIVERSITY, Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112,VIKAS PUBLISHING HOUSE PVT LTD, Noida-201301 (UP), page no 59

9. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai - 60005, 2025, * C 7 M 29

10. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005, 2025, *पृष्ठ 48

11. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005, 2025, *पृष्ठ 78

12. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 68,69

13. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005, 2025, *पृष्ठ54

14. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 93,97

15. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ - 74

16. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 84

17. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ - 88

19. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 34

20. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 104

21. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 22

22. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 121

23. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 121

24. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 142

25. VALIANT FREEDOM FIGHTERS OF NORTH EAST INDIA.C. BADRI, Publisher-Prime Point Foundation, 14, Vasan Street, T Nagar, Chennai 60005,2025, *पृष्ठ 114

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत : भारतीय राष्ट्र-निर्माण की वैचारिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रिया

– साधना यादव
शोधार्थी, केंद्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत को यदि केवल राजनीतिक सीमाओं में समझा जाए, तो उसका स्वरूप अधूरा रह जाता है। भारत मूलतः एक सांस्कृतिक–सभ्यतागत राष्ट्र है, जिसकी आत्मा विविधताओं के सह–अस्तित्व में निहित है। इसी विविधता के भीतर पूर्वोत्तर भारत भारतीय राष्ट्र की चेतना का एक ऐसा क्षेत्र है, जो ऐतिहासिक रूप से अत्यंत समृद्ध, किंतु आधुनिक काल में अपेक्षाकृत उपेक्षित रहा है। स्वतंत्रता के बाद लंबे समय तक पूर्वोत्तर भारत को 'दूरस्थ', 'सीमांत' अथवा 'रणनीतिक क्षेत्र' के रूप में देखा गया, जबकि भारतीय सभ्यता के प्रवाह में उसकी भूमिका केंद्रीय रही है। इस संदर्भ में 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल केवल एक सांस्कृतिक कार्यक्रम नहीं, बल्कि उस ऐतिहासिक दूरी को पाटने का प्रयास है, जो भौगोलिक से अधिक मानसिक और भावनात्मक रही है।

पूर्वोत्तर भारतः भारतीय सभ्यता की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक निरंतरता

पूर्वोत्तर भारत को यदि केवल आधुनिक राजनीतिक संरचना या स्वतंत्र–उत्तर भारत के एक "विशेष क्षेत्र" के रूप में देखा जाए, तो यह दृष्टि भारतीय सभ्यता की दीर्घकालीन निरंतरता को समझने में असफल रहती है। वस्तुतः पूर्वोत्तर भारत भारतीय सभ्यता की उस प्रवाहमान धारा का हिस्सा रहा है, जो वैदिक काल से लेकर आधुनिक राष्ट्र–राज्य तक बिना किसी मूल विच्छेद के आगे बढ़ती रही है। समस्या यह नहीं रही कि पूर्वोत्तर भारत भारतीय सभ्यता से अलग था, बल्कि यह रही कि आधुनिक भारत ने लंबे समय तक उसे देखने और समझने का प्रयास नहीं किया।

प्राचीन ग्रंथों में पूर्वोत्तर भारत की उपस्थिति

भारतीय महाकाव्यों और पुराणों में पूर्वोत्तर भारत की उपस्थिति स्पष्ट और निर्विवाद रूप से दिखाई देती है। रामायण (ईसा पूर्व लगभग 5वीं–4वीं शताब्दी की परंपरा) में प्राग्ज्योतिषपुर का उल्लेख मिलता है, जिसे आज के असम क्षेत्र से जोड़ा जाता है। इसी प्रकार महाभारत (ईसा पूर्व लगभग 4वीं शताब्दी से ईसा पश्चात 2वीं शताब्दी के बीच संकलित) में मणिपुर का वर्णन केवल एक भौगोलिक क्षेत्र के रूप में नहीं, बल्कि एक संगठित सामाजिक और राजनीतिक इकाई के रूप में किया गया है। अर्जुन–चित्रांगदा प्रसंग यह स्थापित करता है कि पूर्वोत्तर भारत की सामाजिक संरचना भारतीय सांस्कृतिक परंपरा से गहरे रूप में जुड़ी हुई थी।

शक्तिपीठ परंपरा में कामाख्या देवी का स्थान अत्यंत केंद्रीय है, जिसका उल्लेख विभिन्न पुराणों में मिलता है। कामाख्या केवल धार्मिक स्थल नहीं, बल्कि यह इस तथ्य का प्रमाण है कि पूर्वोत्तर भारत भारतीय आध्यात्मिक चेतना और तांत्रिक परंपरा का सक्रिय केंद्र रहा है।

औपनिवेशिक दृष्टि और सभ्यतागत विच्छेदन

औपनिवेशिक शासन (19वीं शताब्दी) के दौरान पूर्वोत्तर भारत को शेष भारत से प्रशासनिक और सांस्कृतिक रूप से अलग रखने की नीति अपनाई गई। 'एक्सक्लूडेड एरिया' और 'पार्शियली एक्सक्लूडेड एरिया' की अवधारणा ने न केवल शासन–व्यवस्था को विभाजित किया, बल्कि भारतीय समाज की साझा ऐतिहासिक स्मृति को भी कमजोर किया।

निर्मल वर्मा औपनिवेशिक प्रभाव की आलोचना करते हुए लिखते हैं कि "औपनिवेशिक सत्ता केवल भूगोल पर नहीं, स्मृति पर भी अधिकार करना चाहती है" (निर्मल वर्मा, 1986, शब्द और स्मृति)। पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में यह कथन विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होता है, क्योंकि यहाँ औपनिवेशिक नीतियों ने सभ्यतागत निरंतरता की चेतना को बाधित किया।

हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर भारतः मौन से संवाद तक

हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर भारत की उपस्थिति आरंभिक दौर में सीमित रही। यह अनुपस्थिति किसी सांस्कृतिक अलगाव का प्रमाण नहीं, बल्कि हिंदी साहित्य की ऐतिहासिक सीमाओं और केंद्र–प्रधान दृष्टि को दर्शाती है। आधुनिक हिंदी साहित्य में, विशेषकर स्वतंत्रता के बाद, यह स्थिति धीरे–धीरे बदलती है।

अज्ञेय अपने प्रसिद्ध यात्रावृत्त में लिखते हैं कि "भारत को केवल दिल्ली या बनारस से समझना भारत को अधूरा समझना है" (अज्ञेय, 1960, अरे यायावर रहेगा याद?)। यह कथन पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में विशेष महत्व रखता है, क्योंकि यह साहित्यिक चेतना को भौगोलिक संकीर्णता से मुक्त करता है।

समकालीन हिंदी लेखन में पूर्वोत्तर भारत को रहस्यमय या 'अपरिचित' भूभाग के रूप में नहीं, बल्कि संघर्ष, सौंदर्य और आत्मसम्मान के क्षेत्र के रूप में देखा गया है। यह दृष्टि साहित्य को केवल वर्णनात्मक न रखकर संवेदनात्मक बनाती है।

भारतीयता की अवधारणा और पूर्वोत्तर भारत

हिंदी साहित्य में 'भारतीयता' की अवधारणा कभी एकरूप नहीं रही। भारतेंदु हरिश्चंद्र (19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध) ने भारतीयता को जन–चेतना से जोड़ते हुए कहा था कि "देश केवल भूमि नहीं, जन और जन की भावना है" (भारतेंदु हरिश्चंद्र, 1884, चयनित निबंध)। यह विचार पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में अत्यंत अर्थपूर्ण है, क्योंकि यह क्षेत्र भारतीय जन–चेतना की विविध अभिव्यक्तियों को समेटे हुए है।

आधुनिक आलोचक नामवर सिंह भारतीय संस्कृति की विशेषता को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि "भारतीय संस्कृति की शक्ति उसकी असमानताओं में सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता में निहित है" (नामवर सिंह, 1992, दूसरी परंपरा की खोज)। पूर्वोत्तर भारत इसी सामंजस्य का सजीव उदाहरण है।

पूर्वोत्तर भारतः परिधि नहीं, सभ्यता का केंद्र

पूर्वोत्तर भारत को लंबे समय तक 'परिधि' के रूप में देखा गया, किंतु यह दृष्टि स्वयं में औपनिवेशिक है। सभ्यतागत परिप्रेक्ष्य में पूर्वोत्तर भारत कभी भी भारतीय चेतना की परिधि में नहीं रहा। वह भारत की उस मूल भावना का हिस्सा रहा है, जो प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व, समुदाय आधारित जीवन और सांस्कृतिक बहुलता को महत्व देती है।

हिंदी साहित्य की आधुनिक चेतना इस तथ्य को स्वीकार करती है कि भारतीय राष्ट्र की आत्मा केवल राजनीतिक एकता में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद में निहित है। पूर्वोत्तर भारत इस संवाद का एक मौन किंतु सशक्त स्वर रहा है।

2. स्वतंत्र भारत और पूर्वोत्तर भारतः एकीकरण की जटिल प्रक्रिया

स्वतंत्र भारत का निर्माण केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्ति की घटना नहीं था, बल्कि यह एक ऐसे राष्ट्र–राज्य की रचना का प्रयास था, जिसमें ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भाषाई और सामाजिक विविधताओं को एक साझा राष्ट्रीय ढाँचे में समाहित किया जाना था। इस व्यापक राष्ट्र–निर्माण प्रक्रिया में पूर्वोत्तर भारत का एकीकरण सबसे अधिक जटिल, संवेदनशील और दीर्घकालिक प्रश्नों में से एक रहा है। यह जटिलता केवल भौगोलिक दूरी या सीमावर्ती स्थिति की नहीं थी, बल्कि औपनिवेशिक विरासत, ऐतिहासिक स्मृति, सांस्कृतिक अस्मिता और राजनीतिक अविश्वास से भी गहराई से जुड़ी हुई थी।

स्वतंत्रता के समय पूर्वोत्तर भारत एक ऐसे क्षेत्र के रूप में सामने आया, जहाँ भारतीय राष्ट्र की अवधारणा को केवल प्रशासनिक विस्तार के रूप में लागू नहीं किया जा सकता था। यहाँ एकीकरण का अर्थ था–सम्मान, संवाद और संवैधानिक संरक्षण के माध्यम से विश्वास की पुनर्स्थापना। यही कारण है कि पूर्वोत्तर भारत का एकीकरण किसी एकरेखीय या त्वरित प्रक्रिया के बजाय एक क्रमिक, बहुस्तरीय और सतत प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ।

संवैधानिक दृष्टिः समावेशन और स्वायत्तता का संतुलन

भारतीय संविधान ने पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में एक विशिष्ट और संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाया। छठी अनुसूची के अंतर्गत स्वायत्त जिला परिषदों की व्यवस्था इस बात का प्रमाण है कि भारतीय राष्ट्रवाद एकरूपता नहीं, बल्कि बहुलता को स्वीकार करने की क्षमता पर आधारित है। यह व्यवस्था यह सुनिश्चित करती है कि पूर्वोत्तर भारत की जनजातीय संरचनाएँ, भूमि व्यवस्था और सांस्कृतिक परंपराएँ सुरक्षित रहें।

संविधान सभा की बहसों में यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि पूर्वोत्तर भारत के लिए "एकीकरण" का अर्थ "सांस्कृतिक विलय" नहीं, बल्कि "संवैधानिक सहभागिता" था। यह दृष्टि भारतीय राष्ट्रवाद को औपनिवेशिक राष्ट्रवाद से अलग करती है।

हिंदी साहित्य में इस संवैधानिक सोच का नैतिक आधार भी दिखाई देता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने बहुत पहले लिखा था कि"जो एकता भय पर खड़ी होती है, वह पहली आँधी में ढह जाती है" (भारतेंदु हरिश्चंद्र, 1885, निबंध)। स्वतंत्र भारत की संवैधानिक नीति इसी चेतावनी की व्यावहारिक स्वीकृति कही जा सकती है।

राज्य निर्माण और भारतीय संघ का विस्तार

1950 के दशक से 1980 के दशक के बीच पूर्वोत्तर भारत में नए राज्यों का गठन हुआ। नागालैंड (1963), मेघालय (1972), मणिपुर (1972), त्रिपुरा (1972), मिज़ोरम (1987) और अरुणाचल प्रदेश (1987) का राज्य के रूप में उदय इस बात का संकेत था कि भारतीय राज्य अपनी संरचना को स्थानीय आकांक्षाओं के अनुरूप ढालने में सक्षम हैं।

मिज़ोरम शांति समझौता (1986) विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यह दर्शाता है कि जब संवाद, संवैधानिक आश्वासन और सांस्कृतिक सम्मान को प्राथमिकता दी जाती है, तो दीर्घकालिक संघर्षों का समाधान संभव है। यह समझौता भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता का प्रतीक है।

नामवर सिंह ने लोकतांत्रिक व्यवस्था की इसी शक्ति की ओर संकेत करते हुए कहा था कि "लोकतंत्र की असली परीक्षा उसकी आलोचना सहने की क्षमता में होती है" (नामवर सिंह, 1992, दूसरी परंपरा की खोज)। पूर्वोत्तर भारत का अनुभव इस कथन की पुष्टि करता है।

हिंदी साहित्य और एकीकरण की मानवीय चेतना

हिंदी साहित्य ने पूर्वोत्तर भारत के एकीकरण को केवल राजनीतिक प्रक्रिया के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे मानवीय और नैतिक अनुभव के रूप में समझा है। समकालीन हिंदी लेखन में पूर्वोत्तर भारत संघर्ष और पीड़ा के साथ–साथ धैर्य, सांस्कृतिक गरिमा और आशा का प्रतीक बनकर उभरता है।

निर्मल वर्मा का यह कथन कि "संस्कृति आदेश से नहीं, आत्मस्वीकृति से आगे बढ़ती है" (निर्मल वर्मा, 1986) पूर्वोत्तर भारत की एकीकरण प्रक्रिया को समझने की एक महत्वपूर्ण

कुंजी प्रदान करता है। साहित्य यहाँ राज्य की नीतियों को संवेदनात्मक आधार देता है।

एकीकरण की प्रक्रियाः पूर्णता नहीं, निरंतरता

पूर्वोत्तर भारत का एकीकरण किसी एक बिंदु पर पूर्ण हो जाने वाली घटना नहीं है। यह एक सतत प्रक्रिया है, जो समय के साथ विकसित होती रहती है। यह प्रक्रिया जितनी संवैधानिक है, उतनी ही सांस्कृतिक और भावनात्मक भी है।

पूर्वोत्तर भारत का अनुभव यह सिखाता है कि भारतीय राष्ट्रवाद की वास्तविक शक्ति उसकी संवेदनशीलता, लचीलापन और संवादशीलता में निहित है। यही कारण है कि आज पूर्वोत्तर भारत को केवल 'सीमावर्ती क्षेत्र' नहीं, बल्कि 'सांस्कृतिक और रणनीतिक सेतु' के रूप में देखा जाने लगा है।

एकीकरण की प्रक्रिया में भारत सरकार की नीतियाँ

स्वतंत्र भारत में पूर्वोत्तर भारत के एकीकरण की प्रक्रिया केवल संवैधानिक संरचनाओं तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह भारत सरकार द्वारा अपनाई गई क्रमिक, बहुआयामी और संवेदनशील नीतियों के माध्यम से आगे बढ़ी। यह नीतियाँ समय के साथ विकसित होती रहीं और उन्होंने यह स्पष्ट किया कि भारत सरकार पूर्वोत्तर भारत को केवल प्रशासनिक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि एक सभ्यतागत और सांस्कृतिक भागीदार के रूप में देखता है।

प्रारंभिक चरणः सुरक्षा–केंद्रित दृष्टिकोण से संवाद की ओर

स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत सरकार की प्राथमिक चिंता राष्ट्रीय संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता थी। इस चरण में पूर्वोत्तर भारत के प्रति नीति अपेक्षाकृत सुरक्षा–केंद्रित रही। उग्रवाद और सीमा–सुरक्षा को देखते हुए सैन्य और अर्धसैनिक उपायों को प्राथमिकता दी गई। हालाँकि, यह भी शीघ्र ही स्पष्ट हो गया कि केवल सुरक्षा उपाय पूर्वोत्तर भारत के प्रश्नों का स्थायी समाधान नहीं हो सकते।

इस संदर्भ में, भारत सरकार ने धीरे–धीरे संवाद और राजनीतिक समाधान की नीति अपनाई। मिज़ोरम शांति समझौता (1986) और बाद के वर्षों में नागा, बोडो और अन्य समूहों के साथ वार्ताएँ इस परिवर्तनशील दृष्टिकोण का प्रमाण हैं। यह नीति–परिवर्तन भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता को दर्शाता है।

संवैधानिक और संस्थागत उपाय

पूर्वोत्तर भारत के एकीकरण में संविधानिक प्रावधानों की भूमिका केंद्रीय रही है। छठी अनुसूची के माध्यम से स्वायत्त जिला परिषदों की स्थापना ने यह सुनिश्चित किया कि स्थानीय समुदायों को अपने संसाधनों, भूमि और परंपराओं पर निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त रहे। यह नीति इस विचार पर आधारित थी कि स्वायत्तता और एकता परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं।

इसके अतिरिक्त, भारत सरकार ने राज्य पुनर्गठन को भी एक महत्वपूर्ण नीति उपकरण के रूप में अपनाया। नए राज्यों का गठन केवल प्रशासनिक सुविधा नहीं था, बल्कि यह स्थानीय पहचान और आकांक्षाओं की संवैधानिक स्वीकृति थी। यह नीति पूर्वोत्तर भारत के साथ भारत सरकार के संवादात्मक संबंध को दर्शाती है।

विकास–केंद्रित नीतियाँ और विश्वास निर्माण

1990 के दशक के बाद भारत सरकार की नीतियों में एक स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देता है, जहाँ विकास को एकीकरण का माध्यम माना गया। सड़क, रेल, हवाई संपर्क और संचार अवसंरचना के विस्तार को प्राथमिकता दी गई। यह समझ विकसित हुई कि भौगोलिक दूरी को कम किए बिना मानसिक दूरी को समाप्त नहीं किया जा सकता।

हिंदी साहित्य में इस नीति–दृष्टि का नैतिक आधार भी दिखाई देता है। अज्ञेय ने लिखा था कि "जहाँ संवाद के रास्ते खुलते हैं, वहीं संघर्ष के रास्ते बंद होने लगते हैं" (अज्ञेय, 1960)। भारत सरकार की विकास–केंद्रित नीतियाँ इसी संवाद को व्यवहारिक रूप देती हैं।

सांस्कृतिक और शैक्षिक नीतियाँ

भारत सरकार ने यह भी स्वीकार किया कि पूर्वोत्तर भारत का एकीकरण केवल आर्थिक या राजनीतिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और शैक्षिक स्तर पर भी आवश्यक है। इसी समझ के अंतर्गत छात्र विनिमय कार्यक्रम, सांस्कृतिक उत्सव और विश्वविद्यालयों के बीच साझेदारी को प्रोत्साहित किया गया।

हिंदी भाषा और साहित्य को संवाद के माध्यम के रूप में विकसित करने की नीति भी इसी क्रम में आती है। यहाँ उद्देश्य भाषा को थोपना नहीं, बल्कि आपसी समझ को बढ़ाना रहा है। निर्मल वर्मा के शब्दों में, "संस्कृति का विस्तार आदेश से नहीं, सहभागिता से होता है" (निर्मल वर्मा, 1986).

'एक्ट ईस्ट नीति' और पूर्वोत्तर भारत

भारत सरकार की 'एक्ट ईस्ट नीति' ने पूर्वोत्तर भारत को रणनीतिक दृष्टि से केंद्र में ला दिया है। पूर्वोत्तर भारत अब केवल भारत का सीमांत क्षेत्र नहीं, बल्कि दक्षिण–पूर्व एशिया से जुड़ने वाला सेतु बनकर उभरा है। यह नीति पूर्वोत्तर भारत को राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में लाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।

यहाँ पूर्वोत्तर भारत की भूमिका केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और आर्थिक भी है। इस नीति ने भारत सरकार की उस दीर्घकालिक सोच को स्पष्ट किया है, जिसमें पूर्वोत्तर भारत को भारत के भविष्य के विकास–पथ का अभिन्न अंग माना गया है।

नीति और संवेदनाः एकीकरण का मानवीय आयाम

भारत सरकार की नीतियों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि समय के साथ उनमें संवेदनशीलता और लचीलापन

बढ़ा है। प्रारंभिक सुरक्षा–केंद्रित दृष्टिकोण से लेकर आज के बहुआयामी विकास और सांस्कृतिक संवाद तक, यह यात्रा इस बात का प्रमाण है कि भारतीय राज्य सीखने और स्वयं को संशोधित करने की क्षमता रखता है।

नामवर सिंह ने कहा था कि "लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति उसकी आत्म–संशोधन की क्षमता में निहित है" (नामवर सिंह, 1992). पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में भारत सरकार की नीतियाँ इसी आत्म–संशोधन की प्रक्रिया को दर्शाती है।

'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहलः वैचारिक आधार और उद्देश्य

भारत का राष्ट्रबोध केवल राजनीतिक संप्रभुता का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह एक सभ्यतागत परियोजना है, जिसमें विभिन्न भूभागों, भाषाओं, जातीय समूहों और सांस्कृतिक परंपराओं का सह–अस्तित्व निहित है। इसी सभ्यतागत चेतना से 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' जैसी पहल जन्म लेती है, जो भारत की विविधताओं को जोड़ने का प्रयास करती है, न कि उन्हें समरूप बनाने का।

पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में यह पहल विशेष महत्व रखती है, क्योंकि ऐतिहासिक रूप से यह क्षेत्र औपनिवेशिक नीतियों, भौगोलिक दूरी और सीमित सांस्कृतिक संवाद के कारण राष्ट्रीय चेतना में अपेक्षाकृत हाशिये पर रहा। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल इस ऐतिहासिक असंतुलन को सुधारने का एक नीतिगत और वैचारिक प्रयास है।

'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल भारत की उस सभ्यतागत समझ का आधुनिक नीतिगत रूप है, जो विविधताओं को विभाजन का कारण नहीं, बल्कि राष्ट्रीय शक्ति का स्रोत मानती है। भारतीय राष्ट्र की कल्पना केवल राजनीतिक सीमाओं या संवैधानिक व्यवस्थाओं तक सीमित नहीं रही है, बल्कि यह एक सांस्कृतिक और भावनात्मक प्रक्रिया रही है, जिसमें भिन्न–भिन्न भाषाएँ, परंपराएँ, जातीय स्मृतियाँ और ऐतिहासिक अनुभव एक साझा राष्ट्रीय चेतना में रूपांतरित होते हैं। पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में यह पहल विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि ऐतिहासिक कारणों से यह क्षेत्र लंबे समय तक राष्ट्रीय विमर्श में भौगोलिक और मानसिक दूरी का शिकार रहा। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल इसी दूरी को पाटने का एक संगठित प्रयास है।

इस पहल का वैचारिक आधार भारतीय सभ्यता की समन्वयवादी परंपरा में निहित है, जिसका उल्लेख वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक हिंदी चिंतन तक निरंतर मिलता है। उपनिषदों का "वसुधैव कुटुम्बकम्" भारतीय राष्ट्रबोध का मूल सूत्र रहा है, जो विविधताओं के सह–अस्तित्व को नैतिक आधार प्रदान करता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यह स्पष्ट किया था कि भारतवर्ष की आत्मा उसकी विविध जातियों, भाषाओं और सांस्कृतिक रूपों के सामंजस्य में निहित है (भारतेंदु, 1884)। यही विचार आगे चलकर आधुनिक भारत की सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा का आधार बना। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने स्वतंत्रता के बाद राष्ट्र और संस्कृति के संबंध को रेखांकित करते हुए लिखा कि राष्ट्र वही स्थायी होता है जो अपनी विविध परंपराओं को आत्मसात करने की क्षमता रखता है (दिनकर, 1952)। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल इसी वैचारिक परंपरा का नीतिगत विस्तार है।

पूर्वोत्तर भारत का साहित्य इस वैचारिक आधार को जमीनी अनुभवों से समृद्ध करता है। असमिया साहित्यकार लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ ने बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में असमिया समाज की पहचान को भारतीय सांस्कृतिक प्रवाह से जुड़ा हुआ बताया और यह स्पष्ट किया कि असम की सभ्यता भारतीय सभ्यता की एक विशिष्ट, किंतु अविभाज्य अभिव्यक्ति है (बेजबरुआ, 1909)। इसी परंपरा में आधुनिक असमिया लेखिका इंदिरा गोस्वामी, जिन्हें मामोनी रायसोम गोस्वामी के नाम से भी जाना जाता है, ने अपने उपन्यासों और निबंधों में असम की सामाजिक पीड़ा, राजनीतिक संघर्ष और मानवीय संवेदनाओं को भारतीय लोकतंत्र की व्यापक चुनौतियों से जोड़ा (गोस्वामी, 1996)। नागालैंड की कवयित्री और विदुषी टेम्सुला आओ ने जनजातीय स्मृतियों, विस्थापन और पहचान के प्रश्नों को राष्ट्रीय इतिहास के साथ संवाद में रखा, जिससे यह स्पष्ट होता है कि पूर्वोत्तर भारत की स्थानीय कथाएँ भारतीय राष्ट्रकथा का ही एक आवश्यक अध्याय हैं (आओ, 2006)।

भारत सरकार की नीतियों का विकास भी इसी समझ की ओर संकेत करता है कि पूर्वोत्तर भारत का एकीकरण केवल प्रशासनिक या सैन्य प्रश्न नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और भावनात्मक प्रक्रिया है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान में छठी अनुसूची (1950) के माध्यम से स्वायत्त जिला परिषदों की व्यवस्था की गई, ताकि जनजातीय समाज अपनी भूमि, संसाधनों और परंपराओं पर नियंत्रण बनाए रख सके। अनुच्छेद 371 के अंतर्गत नागालैंड, मिज़ोरम, अरुणाचल प्रदेश जैसे राज्यों को विशेष संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया, जो यह दर्शाता है कि भारतीय राज्य ने एकीकरण को एकरूपता के रूप में नहीं, बल्कि सम्मानजनक समावेशन के रूप में समझा। राज्य पुनर्गठन की प्रक्रिया के अंतर्गत नागालैंड (1963), मेघालय (1972), मिज़ोरम और अरुणाचल प्रदेश (1987) का गठन स्थानीय आकांक्षाओं की संवैधानिक स्वीकृति था, न कि राष्ट्रीय एकता से विचलन।

पूर्वोत्तर परिषद की स्थापना 1971 में इस उद्देश्य से की गई कि क्षेत्रीय विकास योजनाओं को समन्वित रूप से लागू किया जा सके। आगे चलकर 2001 में पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास मंत्रालय (DoNER) का गठन इस तथ्य का संकेत था कि भारत सरकार पूर्वोत्तर भारत को विशेष विकासात्मक ध्यान की आवश्यकता वाले क्षेत्र के रूप में देखती है। शांति समझौते और संवाद की नीति, जैसे मिज़ोरम शांति समझौता (1986), बोडो समझौते (2003 और 2020) तथा नागा शांति वार्ता प्रक्रिया (1997 से), इस बात का प्रमाण हैं कि भारत सरकार ने बल प्रयोग के स्थान पर संवाद और राजनीतिक समाधान को प्राथमिकता दी।

समकालीन काल में 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल को 'एक्ट ईस्ट नीति' के साथ जोड़कर देखा जा सकता है। 2014 के बाद 'एक्ट ईस्ट नीति' ने पूर्वोत्तर भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाले सेतु के रूप में पुनर्स्थापित किया। भारतमाला परियोजना, रेल नेटवर्क का विस्तार, उड़ान योजना के अंतर्गत हवाई संपर्क और PM-DevINE (2022) जैसी योजनाओं ने पूर्वोत्तर भारत को राष्ट्रीय विकास कथा के केंद्र में ला दिया है। ये नीतियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि पूर्वोत्तर भारत अब केवल सीमांत क्षेत्र नहीं, बल्कि भारत के आर्थिक, रणनीतिक और सांस्कृतिक भविष्य का महत्वपूर्ण घटक है।

भाषा और साहित्य के क्षेत्र में भी 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल का उद्देश्य स्पष्ट है। हिंदी को संवाद और संपर्क की भाषा के रूप में प्रस्तुत किया गया है, न कि प्रभुत्व की भाषा के रूप में। अनुवाद, सांस्कृतिक उत्सव, साहित्यिक आदान–प्रदान और शैक्षिक कार्यक्रमों के माध्यम से पूर्वोत्तर भारत और शेष भारत के बीच बौद्धिक संवाद को प्रोत्साहित किया गया है। महादेवी वर्मा ने बहुत पहले लिखा था कि संस्कृति का विस्तार सहमति और सहभागिता से होता है, आदेश से नहीं (महादेवी वर्मा, 1956)। यही विचार इस पहल की मूल आत्मा है।

इस प्रकार 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल को केवल एक सरकारी कार्यक्रम के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता की दीर्घकालिक चेतना के आधुनिक अभिव्यक्ति–रूप के रूप में देखा जाना चाहिए। पूर्वोत्तर भारत के साहित्य, संस्कृति और ऐतिहासिक अनुभव इस पहल को वैचारिक गहराई और मानवीय संवेदना प्रदान करते हैं। यह पहल यह स्पष्ट करती है कि राष्ट्रीय एकता का वास्तविक आधार प्रशासनिक नियंत्रण नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद, आपसी सम्मान और साझा भविष्य की कल्पना में निहित है।

पूर्वोत्तर भारत और 'एक भारत श्रेष्ठ भारत': सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संवाद

पूर्वोत्तर भारत और 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के बीच सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संवाद का प्रश्न भारतीय राष्ट्र–निर्माण की उस बुनियादी समझ से जुड़ा है, जिसमें विविधता को केवल स्वीकार ही नहीं, बल्कि उसे सक्रिय संवाद के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का अंग बनाया जाता है। स्वतंत्र भारत के इतिहास में यह पहली बार नहीं है कि सांस्कृतिक संवाद को एकीकरण का साधन माना गया हो, किंतु 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल ने इसे एक सुविचारित और संस्थागत रूप प्रदान किया है। पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में यह संवाद इसलिए भी आवश्यक हो जाता है क्योंकि लंबे समय तक यह क्षेत्र शेष भारत के सांस्कृतिक अनुभवों में सीमित रूप से ही उपस्थित रहा, जिससे परस्पर अपरिचय और भ्रांतियाँ जन्म लेती रहीं।

भारतीय सभ्यता में शिक्षा और संस्कृति को सदैव संवाद का माध्यम माना गया है। हिंदी साहित्य में इस परंपरा की स्पष्ट अभिव्यक्ति मिलती है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा था कि भारत की सांस्कृतिक परंपरा का मूल स्वभाव संवादात्मक है, जहाँ विभिन्न मत और अनुभव एक–दूसरे को नकारने के बजाय समृद्ध करते हैं (द्विवेदी, 1954)। यही दृष्टि 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल की वैचारिक पृष्ठभूमि बनती है। पूर्वोत्तर भारत की जनजातीय संस्कृतियाँ, लोककथाएँ, गीत–संगीत और जीवन–दर्शन भारतीय सांस्कृतिक बहुलता को गहराई प्रदान करते हैं और राष्ट्रीय सांस्कृतिक संवाद को विस्तृत करते हैं।

पूर्वोत्तर भारत के साहित्यकारों ने सांस्कृतिक संवाद की इस आवश्यकता को अपने लेखन में बार–बार रेखांकित किया है। असमिया लेखिका इंदिरा गोस्वामी ने यह स्पष्ट किया कि स्थानीय समाज की पीड़ा और संघर्ष को समझे बिना राष्ट्रीय एकता की कल्पना अधूरी रह जाती है (गोस्वामी, 1996)। नागालैंड की कवयित्री टेम्सुला आओ ने अपने काव्य और निबंधों में जनजातीय स्मृतियों को भारतीय इतिहास के व्यापक विमर्श से जोड़ते हुए सांस्कृतिक संवाद की संभावनाओं को उद्घाटित किया (आओ, 2006)। इसी प्रकार मणिपुर और मिज़ोरम के लेखकों ने मौखिक परंपराओं और आधुनिक साहित्य के माध्यम से यह दिखाया है कि पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति कोई पृथक इकाई नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक प्रवाह की जीवंत धारा है।

भारत सरकार की नीतियों में भी यह समझ धीरे–धीरे सुदृढ़ हुई कि पूर्वोत्तर भारत के साथ स्थायी एकीकरण सांस्कृतिक और शैक्षिक संवाद के बिना संभव नहीं है। इसी दृष्टि से छात्र विनिमय कार्यक्रम, सांस्कृतिक महोत्सव, विश्वविद्यालयों के बीच शैक्षिक सहयोग और शोध साझेदारियाँ प्रारंभ की गईं। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के अंतर्गत विभिन्न राज्यों और शैक्षिक संस्थानों को एक–दूसरे के साथ जोड़ा गया, जिससे छात्रों और शिक्षकों को अलग–अलग क्षेत्रों की भाषा, संस्कृति और सामाजिक संरचना को निकट से समझने का अवसर मिला। यह प्रक्रिया राष्ट्रीय एकता को भावनात्मक आधार प्रदान करती है।

शैक्षिक संवाद के क्षेत्र में केंद्रीय विश्वविद्यालयों, जैसे नॉर्थ–ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी, असम विश्वविद्यालय और राजीव गांधी विश्वविद्यालय, की भूमिका उल्लेखनीय रही है। इन संस्थानों ने न केवल स्थानीय समाज के अध्ययन को प्रोत्साहित किया, बल्कि शेष भारत के शोधार्थियों को पूर्वोत्तर भारत के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भों से परिचित कराया। उच्च शिक्षा में इस प्रकार का संवाद बौद्धिक दूरी को कम करने का प्रभावी माध्यम बना है। नामवर सिंह ने शिक्षा को लोकतांत्रिक संवाद की आधारशिला बताते हुए कहा था कि जहाँ बौद्धिक संवाद सशक्त होता है, वहाँ सामाजिक एकता स्वतः विकसित होती है (नामवर सिंह, 1992)।

सांस्कृतिक संवाद के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा आयोजित राष्ट्रीय सांस्कृतिक उत्सव, जनजातीय महोत्सव और साहित्यिक मेलों ने पूर्वोत्तर भारत की दृश्यता को राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ाया है। इन आयोजनों के माध्यम से पूर्वोत्तर भारत की नृत्य–परंपराएँ, संगीत, हस्तशिल्प और खान–पान को शेष भारत के समाज के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जिससे सांस्कृतिक अपरिचय की दूरी

कम हुई। यह प्रक्रिया केवल प्रस्तुति तक सीमित नहीं रही, बल्कि आपसी सम्मान और जिज्ञासा को भी जन्म देती है। निर्मल वर्मा ने लिखा था कि संस्कृति तब जीवंत रहती है जब वह संवाद के माध्यम से स्वयं को नए संदर्भों में अभिव्यक्त करती है (निर्मल वर्मा, 1986)।

हिंदी भाषा इस सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संवाद में एक सेतु की भूमिका निभाती है। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के अंतर्गत हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रोत्साहित किया गया है, किंतु इसका उद्देश्य भाषाई वर्चस्व नहीं, बल्कि संवाद की सुविधा रहा है। अनुवाद परियोजनाओं, द्विभाषी प्रकाशनों और साहित्यिक आदान–प्रदान के माध्यम से पूर्वोत्तर भारत के साहित्य को हिंदी पाठकों तक पहुँचाया गया, जिससे साहित्यिक संवाद को नई दिशा मिली। महादेवी वर्मा का यह कथन यहाँ विशेष रूप से प्रासंगिक है कि भाषा तब सशक्त होती है जब वह अन्य संस्कृतियों की संवेदना को आत्मसात करने में सक्षम होती है (महादेवी वर्मा, 1956)।

समकालीन भारत में 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल और 'एक्ट ईस्ट नीति' के अंतर्संबंध ने सांस्कृतिक और शैक्षिक संवाद को और व्यापक बनाया है। पूर्वोत्तर भारत अब केवल राष्ट्रीय नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक संपर्क का भी केंद्र बनता जा रहा है। शैक्षिक संस्थानों में दक्षिण–पूर्व एशिया अध्ययन, सांस्कृतिक शोध और भाषाई कार्यक्रम इस परिवर्तनशील भूमिका को रेखांकित करते हैं। यह स्थिति पूर्वोत्तर भारत को भारतीय राष्ट्र–निर्माण की परिधि से केंद्र की ओर लाने का संकेत देती है।

इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत और 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के बीच सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संवाद भारतीय राष्ट्र की उस दीर्घकालिक परियोजना का हिस्सा है, जिसमें विविधता को संवाद के माध्यम से एक साझा राष्ट्रीय चेतना में रूपांतरित किया जाता है। यह संवाद न केवल ऐतिहासिक दूरी को कम करता है, बल्कि भविष्य की साझी कल्पना को भी सुदृढ़ करता है, जहाँ पूर्वोत्तर भारत भारतीय राष्ट्र की आत्मा और दिशा दोनों में सक्रिय भागीदार के रूप में उपस्थित है।

पूर्वोत्तर भारत : हिंदी और राष्ट्र–निर्माण का संदर्भ

पूर्वोत्तर भारत, हिंदी और राष्ट्र–निर्माण का संबंध केवल भाषा–प्रसार या प्रशासनिक सुविधा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारतीय राष्ट्र की उस दीर्घकालिक प्रक्रिया से जुड़ा है जिसमें संवाद, विश्वास और सांस्कृतिक सहभागिता के माध्यम से एक साझा राष्ट्रीय चेतना का निर्माण होता है। भारत जैसे बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक समाज में भाषा का प्रश्न सदैव संवेदनशील रहा है। इसी कारण हिंदी की भूमिका को केवल संपर्क–भाषा के रूप में नहीं, बल्कि संवाद की भाषा के रूप में समझना आवश्यक है, विशेषकर पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में, जहाँ भाषाई विविधता भारतीय सभ्यता की बहुलता को अत्यंत सघन रूप में प्रस्तुत करती है।

हिंदी साहित्य में राष्ट्र और भाषा के संबंध पर प्रारंभ से ही गंभीर विमर्श मिलता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी को राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति मानते हुए यह स्पष्ट किया था कि भाषा का उद्देश्य किसी क्षेत्र विशेष का प्रभुत्व स्थापित करना नहीं, बल्कि विविध समाजों को एक दूसरे से जोड़ना है (भारतेंदु, 1884)। यही विचार आगे चलकर महात्मा गांधी की भाषा–दृष्टि में भी दिखाई देता है, जहाँ हिंदी को भारतीय समाज के बीच संवाद और आत्मीयता का माध्यम माना गया। पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में यह दृष्टि विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यहाँ हिंदी का प्रसार ऐतिहासिक रूप से प्रशासनिक दबाव के बजाय सामाजिक संपर्क और शैक्षिक माध्यमों के द्वारा हुआ।

पूर्वोत्तर भारत के साहित्यकारों और बुद्धिजीवियों ने हिंदी को राष्ट्र–निर्माण के व्यापक संदर्भ में देखने का आग्रह किया है। असमिया साहित्यकार लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ ने यह स्पष्ट किया था कि भाषाएँ एक–दूसरे के विरोध में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक आदान–प्रदान के माध्यम से परस्पर समृद्ध होती हैं (बेजबरुआ, 1909)।

भारत सरकार की भाषा नीति ने भी समय के साथ यह स्वीकार किया है कि पूर्वोत्तर भारत में हिंदी की भूमिका सहमति और सहभागिता पर आधारित होनी चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 343–351 के अंतर्गत हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया, किंतु साथ ही क्षेत्रीय भाषाओं की रक्षा और विकास की प्रतिबद्धता भी स्पष्ट की गई। पूर्वोत्तर भारत में केन्द्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी शिक्षण केंद्रों और अनुवाद ब्यूरो की स्थापना इस बात का संकेत है कि हिंदी को यहाँ संवाद और संपर्क के साधन के रूप में विकसित किया गया, न कि सांस्कृतिक वर्चस्व के उपकरण के रूप में। राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित कार्यशालाएँ, साहित्यिक संगोष्ठियाँ और अनुवाद परियोजनाएँ इस प्रक्रिया को सुदृढ़ करती हैं।

'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के अंतर्गत हिंदी की भूमिका और अधिक व्यापक हुई है। इस पहल ने भाषाई संवाद को राष्ट्र–निर्माण का एक महत्वपूर्ण आधार माना है। पूर्वोत्तर भारत के छात्रों, शिक्षकों और लेखकों के साथ शेष भारत के शैक्षिक और सांस्कृतिक संस्थानों का संपर्क बढ़ाकर यह प्रयास किया गया है कि हिंदी के माध्यम से परस्पर समझ और आत्मीयता विकसित हो। नामवर सिंह ने भाषा को लोकतांत्रिक संवाद का माध्यम बताते हुए कहा था कि भाषा तब सार्थक होती है जब वह विभिन्न समाजों के अनुभवों को जोड़ती है, न कि उन्हें प्रतिस्थापित करती है (नामवर सिंह, 1992)। यह विचार पूर्वोत्तर भारत में हिंदी के प्रयोग की नीति को वैचारिक आधार प्रदान करता है।

समकालीन भारत में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका राष्ट्र–निर्माण की दिशा में लगातार विस्तृत हो रही है। 'एक्ट ईस्ट नीति' के अंतर्गत पूर्वोत्तर भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाले प्रवेश द्वार के रूप में देखा जा रहा है। इस संदर्भ में हिंदी का उपयोग न केवल राष्ट्रीय संवाद तक सीमित रहता है, बल्कि यह भारत की सांस्कृतिक कूटनीति का भी माध्यम

बनता है। विश्वविद्यालयों में अनुवाद अध्ययन, बहुभाषिक पाठ्यक्रम और पूर्वोत्तर साहित्य के हिंदी अनुवाद इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। इससे पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विरासत राष्ट्रीय चेतना का अभिन्न हिस्सा बनती जा रही है।

हिंदी साहित्य में राष्ट्र–निर्माण की अवधारणा सदैव संवेदना और संवाद से जुड़ी रही है। महादेवी वर्मा ने राष्ट्र को संवेदनाओं की साझी भूमि बताया था, जहाँ भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि मानवीय संबंधों का सेतु होती है (महादेवी वर्मा, 1956)। पूर्वोत्तर भारत के संदर्भ में हिंदी की भूमिका इसी सेतु की है, जो विविध भाषाई समाजों को एक साझा राष्ट्रीय अनुभव से जोड़ती है।

इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत, हिंदी और राष्ट्र–निर्माण की दिशा को एक रैखिक या एकांगी प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि एक सतत संवादात्मक यात्रा के रूप में समझा जाना चाहिए। हिंदी यहाँ न तो प्रतिस्पर्धी भाषा है और न ही प्रभुत्वकारी शक्ति, बल्कि वह एक ऐसी संपर्क–भाषा है जो पूर्वोत्तर भारत की बहुलता को राष्ट्रीय चेतना से जोड़ने में सहायक होती है। यही दृष्टि भारतीय राष्ट्र–निर्माण की उस दिशा को रेखांकित करती है, जिसमें विविधता संवाद के माध्यम से एक साझा भविष्य की ओर अग्रसर होती है।

संदर्भ –

हिंदी साहित्य एवं भारतीय बौद्धिक परंपरा :

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र. (1884). भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है. काशीः भारतेंदु ग्रंथावली।
2. दिनकर, रामधारी सिंह. (1952). संस्कृति के चार अध्याय. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
3. द्विवेदी, हजारीप्रसाद. (1954). भारतीय संस्कृति के चार अध्याय. वाराणसीः लोकभारती प्रकाशन।
4. महादेवी वर्मा. (1956). साहित्य और संस्कृति. इलाहाबादः भारती भंडार।
5. अज्ञेय. (1960). आत्मनेपद. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।
6. निर्मल वर्मा. (1986). भारत और यूरोपः प्रतिश्रुति के क्षेत्र. नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ।
7. नामवर सिंह. (1992). दूसरी परंपरा की खोज. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन।

पूर्वोत्तर भारत के लेखक एवं साहित्य :

1. Bezbaroa, L. (1909). *Assamese Literature*. Calcutta: Assam Literary Society.
2. Goswami, I. (1996). *Pages Stained with Blood*. New Delhi: Penguin India.
3. Ao, T. (2006). *These Hills Called Home: Stories from a War Zone*. New Delhi: Zubaan.
4. Datta, A. K. (2004). *The Brahmaputra*. New Delhi: Penguin India.

भारतीय संविधान एवं सरकारी नीतियाँ (पूर्वोत्तर भारत) :

1. Constitution of India. (1950). Sixth Schedule & Articles 371(A–H). New Delhi: Government of India.
2. Government of India. (1971). *North Eastern Council Act, 1971*. New Delhi: Ministry of Law and Justice.
3. Government of India. (2001). *Ministry of Development of North Eastern Region (DoNER): Annual Report*. New Delhi.
4. Government of India. (2014). *Act East Policy*. New Delhi: Ministry of External Affairs.
5. Government of India. (2015). *Ek Bharat Shreshtha Bharat Programme Guidelines*. New Delhi: Ministry of Education.
6. Government of India. (2022). *PM-DevINE Scheme Guidelines*. New Delhi: Ministry of DoNER.

शांति समझौते एवं राजनीतिक प्रक्रियाएँ :

1. Government of India. (1986). *Mizoram Peace Accord*. New Delhi: Ministry of Home Affairs.
2. Government of India. (2003). *Bodo Accord*. New Delhi: Ministry of Home Affairs.
3. Government of India. (2020). *Bodo Peace Agreement*. New Delhi: Ministry of Home Affairs.
4. Government of India. (1997). *Naga Peace Talks Framework*. New Delhi: Ministry of Home Affairs.

भाषा, शिक्षा एवं सांस्कृतिक नीति :

1. Government of India. (1963). *Official Languages Act, 1963*. New Delhi.
2. Central Hindi Directorate. (Various Years). *Hindi in North-East India*. New Delhi: Ministry of Education.
3. University Grants Commission. (2019). *Promotion of Indian Languages in Higher Education*. New Delhi.

ISSN No. : 0970-9398

विकसित भारत @2047 : पूर्वोत्तर भारत का अंतरिक्ष क्षेत्र में योगदान

–राकेश शुक्ला,
वैज्ञानिक 'एस जी', अंतरिक्ष विभाग, भारत सरकार

भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम आज विश्व के अग्रणी और विश्वसनीय कार्यक्रमों में गिना जाता है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने सीमित संसाधनों के बावजूद उपग्रह प्रक्षेपण, पृथ्वी अवलोकन, संचार, नेविगेशन, आपदा प्रबंधन तथा अंतरग्रहीय अभियानों में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं। चंद्रयान, मंगलयान, आदित्य–एल1 और गगनयान जैसे मिशनों ने भारत को अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भर और वैश्विक स्तर पर सम्मानित राष्ट्र के रूप में स्थापित किया है। भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम ने पिछले कुछ दशकों में उल्लेखनीय प्रगति की है। वर्ष 2047, जब भारत अपनी स्वतंत्रता के 100 वर्ष पूर्ण करेगा, उस समय तक अंतरिक्ष क्षेत्र में आत्मनिर्भरता, नवाचार और वैश्विक नेतृत्व का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम पिछले कुछ दशकों में वैश्विक मंच पर उल्लेखनीय प्रगति कर चुका है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के नेतृत्व में विकसित अंतरिक्ष प्रौद्योगिकियाँ कृषि, मौसम पूर्वानुमान, आपदा प्रबंधन, दूरसंचार और शिक्षा जैसे सामाजिक–आर्थिक क्षेत्रों में गहरा प्रभाव डाल रही हैं। 2047 तक "विकसित भारत" की दिशा में अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी के परिप्रेक्ष्य में पूर्वी भारत की भूमिका और योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण होगा। इस समग्र सफलता में पूर्वी भारत का योगदान विशेष रूप से महत्वपूर्ण रहा है। पूर्वी राज्यों ने प्रक्षेपण अवसंरचना, औद्योगिक सहयोग, मानव संसाधन तथा वैज्ञानिक–तकनीकी क्षमताओं के माध्यम से भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम को मजबूत आधार प्रदान किया है। पूर्वी तटीय क्षेत्र ने सुरक्षित और प्रभावी प्रक्षेपण गतिविधियों के लिए भौगोलिक लाभ उपलब्ध कराया है, वहीं इलेक्ट्रॉनिक्स, सामग्री विज्ञान और अनुसंधान संस्थानों के माध्यम से तकनीकी सहयोग भी प्रदान किया है। इस प्रकार, भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम की उपलब्धियाँ केवल राष्ट्रीय प्रयास का परिणाम नहीं हैं, बल्कि पूर्वी भारत के सतत, समर्पित और रणनीतिक योगदान का भी प्रतिबिंब हैं, जो आने वाले दशकों में भारत को वैश्विक अंतरिक्ष नेतृत्व की ओर अग्रसर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम वैज्ञानिक उत्कृष्टता, लागत–प्रभावशीलता और मिशन–सफलता के लिए विश्व स्तर पर जाना जाता है। अब फोकस केवल उपग्रह प्रक्षेपण तक सीमित न होकर स्पेस इकॉनॉमी, स्पेस सिक्योरिटी, डीप–स्पेस मिशन, मानव अंतरिक्ष उड़ान तथा निजी क्षेत्र की भागीदारी पर केंद्रित है। भारत में इसरो केंद्रों की पूर्वी भारत में उपस्थिति

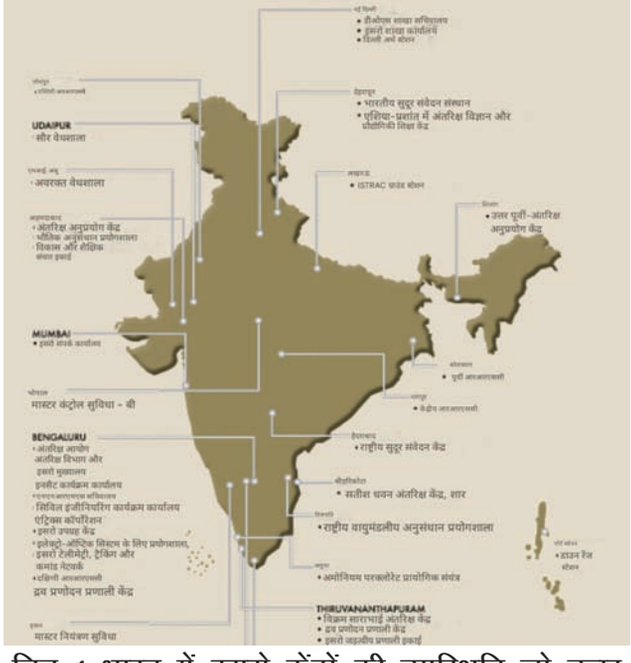

चित्र 1 भारत में इसरो केंद्रों की उपस्थिति जो उत्तर पूर्वी भारत में केंद्रों को भी दर्शाती है

चित्र –1 में दर्शाई गई है । इस संदर्भ में पूर्वी भारत, अपनी भौगोलिक स्थिति, समुद्री तट, शैक्षणिक संस्थानों और औद्योगिक क्षमता के कारण, 2047 के लक्ष्यों की प्राप्ति में एक रणनीतिक क्षेत्र के रूप में उभर रहा है। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी आज केवल वैज्ञानिक अनुसंधान तक सीमित न रहकर राष्ट्रीय सुरक्षा, आपदा प्रबंधन, जल–संसाधन प्रबंधन, कृषि, दूरसंचार और डिजिटल समावेशन जैसे अनेक रणनीतिक एवं सामाजिक–आर्थिक क्षेत्रों का आधार बन चुकी है। इस परिप्रेक्ष्य में "भारतीय अंतरिक्ष क्षेत्र" को एक समग्र राष्ट्रीय पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में देखना आवश्यक हो गया है, जिसमें देश के सभी भौगोलिक क्षेत्रों की भागीदारी और योगदान निहित है। पूर्वोत्तर भारत अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति, जैव–विविधता, संवेदनशील भू–आकृतिक संरचना और सीमावर्ती सामरिक महत्व के कारण अंतरिक्ष आधारित अनुप्रयोगों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। पर्वतीय भूभाग, घने वन क्षेत्र, बार–बार आने वाली प्राकृतिक आपदाएँ (जैसे बाढ़, भूस्खलन, भूकंप) तथा सीमित भौतिक अवसंरचना के कारण इस क्षेत्र में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी आधारित समाधान–जैसे रिमोट सेंसिंग, जीआईएस, उपग्रह संचार और नेविगेशन–का महत्व और भी बढ़ जाता है। यही कारण है कि पूर्वोत्तर भारत, उपग्रह–आधारित डेटा उपयोग और अनुप्रयोग

विकास के लिए एक "लिविंग लैबोरेटरी" के रूप में उभर रहा है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के अंतर्गत पूर्वोत्तर भारत का योगदान केवल उपभोक्ता के रूप में नहीं, बल्कि अनुसंधान, अनुप्रयोग, क्षमता निर्माण और नीति–समर्थन के स्तर पर भी क्रमशः सशक्त हो रहा है। इसरो के सुदूर संवेदन अनुप्रयोग केंद्रों, नॉर्थ ईस्टर्न स्पेस एप्लिकेशंस सेंटर, शैक्षणिक संस्थानों, तकनीकी विश्वविद्यालयों तथा राज्य सरकारों के सहयोग से इस क्षेत्र में उपग्रह डेटा आधारित अनेक परियोजनाएँ संचालित की जा रही हैं। ये परियोजनाएँ भूमि–उपयोग मानचित्रण, आपदा पूर्वानुमान, शहरी एवं ग्रामीण योजना, सीमा–क्षेत्र निगरानी, पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन अध्ययन जैसे महत्वपूर्ण विषयों को संबोधित करती हैं। इसके अतिरिक्त, "मेक इन इंडिया", "डिजिटल इंडिया" और "स्पेस सेक्टर रिफॉर्म्स" जैसी राष्ट्रीय पहलों के अंतर्गत निजी उद्योग, स्टार्ट–अप्स और शैक्षणिक अनुसंधान को बढ़ावा मिलने से पूर्वोत्तर भारत में भी अंतरिक्ष–संबंधी मानव संसाधन विकास और नवाचार की संभावनाएँ तेजी से बढ़ रही हैं। यह क्षेत्र न केवल डेटा– उपयोगकर्ता बल्कि भविष्य में अंतरिक्ष अनुप्रयोग विकास, भू–तंत्र सहयोग और क्षेत्र–विशिष्ट तकनीकी समाधान प्रदान करने वाला एक महत्वपूर्ण भागीदार बन सकता है।

पूर्वोत्तर भारत का अंतरिक्ष क्षेत्र में उभरता हुआ योगदानः

पूर्वोत्तर भारत को पारंपरिक रूप से शैक्षणिक और भौतिक अवसंरचना की चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, परंतु हाल के वर्षों में यह क्षेत्र अंतरिक्ष विज्ञान से जुड़ रहा है। इस क्षेत्र के अंतरिक्ष विज्ञान में कुछ योगदान निम्न हैं:–

- **उत्तर पूर्वी अंतरिक्ष उपयोग केंद्र (NE-SAC / निसैकः** पूर्वोत्तर भारत में उत्तर पूर्वी अंतरिक्ष उपयोग केंद्र, निसैक का गठन इसरो और उत्तर पूर्वी परिषद की साझेदारी से 2000 में हुआ था। नि–सैक मेघालय राज्य के शिलांग से लगभग 20 किमी दूर उमियम (बरापानी) में स्थित है। मेघालय सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1983 के अंतर्गत पंजीकृत सोसायटी उत्तर–पूर्वी अंतरिक्ष उपयोग केंद्र (नि–सैक), अंतरिक्ष विभाग, भारत सरकार तथा उत्तर पूर्वी परिषद (एन.ई.सी) की संयुक्त पहल है। केंद्र ने अंतरिक्ष विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र (एन.ई.आर) के आठ राज्यों को 20 साल से अधिक समर्पित सेवाएं प्रदान की है। यह केंद्र क्षेत्रीय विकास के लिए अंतरिक्ष–आधारित तकनीकी सहायता प्रदान करता है।

चित्र 2 उत्तर–पूर्वी अंतरिक्ष उपयोग केंद्र (एन.ई–सैक), अंतरिक्ष विभाग, भारत

केंद्र के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैः–

1. क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों और बुनियादी ढांचे की योजना के विकास / प्रबंधन पर गतिविधियों का समर्थन करने के लिए एक परिचालन सुदूर संवेदन और भौगोलिक सूचना प्रणाली की सहायता से प्राकृतिक संसाधन सूचना आधार प्रदान करना।
2. क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, आपदा प्रबंधन सहायता और विकास संबंधी प्रचालनी उपग्रह संचार अनुप्रयोग सेवाएं प्रदान करना।
3. अंतरिक्ष और वायुमंडलीय विज्ञान क्षेत्र में अनुसंधान करना और एन.ई.आर के विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं के साथ यंत्रीकरण हब और नेटवर्किंग स्थापित करना।
4. आपदा प्रबंधन के लिए सभी संभव स्थान आधारित समर्थन के लिए सिंगल विंडो डिलवरी को सक्षम करना।
5. भू–स्थानिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्षमता निर्माण के लिए क्षेत्रीय स्तर के बुनियादि अवसंरचना को स्थापित करना।
6. सुदूर संवेदन और भौगोलिक सूचना प्रणाली आधारित भू–मानचित्रण।
7. बाढ़ पूर्व चेतावनी प्रणाली (FLEWS) और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन कार्यक्रम।
8. उपग्रह आधारित डेटा विश्लेषण एवं वितरण।

इस केंद्र ने पूर्वोत्तर राज्यों की भौगोलिक–पर्यावरणीय समस्याओं का अंतरिक्ष तकनीकी समाधान प्रदान करने में सक्रिय भूमिका निभाई है।

यह केंद्र, सुदूर संवेदन (आर.एस) और भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी.आई.एस), आपदा प्रबंधन, उपग्रह संचार और अंतरिक्ष तथा वायुमंडलीय विज्ञान अनुसंधान के क्षेत्रों में अत्याधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित है। केंद्र में भू–स्थानिक विश्लेषण और डिजिटल इमेज प्रोसेसिंग के लिए अत्याधुनिक सर्वर और वर्कस्टेशन है, फोटोग्रामिट्री, हाइड्रोलॉजिकल मॉडलिंग, आदि के लिए बहुत ही उच्च अंत प्रणाली, जी.आई.एस और जी.एन.एस.एस उपकरण, इको साउंडर, उच्च गुणवत्ता वाले आउटपुट डिवाइस आदि हैं। केंद्र के पास भारतीय और विदेशी सुदूर संवेदन उपग्रहों से उपग्रह डेटा का समृद्ध संग्रह है, जिसमें संपूर्ण एन.ई.आर, संदर्भ मानचित्र और क्षेत्र के अन्य सहायक डेटा शामिल हैं। नि–सैक डिजिटल इमेज प्रोसेसिंग, भूस्थानिक विश्लेषण और स्थान आधारित सेवाओं को सक्षम करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्लेटफॉर्मों से डेटा से संसाधित करने के लिए अच्छी तरह से सुसज्जित है। डेटा विश्लेषण के लिए COTS और ओपन सोर्स सॉफ्टवायर दोनों से क्षमताएं और विशेषज्ञता मौजूद हैं। केंद्र के पास लीफ एरिया इंडेक्स को मापने के लिए डिजिटल प्लांट कैनॉपी एनालाइज़र भी है। केंद्र में एक दोहरी ध्रुवीकृत एस बैंड डॉपलर मौसम रडार (डी.डब्ल्यू.आर) है जो चेरापूंजी, मेघालय में स्थापित की गई है ताकि जल मौसम वैज्ञानिकीय संबंधी आपदाओं, संवहनी प्रणालियों, बादल और वर्षा भौतिकी आदि की प्रारंभिक चेतावनी में अध्ययन किया जा

सके। केंद्र में ऐरोसॉल के भौतिक और ऑप्टीकल लक्षण वर्णन के लिए एक मल्टी वेवलेंथ रेडियोमीटर (एम.डब्ल्यू.आर), सनफोटोमीटर, एथेलोमीटर, इंटीग्रेटिंग नेफेलोमीटर, इलेक्ट्रिक लो प्रेशर इम्पैक्टर (इ.एल.पी.आइ) आदि की भी मेज़बानी की जाती है। वायुमंडलीय सीमा परत भौतिकी और गतिशीलता का अध्ययन करने के लिए, केंद्र में हाइड्रोज़न गैस से भरे गुब्बारे (जी.पी.एस आधारित) सॉन्चिंग सुविधा और 4 स्तरों पर (6 मीटर, 10.5 मीटर, 18 मीटर, और 30 मीटर की ऊंचाई पर) तेज़ी से प्रतिक्रिया 3 डी सोनिक एनीमोमीटर और अन्य मौसम संबंधी उपकरणों के साथ एक 32 मीटर टॉवर है। ग्रीन हाउस गैसों के लिए ऑनलाइन गैस जैसे ऑक्साइड ऑफ सल्फेट, अक्साइड ऑफ नाइट्रोजन, कार्बन मोनो ऑक्साइड (CO), ओज़ोन (O3) और मीथेन, गैर–मीथेन हाइड्रोकार्बन का उपयोग क्षेत्रीय जीएचजी और जलवायु पर उनके प्रभाव को चिह्नित करने के लिए आवश्यक अंशांकन और केंद्रीकृत्त डेटा लॉगिंग प्रणाली के साथ किया जा रहा है। एन.ई–सैक द्वारा पूरे एन.ई.आर में फैले 118 स्वचालित मौसम स्टेशनों का एक नेटवर्क स्थापित किया गया है। माननीय केंद्रीय गृह मंत्री, भारत सरकार, आदरणीय श्री अमित शाह नि–सैक सोसायटी के अध्यक्ष हैं।

❖ **NE-SPARKS: छात्र–अंतरिक्ष जागरूकता पहल:** स्थानीय छात्रों में अंतरिक्ष विज्ञान की समझ विकसित करने के लिए एनई–स्पार्क्स (नॉर्थ ईस्ट छात्र प्रोग्राम फॉर अवेयरनेस, रीच एंड नॉलेज ऑन स्पेस) कार्यक्रम लागू किया गया। नॉर्थ ईस्ट छात्र 'प्रोग्राम फॉर अवेयरनेस, रीच, एंड नॉलेज ऑन स्पेस (NE-SPARKS) एक अनोखी पहल है जिसका मकसद भारत के नॉर्थ ईस्टर्न रीजन (NER) के छात्रों में स्पेस साइंस और टेक्नोलॉजी के बारे में जिज्ञासा जगाना और जागरूकता बढ़ाना है। यह प्रोग्राम बेंगलुरु में इसरो सेंटर के दौरे के ज़रिए छात्रों को भारत की स्पेस रिसर्च और एक्सप्लोरेशन में हुई तरक्की का अनुभव देकर भौगोलिक और जानकारी के अंतर को पाटने की कोशिश करता है। माननीय केंद्रीय गृह मंत्री और निसैक सोसाइटी के अध्यक्ष, श्री अमित शाह ने 21 दिसंबर, 2024 को हुई निसैक सोसाइटी की 12वीं बैठक के दौरान नॉर्थ ईस्टर्न रीजन के सभी 8 राज्यों के 800 होनहार साइंस छात्रों के लिए इसरो के दौरे का आयोजन करने की सलाह दी, जिसमें हर राज्य से 100 छात्र शामिल होंगे। नी–स्पार्कस प्रोग्राम युवा दिमागों को प्रेरित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है, जो उन्हें अत्याधुनिक टेक्नोलॉजी देखने, जाने–माने वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के साथ बातचीत करने का मौका देता है। एक गाइडेड टूर के ज़रिए, छात्र को इसरो के मिशन के बारे में जानकारी मिलेगी, जिससे वे साइंस, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग और मैथमेटिक्स (STEM) में अपना भविष्य देख पाएंगे। यह प्रस्ताव है कि हर यात्रा में NER के आठ राज्यों से 100 छात्र और 10 कोऑर्डिनेटर होंगे। यह प्रोग्राम एक महीने के अंतराल पर आठ बैचों में चलाया जाना है। इस प्रोग्राम को MDoNER (उत्तर पूर्वी क्षेत्र के विकास मंत्रालय) और राज्य सरकार द्वारा क्रमशः 60:40 के अनुपात में फंड दिया जाएगा। इस पहल का उद्देश्य है:

1. नॉर्थ ईस्टर्न रीजन के छात्रों को इसरो संसाधनों और मिशन के बारे में जागरूकता देना
2. छात्रों को बेंगलुरु जैसे प्रमुख अंतरिक्ष वैज्ञानिक केंद्रों का भ्रमण कराने का अवसर प्रदान करना
3. STEM शिक्षण में नयी सोच और प्रेरणा देना
4. भविष्य के वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की भूमिका को प्रोत्साहित करना। इस कार्यक्रम के तहत लगभग 800 छात्रों ने 2025 में इसरो का दौरा किया और वैज्ञानिकों से प्रत्यक्ष संवाद किया।

चित्र 3 NE–स्पार्क्स के प्रोग्राम के तहत, आठ नॉर्थ ईस्टर्न रीजन राज्यों के निन्यानवे छात्र ने 21–24 अप्रैल, 2025 के दौरान बेंगलुरु में इसरो के प्रमुख केंद्रों का दौरा किया।

❖ **लचित–1:** असम डॉन बॉस्को यूनिवर्सिटी ने क्षेत्र के पहले उपग्रह, लचित–1 का निर्माण करके एक ऐतिहासिक पल दर्ज किया। इस ऐतिहासिक मिशन का नेतृत्व असम डॉन बॉस्को यूनिवर्सिटी ने हैदराबाद स्थित स्पेस इंजीनियरिंग फर्म ध्रुव स्पेस के सहयोग से किया। आधिकारिक रिकॉर्ड के अनुसार, पहले पूर्वोत्तर भारत के किसी भी संस्थान का कोई उपग्रह पंजीकृत नहीं था, जिससे लचित–1 इस क्षेत्र का पहला उपग्रह बन गया है। महान अहोम जनरल लचित बोरफुकन के नाम पर रखे गए इस उपग्रह को लगभग 12 महीनों तक काम करने के लिए डिज़ाइन किया गया था। इसे इंटरनेट ऑफ थिंग्स टेक्नोलॉजी का उपयोग करके तापमान, आर्द्रता और प्रदूषण जैसे वायुमंडलीय और पर्यावरणीय मापदंडों की निगरानी के लिए बनाया गया था। बनाए गए उपग्रह में एक स्टोर–एंड–फॉरवर्ड कम्युनिकेशन तंत्र भी था, जो आपात स्थिति के दौरान छोटे संदेश भेजने में सक्षम बनाता है, जब पारंपरिक संचार नेटवर्क बाधित हो जाते हैं। लचित–1 एक छात्र–नेतृत्व वाला मिशन है जिसे पूरी तरह से एडीबीईयू की अपनी फंडिंग से विकसित किया गया है। यूनिवर्सिटी ने 2022 में अपना स्पेस प्रोग्राम शुरू किया और तब से उपग्रह इंजीनियरिंग, मिशन संचालन और ग्राउंड–स्टेशन प्रबंधन में अपने काम का विस्तार किया है। लॉन्च के बाद उपग्रह को ट्रैक करने और उससे संवाद करने के

लिए गुवाहाटी के पास एडीबीईयू के तपेशिया कैंपस में एक समर्पित मिशन कंट्रोल रूम स्थापित किया गया है। मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने कहा कि यह उपलब्धि राज्य सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने पर जोर को दर्शाती है और इस परियोजना में शामिल 50 छात्रों के प्रयासों की प्रशंसा की। सीएम सरमा ने आगे कहा कि उन्हें गर्व है कि उपग्रह का नाम महान अहोम जनरल लचित बरफुकन के नाम पर रखा गया है, इसे असम के इतिहास और नवाचार की भावना को एक उचित श्रद्धांजलि बताया। एडीबीईयू के रिसर्च एंड डेवलपमेंट सेल के निदेशक और लचित–1 के मिशन निदेशक प्रो. विक्रमजीत काकती ने कहा, "यह मिशन पूरे पूर्वोत्तर से युवा प्रतिभाओं को एक साथ लाता है और दिखाता है कि उपग्रह –आधारित संचार आपदा प्रतिक्रिया और क्षेत्रीय विकास में कैसे सहायता कर सकता है।" ध्रुव स्पेस के इंजीनियरों और वैज्ञानिकों ने उपग्रह के पूरे जीवनचक्र के दौरान, डिज़ाइन और असेंबली से लेकर एकीकरण और टेस्टिंग तक, एडीबीईयू के छात्रों को बारीकी से मार्गदर्शन दिया। एक बार चालू होने के बाद, लचित–1 वैश्विक शौकिया रेडियो समुदाय के लिए भी सुलभ होगा। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एमेच्योर रेडियो के साथ साझेदारी में, आपातकालीन संचार के लिए शौकिया उपग्रह के उपयोग पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएंगे। लचित–1 का विकास आज नॉर्थ ईस्ट भारत के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है, जो अंतरिक्ष विज्ञान, इनोवेशन और स्किल डेवलपमेंट में इस क्षेत्र की बढ़ती मौजूदगी को दिखाता है। ये यूनिवर्सिटी मिशन ध्रुव स्पेस के 'ASTRA (एक्सेलरेटेड स्पेस टेक्नोलॉजी रेडीनेस एंड एक्सेस) फॉर एकेडेमिया' प्रोग्राम के तहत पूरा किया गया, जो लंबे समय तक चलने वाली राज्य–स्तरीय स्पेस टेक क्षमताओं को बनाने पर फोकस करता है। ध्रुव स्पेस अपने स्पेस–क्वालिफाइड पी–डॉट उपग्रह प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल करके इस तरह मिशनों को तैनात कर रहा है, लॉन्च व्हीकल एकीकरण के लिए स्पेसक्राफ्ट को अपने डीएसओडी–1यू पृथक्करण तंत्र के साथ एकीकृत कर रहा है, और मिशन ऑपरेशन के लिए कैंपस में सॉवरेन ग्राउंड स्टेशन स्थापित कर रहा है।

❖ **शिक्षा, अनुसंधान एवं मानव संसाधन विकास:** 2047 तक अंतरिक्ष क्षेत्र की सफलता का मूल आधार कुशल मानव संसाधन होगा। पूर्वी भारत में IIT, NIT, केंद्रीय विश्वविद्यालयों और राज्य तकनीकी संस्थानों की भूमिका प्रशंसनीय है। स्पेस साइंस, एयरोस्पेस इंजीनियरिंग और साइबर–स्पेस सिक्योरिटी में विशेष पाठ्यक्रम जैसे उद्योग–शिक्षा–अनुसंधान सहयोग मॉडल जोड़े जा रहे हैं । पूर्वोत्तर भारत के लोगों के लिए अंतरिक्ष क्षेत्र में विश्वविद्यालयी शिक्षा न केवल उच्च तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम है, बल्कि यह क्षेत्रीय विकास, राष्ट्रीय एकीकरण और वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भागीदारी का सशक्त साधन भी है। पूर्वोत्तर के विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में एयरोस्पेस इंजीनियरिंग, अंतरिक्ष विज्ञान, रिमोट सेंसिंग, भू–सूचना प्रणाली, डेटा विज्ञान, खगोल भौतिकी और उपग्रह संचार जैसे विषयों की शिक्षा युवाओं को आधुनिक अंतरिक्ष प्रौद्योगिकियों से जोड़ रही है। इसरो, निसैक और अन्य राष्ट्रीय संस्थानों के सहयोग से चल रहे इंटर्नशिप, शोध परियोजनाएँ, छात्र उपग्रह कार्यक्रम और क्षमता–निर्माण पहलें पूर्वोत्तर के विद्यार्थियों को व्यावहारिक अनुभव प्रदान करती हैं। इससे न केवल स्थानीय प्रतिभाओं का पलायन रुकता है, बल्कि क्षेत्र के युवा वैज्ञानिक, इंजीनियर और शोधकर्ता भारत के चंद्र, सूर्य, पृथ्वी अवलोकन और भविष्य के मानव अंतरिक्ष अभियानों में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए तैयार हो रहे हैं, जो अंततः देश की अंतरिक्ष आत्मनिर्भरता और समावेशी विकास को सुदृढ़ करता है।

❖ **2047 की अंतरिक्ष परिकल्पना में पूर्वोत्तर भारत में आने वाली चुनौतियाँ और समाधान:** 2047 के परिप्रेक्ष्य में पूर्वोत्तर भारत में अंतरिक्ष अनुसंधान के विकास के सामने कई तकनीकी, भौगोलिक और संस्थागत चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इस क्षेत्र की कठिन भौगोलिक संरचना, घने वन, पर्वतीय भूभाग और सीमित कनेक्टिविटी के कारण उन्नत प्रयोगशालाओं, ग्राउंड स्टेशन और परीक्षण अवसंरचना की स्थापना चुनौतीपूर्ण बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, उच्च स्तरीय मानव संसाधन, विशेषीकृत अंतरिक्ष शिक्षा, अनुसंधान निधि और उद्योग–शैक्षणिक सहयोग की अभी भी कमी देखी जाती है। मौसम की अत्यधिक परिवर्तनशीलता, अधिक वर्षा और भूस्खलन जैसी प्राकृतिक परिस्थितियाँ फील्ड–आधारित अनुसंधान और उपकरण तैनाती को प्रभावित करती हैं। साथ ही, डेटा सुरक्षा, साइबर अवसंरचना, उपग्रह डेटा की स्थानीय प्रोसेसिंग क्षमता और स्टार्ट–अप इकोतंत्र का सीमित विकास भी प्रमुख बाधाएँ हैं। यदि इन चुनौतियों का समाधान नीतिगत समर्थन, क्षेत्रीय अंतरिक्ष केंद्रों, कौशल विकास और डिजिटल अवसंरचना के माध्यम से किया जाए, तो पूर्वोत्तर भारत 2047 तक भारत के अंतरिक्ष अनुसंधान और अनुप्रयोग क्षेत्र में एक सशक्त और रणनीतिक भागीदार के रूप में उभर सकता है।

निष्कर्ष: 2047 तक भारत को एक वैश्विक अंतरिक्ष शक्ति बनाने में पूर्वी भारत की भूमिका निर्णायक होगी। प्रक्षेपण अवसंरचना, अनुसंधान संस्थान, युवा मानव संसाधन और उभरता औद्योगिक पारिस्थितिकी तंत्र इस क्षेत्र को भारत के अंतरिक्ष भविष्य का एक मजबूत स्तंभ बनाते हैं। सही नीतिगत समर्थन, निवेश और तकनीकी दृष्टि के साथ पूर्वी भारत न केवल राष्ट्रीय बल्कि वैश्विक अंतरिक्ष परिदृश्य में भी अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करेगा।

संदर्भ सूची :

1. https://www.isro.gov.in
2. https://nesac.gov.in/

ISSN No. : 0970-9398

जेलियांग नागा जनजाति में ग्राम स्थापना की परंपरा

– डॉ. थुन्बुई
सहायक प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, दीमापुर

'जेलियांग' पूर्वोत्तर भारत की एक प्रमुख नागा जनजाति है। यह जनजाति वर्तमान में असम, मणिपुर तथा नागालैंड के संलग्न जिलों– पेरेन (नागालैंड), एन. सी. हिल्स. (अब दिमा हसौ, असम) तथा तमेंगलोंग एवं सेनापति (मणिपुर) में निवास करती है। सदियों पूर्व नागा जनजातियाँ किसी अनजान जगह से प्रवर्जित होकर मखेल (मणिपुर) आये थे। यहीं से वे फिर अपने–अपने वर्तमान क्षेत्र की ओर फैलते चले गए। जेलियांगरोंग समुदाय का इतिहास है कि ये मखेल से निकलकर रामतिंग कबिन, चेवांग फुंगनिंग और मकुइल्वांग्दी होते हुए अपने वर्तमान क्षेत्र में आए। वास्तव में मकुइल्वांग्दी से जेलियांगरोंग संस्कृति का बीजवपन हुआ था। यहीं से जेमै, लियांग्मै और रोंगमै अपनी–अपनी विशिष्टताओं के साथ अलग–अलग स्थानों की ओर चले गए। परंतु प्रव्रजन की यह प्रक्रिया अचानक या तेजी से न होकर धीरे–धीरे हुई थी। इस संदर्भ में प्रो. गांग्मुमई कामै लिखते हैं, "It must have taken centuries for the ancestors of the Nagas including the Zeliangrong people to move down from …… and then moving into their present habitat. "i

जेलियांग जनजाति के सामाजिक जीवन में 'ग्राम' अपने आप में सम्प्रभुसंपन्न एवं स्वतंत्र इकाई के रूप में अस्तित्व में रहा है और नए गाँव की स्थापना तथा उसमें क्रियान्वित किए जाने वाले अनुष्ठान अत्यंत महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। यह परंपरा उन दिनों से चली आ रही है, जब ये बंजारों की तरह भ्रमणशील जीवन व्यतीत किया करते थे। ध्यातव्य बात यह है कि अस्थायी रूप से किसी स्थान पर अपने निवास स्थान निर्धारित करने के लिए भी ये किसी न किसी प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान करके ही कुछ समय के लिए ही सही, उस स्थान में निवास करते थे, जिसका वर्तमान स्वरुप झूम कृषि प्रणाली के रूप में देखा जा सकता है। कालांतर में लोगों ने घुमंतुक जीवन का परित्याग करते हुए अपने बस्तियों को स्थायी रूप में स्थापित किया परंतु कृषि की दृष्टि से ये एक निश्चित परिसीमा के दायरे में ही सही, हर दो या तीन वर्ष में अपने कृषि–क्षेत्र को बदलते रहे, जो आज भी यथावत है। इस प्रकार एक गाँव में निवास करते हुए जिस भूमि–परिसीमा तक लोग झूम–कृषि के लिए पहुँच पाते थे, वही बाद में उस गाँव की परिसीमा भी बन गई और उस संपूर्ण भू–भाग पर उसी गाँव का आधिपत्य माना जाने लगा। इस प्रकार लोगों द्वारा जहाँ आरंभ में अपने को स्थायित्व प्रदान करने के लिए नए ग्राम–स्थापना की नींव पड़ी, वहीं वर्तमान में विकास एवं जनसंख्या–वृद्धि के कारण नए गाँवों को बसाने की निरंतरता बनी हुई है। यद्यपि समय के साथ इस परंपरा के विधि–विधानों में आए पर्याप्त अंतर रेखांकित किए जा सकते हैं, फिर भी जिस परिकल्पना के साथ जेलियांग समुदाय ने आरंभ में अपनी 'बसति' बनाई, वह रोचक ही नहीं, बल्कि सामाजिक एवं धार्मिक जीवन की दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहे हैं।

नए ग्राम–स्थापना में भूमि, वहाँ रहने के लिए आए लोग, गाँव का मुख्य द्वार, जल–स्रोत, तुखुन, तज्वंग–तकुंग तथा मुखिया कुछ ऐसे तत्त्व हैं, जिनके बारे में प्रायः सभी लोगों की स्पष्ट धारणा होती हैं। ऐसे में, जब भी लोगों को ऐसा स्थान मिलता कि अमुक जगह गाँव बसाने योग्य है, तब वे सर्वप्रथम उस स्थान को साफ करके ग्राम–स्थापना की प्रक्रिया को आरंभ करते थे। नए गाँव को बसाने के लिए स्थान का चयन कई बातों को ध्यान में रखकर किया जाता था। तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ग्राम–स्थल के चयन में सुरक्षा को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता था। संभवतः अन्य जनजातियाँ अथवा अपनी जाति के ही अन्य जनसमूह भी कबायली जीवन जीते हुए अपने निवास के लिए नए स्थान की खोज में लगे रहते थे। ऐसे में, कभी–कभी जब कोई समूह अपने से कमज़ोर लोगों के द्वारा बसाए हुए गाँव को देखता, तब वे उस पर धावा बोल देते और उस पर अधिकार कर लेते या उन्हें लूट लेते थे। इसलिए जेलियांग परंपरा के अनुसार, गाँवों को ऐसे स्थान पर बसाया जाता था, जहाँ से आने वाले खतरे को आसानी से भाँपा जा सके या फिर किसी आक्रमण का प्रत्युत्तर अपेक्षाकृत अधिक मजबूती के साथ दिया जा सके, जिसके लिए उस जगह की ऊँचाई का अत्यधिक महत्त्व था। यही कारण है कि इनके प्रायः सभी प्राचीन गाँव किसी पहाड़ी श्रृंखला के शिखर पर बसे होते थे, जिसके एक तरफ खाई होती थी, तो दूसरी ओर ढलान या कतिपय गाँवों में मैदानी क्षेत्र भी होते थे, "The site of the village was normally located on the hilltops on the consideration of defense, security and health."ii गाँवों को अपेक्षाकृत ऊँचे स्थानों पर बसाने के संबंध में एक तथ्य यह भी हो सकता है कि लोग जमीन के जल–मग्न होने या बाढ़ जैसी स्थिति से बचने के लिए भी इस परंपरा के पीछे चल पड़े होंगे क्योंकि अधिकांश नागा–जनजातियों के संबंध में यह धारणा रही है कि अपनी सभ्यता के किसी न किसी चरण में ये लोग सागर तट या जलीय परिवेश में भी रहे थे, जिसके कारण इनके आभूषणों एवं सजावट की वस्तुओं में शंखों एवं कौड़ियों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। ऐसे में उन्हें निचली भूमि पर बसने से होने वाली परेशानियों तथा प्राकृतिक आपदाओं के बारे में भलीभाँति जानकारी रही होगी और इसलिए संभव है कि उन्होंने अपने प्रव्रजन के अंतिम चरण

ISSN No. : 0970-9398

में ऊँचे स्थानों को अपने निवास के लिए चुना हो।

न्नुई (यंखुल्लेन) नामक गाँव का मुख्य द्वार

नए गाँव की स्थापना में इस बात का भी ध्यान रखा जाता था कि आसपास जल का कम से कम एक अच्छा–सा स्रोत हो जिसे 'दुइन्ख्यू', 'अखुन' या 'तक्वा' कहा जाता है। सुरक्षा को अधिक महत्त्व देते हुए जब गाँव को पहाड़ी के शिखर पर बसाया जाता था, तब गाँव के बीचों–बीच जल के स्रोत का होना असंभव–सा हो जाता था। अतः ढलान की ओर नीचे ऐसी जगह देखी जाती थी, जहाँ गाँव के सभी लोगों के लिए पर्याप्त जल की प्राप्ति हो सके तथा गाँव से उतनी ही दूरी पर हो, जहाँ औरतें तथा बच्चे जल–संग्रह एवं स्नानादि के लिए सुगमतापूर्वक पहुँच सकें। गाँव की स्थापना के साथ ही यह भी परंपरा रही है कि रिहायशी क्षेत्र एवं जल–स्रोत के आसपास वृक्षों का संरक्षण होता रहे, जिसे स्थानीय बोली में 'रम्बौ मज्वक्बो' कहा जाता है, "Katingmai niu kiluang khen ga singbang-singnui majuakjiu namlun pi kam mawi khai bambo setu Rambow Majuokbo chiu kuhweh"iii अर्थात– पुरखों के द्वारा गाँव की परिसीमा में हरियाली एवं पेड़ों को संरक्षित करते हुए उसे शोभायमान बनाए रखने को 'रम्बौ मज्वक्बो' कहा जाता है। गाँव के आसपास वृक्ष–संरक्षण के पीछे यह धारणा रही है कि आँधी–तूफ़ान या तेज हवा के आने एवं झूम–कृषि को जलाते समय निकलने वाली आग की तेज लपटों से गाँव की रक्षा यही वृक्ष करते हैं तथा जल–स्रोत के आसपास घने वन को बनाए रखने के पीछे इनके पुरखों को उन दिनों भी इस बात का भलीभाँति ज्ञान था कि वन के कारण ही उन जल–स्रोतों के जीवन की निरंतरता बनी रहती है। ग्राम–स्थापना के संबंध में यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि जब भी जेलियांग समाज के किसी गाँव से कुछ लोग नए गाँव बसाने के लिए अपने पैतृक गाँव से निकलते थे, तो उसमें प्रायः तीन 'किखुन' (कुल या वंश) के लोग होते थे। इसके पीछे लोगों की यह मान्यता रही है कि यदि किसी कारणवश किन्हीं दो कुल के लोगों में झगड़ा, मनमुटाव अथवा मतभेद हो जाता है, तब उनके बीच मध्यस्थता के लिए तीसरे परिवार की आवश्यकता पड़ती है, "Usually, the (new village) settlers consisted of two or more exogamous clans. They were related by marriage."iv तीन कुल के होने से गाँव के भीतर ही परस्पर शादी–ब्याह की सुविधा भी होती है, क्योंकि जेलियांग समाज में विवाह के अंतर्गत 'नौख्यक'[1] को अनुचित माना जाता है। यदि किसी गाँव में केवल दो ही कुल के परिवार होते थे, तब ऐसे में न चाहते हुए भी उन्हें नौख्यक करने पड़ते थे। उत्तर कछार के जेमे लोगों की गाँव–स्थापना के बारे में 'श्रीमती उर्सुला ग्राहम बावर' लिखती हैं कि किसी एक गाँव को बसाते समय एक मुखिया के साथ उसका एक सहायक भी होता था। अधिकांश परिस्थितियों में दोनों ही अलग–अलग कुल से तथा जीजा–साले का संबंध रखने वाले होते थे। ये दोनों ही स्वतः उस गाँव की संपूर्ण भूमि के स्वामी होते थे। कालांतर में उनके वंश से ही मुखिया भी चुने जाते थे, "These hereditary landowners were called kadeipeo (kelodeipeu), 'man of the soil', and rarely, when there was no candidate of suitable age, did an outsider rise to leadership."v यहाँ यह तथ्य भी निकलकर आता है कि यदि किसी अंतराल पर मुखिया के वंश में कोई ऐसा वयस्क पुरुष न हो, जो मुखिया की भूमिका का निर्वहन कर सकें, तब अन्य व्यक्ति को भी मुखिया बनाया जाता था।

जेलियांग समाज के प्रत्येक गाँव में मुख्य द्वार, तुखुन[2] तथा 'तज्वंग–तकुंग' महत्त्वपूर्ण स्थान होते हैं । हर गाँव में दो मुख्य द्वार होते हैं, जो प्रायः उसके उत्तरी एवं दक्षिणी छोर पर स्थित होते हैं। गाँव का विस्तार रेखीय रूप में उत्तर–दक्षिण या पूरब–पश्चिम दिशा में फैला होता था। यदि गाँव का विस्तार उत्तर–दक्षिण न होकर पूरब–पश्चिम होता था, तो उसमें पूर्वी एवं पश्चिमी द्वार होते थे। दोनों द्वार सुरक्षा की दृष्टि से विशेष रूप से बनाए जाते थे, जिन पर पत्थरों की ऊँची दीवार होती थीं और उस पर से चढ़कर गाँव में प्रवेश करने के लिए पत्थरों के ही पायदान बने होते थे। संकटकाल में इन पर गाँव के लोग पहरा देते थे और ऊँचाई पर रहकर अपेक्षाकृत नीचे से आ रहे शत्रुओं पर आसानी से आक्रमण करते थे। पहाड़ी श्रृंखला पर बसे गाँव के एक ओर प्रायः खाई होती थी, जिस तरफ घर नहीं बनाए जाते थे और दूसरी ओर ढलान या मैदानी क्षेत्र में घरों को रेखीय रूप में इस तरह से बसाया जाता था कि दोनों मुख्य द्वारों के अतिरिक्त गाँव में प्रवेश करने के लिए रास्ता न बचे। शत्रु अथवा बाहरी व्यक्ति गाँव में छुपकर न घुस सके – इसके लिए दो घरों के बीच जगह न के बराबर छोड़ी जाती थी। किसी गाँव का जल–स्रोत जब गाँव से दूर होता था, तब संकटकाल में उस जल–स्रोत तक गाँव के युवकों का पहरा रहता था। 'तज्वंग–तकुंग' गाँव के भीतर रखे एक विशेष पत्थर को कहा जाता है। जेलियांग परंपरा के अनुसार, यह पत्थर गाँव के लिए स्थायी रूप से बनी लंबी–कूद प्रतियोगिता स्थान के पायदान पर रखा जाता है। त्यौहारों में इसी पत्थर पर पैर रखकर लंबी–कूद कूदी जाती है। तुखुन नामक चबूतरे पर ही गाँव के शुद्धीकरण के लिए 'बुइनुंग–फुंग'[3] अनुष्ठान को संपादित किया जाता था और कालांतर में यही स्थान 'ग्राम–सभा' की बैठकों के लिए भी उपयोग किया जाने लगा।

ग्राम–स्थापना के लिए स्थान चयनित हो जाने तथा उसमें मुख्य–द्वार, तुखुन एवं तज्वंग–तकुंग जैसे स्थानों को निश्चित करने के पश्चात ग्राम–प्रवेश की प्रक्रिया प्रारंभ की जाती थी। इस प्रक्रिया में सबसे पहले सूखी लकड़ियों एवं हरे पत्तों को एकत्र करके अग्नि प्रज्ज्वलित की जाती थी। ऐसी

[1] विवाह में दो परिवारों के बीच लड़कियों का आदान–प्रदान होना।

[2] गाँव के भीतर किसी नियत स्थान पर पत्थरों से बनाया गया गोलाकार अथवा वर्गाकार ऊँचा चबूतरा।

मान्यता है कि यदि आग से निकलने वाला धुआँ सीधे आकाश की ओर जाता है, तो वह स्थान गाँव बसाने के लिए शुभ होता है और इसके विपरीत यदि धुआँ ऊपर न जाकर चारों ओर फैल जाए, तो उस जगह को गाँव बसाने के लिए अशुभ माना जाता है। शगुन अच्छा होने पर सभी लोग, गाँव के किसी एक मुख्य द्वार के लिए चयनित स्थान के पास गाँव से बाहर की ओर एक रात बिताते थे। किसी–किसी परंपरा के अनुसार, जिस व्यक्ति का मुर्गा सुबह के समय सबसे पहले बांग दे देता था, वही उस गाँव का मुखिया चुन लिया जाता था। ऐसे में यहाँ यह तथ्य भी निकलकर आता है कि लोग ग्राम स्थापना के लिए किसी पुराने गाँव से निकलते समय अपने मवेशियों– पालतू पशु–पक्षियों को भी साथ लिए होते थे।

अगली सुबह गाँव के लोग मुर्गे, सूअर या किसी अन्य पशु की बलि देकर फिर से शगुन का परीक्षण करते थे। मुर्गे को गला दबाकर मारा जाता था। यदि मरते हुए मुर्गे की दाईं टांग बाईं के ऊपर पड़ जाती, तो उसे शुभ संकेत माना जाता था। सूअर या किसी अन्य पशु की बलि दी जाने पर उसके प्लीहे को निकालकर उसका निरीक्षण–परीक्षण किया जाता था। ऐसा माना जाता है कि यदि उसके प्लीहे का आकार सामान्य रूप से ठीक–ठाक हो– अर्थात उसमें कोई निशान न हो अथवा वह कटा–फटा न हो, तो वह गाँव के भविष्य के लिए शुभ होता है। "If there was no crack or breach of the boiled egg or if the right leg of the fowl fell on the left leg or if there was no blemish on the spleen of the pig, it was all regarded as a good omen."[vi] प्रो. कामेई के इस उद्धरण से यह भी स्पष्ट होता है कि उबले हुए अंडे के परीक्षण से भी नए गाँव की शुभता का आँकलन किया जाता था। इसके बाद गाँव का होने वाला मुखिया, जिन्हें नम्पौ या कलोदेइपेउ कहा जाता है; सबसे पहले उस स्थान में प्रवेश करता, जहाँ मुख्य–द्वार बनाया जाना होता है। वह उस स्थान पर अपने भाले को गाड़कर खड़ा कर देता था, जिसे ग्राम–प्रवेश कर रहे सभी लोग शुद्धीकरण की प्रक्रिया के रूप में छूकर अन्दर प्रवेश करते थे।

'तुखुन' पर ग्राम सभा की बैठक

इसके बाद सभी लोग तज्वंग–तकुंग (अथवा कभी–कभी तुखुन) के पास जाकर विशिष्ट घर्षण–प्रक्रिया से आग को प्रज्ज्वलित करते थे। अग्नि को प्रज्ज्वलित करने के लिए बाँस के रेशे, लकड़ी तथा बेंत के शुष्क रस्सी का प्रयोग किया जाता है, जिनके घर्षण से अग्नि उत्पन्न होती है। उल्लेखनीय है कि इसी से घर के चूल्हे में आग जलाई जाती थी और हर संभव यह प्रयास रहता था कि उसे कभी बुझने न दिया जाए। जेलियांग जनजाति में घर के चूल्हे में अग्नि–शमन हो जाने को अपशकुन माना जाता है। इसलिए आज भी रात्रि को सोने से पहले अच्छी लकड़ी को जलाकर उसे राख के अन्दर दबा दिया जाता है और सुबह उठने पर उसी चिंगारी से पुनः आग जलाई जाती है। इस प्रकार, ग्राम–प्रवेश के दिन जिस घर्षण प्रक्रिया से आग उत्पन्न की गई थी, जीवन–पर्यंत उसी आग से घर प्रज्ज्वलित रहता है। यह भी उल्लेखनीय है कि जब कोई नया परिवार अपने पितृ–परिवार से अलग होकर नए घर का निर्माण करता है, तब भी या तो घर्षण से अग्नि उत्पन्न की जाती है या फिर पितृ–परिवार के घर से ही प्रज्ज्वलित मशाल लाकर नए घर में आग जलाई जाती है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि पितृ–घर में प्रज्ज्वलित आग उसी अग्नि का अंश है, जिसे ग्राम–प्रवेश के दिन उत्पन्न किया गया था। इसी अवधारणा के साथ लोग आज भी गृह प्रवेश के समय माचिस या लाइटर से नहीं, बल्कि किसी पुराने घर से अग्नि मांगकर आग जलाना आरंभ करते हैं।

ग्राम स्थापना के संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि जेलियांग जनजाति के लोग अपना स्थायी घर बनाने के पहले गाँव के लिए महत्त्वपूर्ण स्थान– तज्वंग–तकुंग, तुखुन, मुख्य–द्वार, दुइन्ख्यू (जल–स्रोत) को सुव्यवस्थित करते थे। इनमें से तज्वंग–तकुंग एवं तुखुन ग्राम–स्थापना के विधि–विधान में प्रयुक्त होते थे, अतः संभवतः उन्हें सबसे पहले बनाया जाता रहा होगा। यद्यपि मुख्य–द्वार की भी ग्राम–प्रवेश के विधान में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, फिर भी आरंभ में इसका प्रयोग प्रतीकात्मक रूप में किया जाता था और गाँव को बसाने के बाद ही इसका पूर्ण–निर्माण किया जाता था क्योंकि इसे मजबूती प्रदान करने के लिए इसमें बड़े–बड़े पत्थरों का भी प्रयोग किया जाता था, जिसमें संभवतः कई महीने भी लग जाते थे। यह भी उल्लेखनीय है कि गाँव के दोनों मुख्य–द्वार कुछ वर्षों के अंतराल पर फिर से मरम्मत करके और भी अधिक सशक्त बनाए जाते थे। जिन गाँवों के पास एक से अधिक जल–स्रोत होते थे, वे म्पुईमै दुइन्ख्यू (महिलाओं के लिए) तथा म्यूमै दुइन्ख्यू (पुरुषों के लिए) अलग–अलग बनाते थे और प्रायः निकट वाले जलस्रोत को महिलाओं के लिए बनाया जाता था।

संदर्भ सूची

i. A History of the Zeliangrong Nagas, Gangmumei Kamei, Spectrum Publications: New Delhi and Guwahati, 2004, page- 29.

ii. Ibid, page- 336

iii. ALIUH NAIH PAWAN: Annual Magazine, Dr. Hunibou Newmai, Liangmai Foundation. (December- 2021, Vol. 3), Liangmai Chengh, page-10.

iv. A History of the Zeliangrong Nagas, Gangmumei Kamei, Spectrum Publications: New Delhi and Guwahati, 2004, page- 324.

v. Naga Path, Ursula Graham Bower, Spectrum Publications: Guwahati, 2002, page- 72

vi. A History of the Zeliangrong Nagas, Gangmumei Kamei, Spectrum Publications: New Delhi and Guwahati, 2004, page- 324.

[3] ग्राम प्रवेश के समय अथवा उसके कुछ दिनों के भीतर मिथुन जैसे पशु की बलि देकर धार्मिक अनुष्ठान की जाने वाली प्रथा।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक सेतु के रूप में राजभाषा हिंदी

–राकेश कुमार
सहायक निदेशक (रा.भा.)
रक्षा मुख्यालय प्रशिक्षण संस्थान, रक्षा मंत्रालय

भारत विश्व के सबसे समृद्ध और जटिल भाषायी परिदृश्य वाले देशों में से एक है। यहां भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्मृति, सामाजिक पहचान और ऐतिहासिक निरंतरता की वाहक भी है। भारतीय संविधान ने इस भाषायी विविधता को लोकतांत्रिक ढंग से स्वीकार किया है। हिंदी और अंग्रेज़ी के साथ–साथ आठवीं अनुसूची में सम्मिलित अनेक स्वदेशी भाषाएँ प्रशासन, शिक्षा और सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय ज्ञान, लोकपरंपरा और जनभावनाओं को संरक्षित रखती हैं, जबकि संपर्क भाषा के रूप में हिंदी राष्ट्रीय स्तर पर संवाद का सेतु बनती है। शिक्षा, साहित्य, मीडिया और डिजिटल मंचों पर हो रहे बहुभाषिक प्रयोग भारत की रचनात्मक ऊर्जा को निरंतर समृद्ध कर रहे हैं।

पूर्वोत्तर भारत भाषायी दृष्टि से इसलिए विशिष्ट है क्योंकि इस भाग में अनेक जनजातीय, क्षेत्रीय और आदिवासी भाषाएँ विस्तृत रूप से प्रचलित हैं। इसकी भाषायी संरचना में तिब्बती–बर्मी, इंडो–आर्यन और ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषा–परिवारों का मिश्रण मौजूद है। इस विविधता में हिंदी संपर्क भाषा के रूप में स्थापित होकर संवाद के सशक्त माध्यम के रूप मे अपनी मौजूदगी दर्ज कर रही है। स्थानीय रिपोर्टों से पता चलता है कि वर्तमान में असम, त्रिपुरा और मिजोरम जैसे राज्यों में हिंदी का उपयोग न केवल शिक्षा संस्थानों में हो रहा है बल्कि नियोक्ताओं, व्यापारियों और सेवा–क्षेत्र के कामगारों के दैनिक जीवन में भी नजर आ रहा है। मिजोरम में सरकारी प्रयासों के तहत हिंदी शिक्षकों के पदों में वृद्धि की चर्चा शिक्षा जगत में हो रहे सुधार की ओर संकेत कर रही है।

विश्वभर की भाषाओं के अध्ययन, प्रलेखन, संरक्षण और विकास के क्षेत्र में कार्यरत प्रतिष्ठित अंतरराष्ट्रीय, गैर–लाभकारी शोध एवं शैक्षणिक संस्थान एसआईएल इंटरनेशनल (SIL International) भाषा के उस महत्व को उजागर करता है जिसके अभाव में मानव जीवन संभव नहीं है। इसके द्वारा प्रकाशित एथ्नोलॉगः लैंग्वेज़ेज़ ऑफ़ द वर्ल्ड (Ethnologue: Languages of the World) विश्व का भाषा का सबसे प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथ माना जाता है तथा इसमें 7,000 से अधिक जीवंत भाषाओं का विवरण मिलता है। डिजिटल भाषा संसाधनों के विकास यथा भाषा कोड, फॉन्ट विकास, यूनिकोड सहयोग में एसआईएल का योगदान परिलक्षित है। एथ्नोलॉग के अनुसार पूरी दुनिया में सबसे अधिक जीवंत भाषा बोलने वाले शीर्ष पांच देशों में सर्वाधिक 840 से अधिक जीवंत भाषाओं वाला देश पापुआ न्यू गिनी तथा इंडोनेशिया, नाइजीरिया के बाद करीब 450 भाषाओं वाला हमारा देश भारत चौथे स्थान पर है जिसके बाद चीन का नाम आता है। इंडोनेशिया में 710, नाइजीरिया में 520 तथा चीन में 300 से अधिक भाषाएं बोली जाती हैं।

एथ्नोलॉग के आंकड़ों के अनुसार विलुप्त भाषाओं सहित भारत में करीब 450 भाषाएं हैं जिनमें से हिंदी संघ की राजभाषा होने के साथ–साथ कई राज्यों की राजभाषा भी है। राज्य स्तर पर असमिया, बांग्ला, पंजाबी, गारो, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, खासी, कोंकणी, मैथिली, मलयालम, मराठी, मैतेई, नेपाली, ओड़िया, तमिल, तेलुगू और उर्दू को भी राजभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। देश में 11 स्वदेशी भाषाएँ ऐसी भी थी जो अब विलुप्त हो चुकी हैं। इसके अतिरिक्त यहां 30 जीवंत गैर–स्वदेशी भाषाएँ भी प्रचलित हैं। इनमें से अंग्रेज़ी एक ऐसी भाषा है जिसे देश की सहायक राजभाषा तथा कुछ राज्यों की राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। देश की औपचारिक शिक्षा प्रणाली में 26 स्वदेशी भाषाओं का उपयोग शिक्षण के माध्यम के रूप में किया जाता है।

एथ्नोलॉग के आंकड़े यह दर्शाते हैं कि जीवंत भाषाओं में से देश में 44 भाषाएँ संस्थागत (Institutional) हैं। ये वे भाषाएँ हैं जो इतनी विकसित हो चुकी हैं कि इनका उपयोग घर और समुदाय से आगे बढ़कर शैक्षिक, प्रशासनिक या अन्य संस्थागत स्तरों पर भी किया जाता है और ये वहीं संरक्षित व प्रचलित हैं। 247 भाषाएँ स्थिर (Stable) श्रेणी में आती हैं तथा ये भाषाएँ औपचारिक संस्थानों द्वारा संरक्षित नहीं हैं, लेकिन घर और समुदाय में अभी भी सामान्य रूप से प्रयुक्त हो रही हैं और बच्चे इन्हें स्वाभाविक रूप से सीखते और बोलते हैं। 133 भाषाएँ संकटग्रस्त (Endangered) हैं तथा इन भाषाओं में अब यह सामान्य स्थिति नहीं रही कि बच्चे इन्हें सीखें और प्रयोग करें और यदि संरक्षण के प्रयास नहीं किए गए, तो इनके लुप्त होने का खतरा बढ़ सकता है। इनके अतिरिक्त 11 भाषाएँ विलुप्त (Extinct) हो चुकीं हैं तथा अब पूरी तरह प्रयोग से बाहर हैं और न ही कोई ऐसा समुदाय बचा है जो इन्हें अपनी जातीय या सांस्कृतिक पहचान से जोड़ता हो।

भाषाओं के संवर्धन, विकास और संरक्षण की दिशा में

भारत अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं को अपनाने में सदैव सक्रिय रहा है। यूनेस्को का सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की विविधता का संरक्षण और संवर्धन पर अभिसमय (PPDCE 2006) सांस्कृतिक और भाषायी विविधता के संरक्षण एवं संवर्धन को बढ़ावा देता है जिसका भारत सरकार समर्थन करती है तथा अपनी बहुसांस्कृतिक एवं बहुभाषिक परंपरा के अनुरूप सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की विविधता को संरक्षित करने के लिए प्रतिबद्ध है। अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण हेतु अभिसमय (CSICH–2005) लोकपरंपराओं, मौखिक परंपराओं, भाषाओं और पारंपरिक ज्ञान के संरक्षण से संबंधित है। भारत इसका हस्ताक्षरकर्ता है और यूनेस्को की अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर सूचियों में अनेक भारतीय परंपराओं को शामिल कराया गया है।

नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय संधि (ICCPR –1979) को भारत ने स्वीकार किया है तथा इसके लिए सरकार अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म के संरक्षण का अधिकार प्रदान करती है। भारत द्वारा अनुमोदित दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (UNCRPD–2007) के अंतर्गत भाषा, संचार और सूचना तक समान पहुँच सुनिश्चित करने की प्रतिबद्धता व्यक्त की गई है। भारत ने स्वदेशी (आदिवासी) लोगों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र घोषणा (UNDRIP–2007) का समर्थन किया है, जो स्वदेशी समुदायों की भाषाओं, संस्कृति, शिक्षा और पहचान के संरक्षण पर विशेष बल देती है।

उपर्युक्त अंतरराष्ट्रीय प्रावधानों के अनुरूप भारत का विधायी ढाँचा भाषायी विविधता, बहुभाषिकता और हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण को लोकतांत्रिक आधार प्रदान करता है। विधायी प्रावधान भाषाओं को केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अधिकार के रूप में मान्यता देते हैं। संविधान के अनुच्छेद 29 एवं 30 के अंतर्गत भाषायी अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति के संरक्षण तथा शिक्षण संस्थान स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया गया है तथा अनुच्छेद 343 के तहत हिंदी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया है। साथ ही, अनुच्छेद 345 में राज्यों को अपनी राजभाषा निर्धारित करने का अधिकार दिया गया है, जबकि अनुच्छेद 350क में मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था के प्रावधान हैं।

भाषायी अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के प्रावधान अनुच्छेद 350ख में किए गए हैं। साथ ही, अनुच्छेद 351 में भारतीय भाषाओं के समन्वय के साथ हिंदी के विकास के निदेश दिए गए हैं। आठवीं अनुसूची में 22 भारतीय भाषाओं को शामिल करके भाषायी विविधता को संवैधानिक मान्यता के साथ–साथ भाषाओं के विकास को संरक्षण प्रदान किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 मातृभाषा/स्थानीय भाषा में प्राथमिक शिक्षा, बहुभाषिकता और भारतीय भाषाओं के संरक्षण पर विशेष बल देती है। राजभाषा अधिनियम, 1963 संघ के शासकीय कार्यों में हिंदी के साथ अंग्रेज़ी के प्रयोग को वैधानिक आधार देता है। इससे प्रशासनिक कार्यों में भाषायी निरंतरता और सुविधा सुनिश्चित हुई। राजभाषा नियम, 1976 के अंतर्गत निर्धारित किया गया है कि किन परिस्थितियों में हिंदी या अंग्रेज़ी का प्रयोग होगा तथा सरकारी पत्राचार में हिंदी के उपयोग को प्रोत्साहन दिया गया है।

पूर्वोत्तर की असमिया और बांग्ला भाषाएं संविधान के प्रारंभ (1950) से ही आठवीं अनुसूची में सम्मिलित हैं। मणिपुरी (मैतेई) को 1992 में मान्यता मिली, जिससे मणिपुर की भाषायी–सांस्कृतिक पहचान को संवैधानिक बल मिला और वर्ष 2003 में बोडो भाषा का आठवीं अनुसूची में शामिल किया जाना असम के बोडो समाज के लिए ऐतिहासिक उपलब्धि है।

तिब्बती–बर्मी भाषा परिवार पूर्वोत्तर भारत का सबसे बड़ा भाषा–परिवार है। अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, मिज़ोरम और असम के पर्वतीय क्षेत्रों में इस परिवार की भाषाएँ व्यापक रूप से बोली जाती हैं। इस भाषा परिवार में बोडो, मणिपुरी (मैतेई), नागा भाषाएँ (आओ, अंगामी, सेमा, लोथा आदि), मिज़ो (लुशाई), करबी, मिशिंग, न्यीशी, शेरदुक्पेन तथा थाडो आदि प्रमुख भाषाएं हैं। आस्ट्रो–एशियाटिक भाषा–परिवार की भाषाएं मुख्यतः मेघालय और असम के कुछ भागों में बोली जाती हैं। इस भाषा परिवार को भारत के प्राचीन भाषा–परिवारों में गिना जाता है। इस भाषा परिवार में खासी, गारो तथा संताली आदि प्रमुख भाषाएं हैं। खासी और गारो मेघालय की प्रमुख जनजातीय भाषाएँ हैं। इंडो–आर्यन भाषा–परिवार मुख्यतः मैदानी क्षेत्रों और प्रशासनिक–सांस्कृतिक संपर्क के कारण विकसित हुआ। इस भाषा परिवार में असमिया, बांग्ला, हिंदी तथा नेपाली प्रमुख भाषाएं हैं।

भाषाई अल्पसंख्यक वे लोग हैं जिनकी मातृभाषा उस राज्य या उसके किसी भाग में बहुसंख्यकों की भाषा से भिन्न होती है। इसका तात्पर्य यह है कि यदि किसी क्षेत्र में किसी भाषाई समूह की मातृभाषा वहाँ के मुख्य भाषाई समूह की मातृभाषा से अलग है, तो वह समूह भाषाई अल्पसंख्यक माना जाता है। इस अवधारणा का उपयोग संविधान के अनुच्छेद 350ख के अंतर्गत नियुक्त भाषायी अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी/आयुक्त के संदर्भ में किया जाता है, जो भाषाई अल्पसंख्यकों के संवैधानिक सुरक्षा उपायों की जांच करता है।

पूर्वोत्तर भारत की भाषाई विविधता भारत की बहुलतावादी संस्कृति का सशक्त प्रमाण है। भाषाई अल्पसंख्यक आयोग के क्षेत्राधिकार में आने वाली पूर्वोत्तर की भाषाएँ केवल संप्रेषण के माध्यम नहीं, बल्कि समुदायों की ऐतिहासिक स्मृति, सांस्कृतिक अस्मिता और सामाजिक संरचना की वाहक भी हैं। असम में असमिया के साथ बांग्ला, बोडो, मणिपुरी (मैतेई), मिशिंग, करबी, गारो, नेपाली और ह्मार जैसी भाषाएँ भाषाई अल्पसंख्यक संरक्षण के दायरे में आती हैं। अरुणाचल प्रदेश में हिंदी, असमिया, अदि, अपातानी, न्यीशी और भोती (भोटिया) जैसी भाषाएँ विविध जनजातीय समाजों की पहचान को जीवित रखती हैं। मेघालय में खासी और गारो, त्रिपुरा में बांग्ला और कोकबोरोक, मणिपुर में मणिपुरी के साथ ह्मार, मिज़ोरम में मिज़ो, नागालैंड में आओ, अंगामी जैसी नागा भाषाएँ तथा सिक्किम में नेपाली, लिंबू और लेपचा भाषाएँ भाषाई अल्पसंख्यक

ISSN No. : 0970-9398

अधिकारों के संरक्षण के अंतर्गत आती हैं। भाषाई अल्पसंख्यक आयोग इन भाषाओं के माध्यम से शिक्षा, प्रशासन और सांस्कृतिक जीवन में मातृभाषा के प्रयोग को प्रोत्साहित करता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत हिंदी को राष्ट्रीय स्तर पर एक संपर्क भाषा के रूप में स्थान दिया गया है और इस नीति के अंतर्गत हिंदी अन्य भाषाओं को साथ लेकर बहुभाषिकता और सामाजिक संवाद दोनों को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। भाषाई विविधता भारत की सांस्कृतिक धरोहर है, और यह संतुलन राष्ट्र की भाषा–नीति के लिए भी आवश्यक है। विविध भाषाई समुदायों के बीच हिंदी ने जहां एक ओर संवाद की दूरी को कम किया है वहीं सांस्कृतिक आदान–प्रदान के नए द्वार भी खोले हैं। राजभाषा नीति, शिक्षा एवं साहित्य–आधारित कार्यक्रमों से हिंदी की यह भूमिका और अधिक सुदृढ़ होती जा रही है। त्रिभाषा सूत्र का उद्देश्य न केवल हिंदी और स्थानीय भाषाओं के मध्य एक समन्वय स्थापित करना है, बल्कि भाषा सीखने के माध्यम से सामाजिक समरसता, राष्ट्रीय पहचान और अंतर–क्षेत्र संवाद को भी सुदृढ़ बनाना है।

पूर्वोत्तर भारत की भाषाई विविधता विश्व स्तर पर भी अनूठी मानी जाती है। यहाँ की अधिकांश भाषाएँ सिनो–तिब्बती एवं ऑस्ट्रो–एशियाटिक परिवारों से हैं, जिनकी बोलियाँ छोटे–छोटे समुदायों में प्रचलित हैं। असम तथा अरुणाचल में बोली जाने वाली स्वदेशी/जनजातीय भाषा 'शेरदुकपेन (मेय)' के बोलने वालों की अनुमानित संख्या 5,000 के करीब है तथा नागालैंड के यिमखिउंग समुदाय की भाषा 'यिमखिउंगर्यू' के बोलने वालों की संख्या 100,000 से अधिक है और इनकी दर्जनों उपभाषाएँ मौजूद हैं। इनके अलावा क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधता का प्रतिनिधित्व करने वाली थादोउ, कोकबोरोक, मणिपुरी, कार्बी, बोडो, खासी, गारो, मिशिंग, न्यीशी आदि भी क्षेत्रीय भाषाओं के महत्वपूर्ण उदाहरण हैं।

पूर्वोत्तर की क्षेत्रीय भाषाएँ उस क्षेत्र की न केवल संचार का साधन हैं, बल्कि उनमें समुदायों की सांस्कृतिक पहचान, लोककथाएँ, आवश्यक कार्यकुशलताएँ और सामाजिक व्यवहारों का भंडार भी शामिल है। सामाजिक कार्यक्रमों, लोकगीतों, त्योहारों और पारंपरिक कथाओं के माध्यम से इन भाषाओं का उपयोग पीढ़ी दर पीढ़ी सांस्कृतिक विरासत को संजोने का कार्य करता है। सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों को आत्मसात करते हुए हिंदी को भारत के संविधान द्वारा राजभाषा का दर्जा दिया गया जिसका लक्ष्य भाषाई विविधता के बावजूद राष्ट्रीय एकता को बनाए रखना है। सांझी संस्कृति के साथ हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए गुवाहाटी स्थित केंद्रीय हिंदी निदेशालय का क्षेत्रीय कार्यालय और क्षेत्रीय सांस्कृतिक संसाधन और प्रशिक्षण केंद्र पूर्वोत्तर के लिए हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के मध्य समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

भारत के मानचित्र में यदि हम पूर्वोत्तर को देखें, तो वह भौगोलिक रूप से भले ही देश के एक कोने में स्थित दिखाई देता है, लेकिन सांस्कृतिक दृष्टि से वह भारत की आत्मा के अत्यंत निकट है। पहाड़, नदियाँ, वन, जनजातियाँ, लोकगीत, उत्सव और अनगिनत भाषाएँ मिलकर पूर्वोत्तर भारत को विशिष्ट बनाते हैं। किंतु लंबे समय तक यह क्षेत्र भौगोलिक रूप से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और भाषाई रूप से भी 'दूर' समझा जाता रहा। ऐसे में एक बड़ा प्रश्न पूर्वोत्तर का भारत के बाकी हिस्सों के बीच संवाद का था। यहीं से शुरू होती है हिंदी की भूमिका जो किसी भी पूर्वोत्तर राज्य या जनजाति की भाषा न होते हुए भी संवाद की साझा जमीन के रूप में अपनी जगह बनाती है।

पूर्वोत्तर भारत भाषाओं का एक जीवंत संग्रहालय है। यहाँ असमिया, मणिपुरी, बोडो, खासी, गारो, मिज़ो, नागा समूह की अनेक भाषाएँ और सैकड़ों बोलियाँ प्रचलित हैं। हर भाषा के साथ एक संस्कृति, एक इतिहास और एक जीवन–दृष्टि जुड़ी हुई है। यह विविधता इस क्षेत्र की शक्ति होने के साथ–साथ एक चुनौती भी है। अलग–अलग भाषाओं के बीच संवाद कठिन हो जाता है, खासकर तब, जब राज्यों के बीच या राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क की आवश्यकता हो। यहीं पर एक स्वदेशी संपर्क भाषा की आवश्यकता महसूस होती है, जो स्थानीय भाषाओं को न दबाए, बल्कि उन्हें जोड़ सके। हिंदी को लेकर प्रायः यह धारणा बनती है कि यह 'थोपी गई' भाषा है। लेकिन पूर्वोत्तर भारत का अनुभव इस धारणा को पूरी तरह नकारता है। पूर्वोत्तर में हिंदी किसी एक समुदाय की मातृभाषा नहीं है, इसलिए यह किसी की सांस्कृतिक पहचान को चुनौती नहीं देती है, बल्कि एक तटस्थ माध्यम के रूप में स्वीकार की जाती है और यही कारण है कि बाजारों, बस स्टैंडों, विश्वविद्यालयों, केंद्रीय कार्यालयों और आपसी संवाद में हिंदी सहज रूप से प्रयुक्त हो रही है।

प्रारंभ में केंद्रीय विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, सरकारी कार्यालयों और प्रतियोगी परीक्षाओं के माध्यम से हिंदी पूर्वोत्तर में प्रशासन और शिक्षा के माध्यम से पहुँची, किंतु धीरे–धीरे हिंदी ने केवल 'काम चलाने की भाषा' बने रहने से आगे बढ़कर पूर्वोत्तर की संपर्क भाषा बनना शुरू किया। लोग हिंदी में बातें करने लगे, कहानियाँ लिखने लगे, गीत गुनगुनाने लगे और यह परिवर्तन महत्वपूर्ण था, क्योंकि जब कोई भाषा किसी अन्य भाषा की संस्कृति स्वीकारती है, वास्तव में तभी वह भाषा वहाँ के जनमानस द्वारा स्वीकार की जाती है। पूर्वोत्तर की लोककथाएँ, मिथक, देवी–देवता, प्रकृति से जुड़ी आस्थाएँ लंबे समय तक केवल स्थानीय भाषाओं में सीमित थे किंतु जब इनका हिंदी में अनुवाद हुआ तो बाकी भारत ने पूर्वोत्तर को समझना शुरू किया और पूर्वोत्तर को भी यह एहसास हुआ कि उसकी संस्कृति सुनी और समझी जा रही है। इस प्रकार हिंदी पूर्वोत्तर में अनुवाद की भाषा बनकर उभरी। अनुवाद ऐसा माध्यम है जिसने स्थानीय आवाज़ को राष्ट्रीय मंच प्रदान किया। पिछले कुछ दशकों में पूर्वोत्तर के अनेक लेखक हिंदी में लिखने लगे हैं। उनकी रचनाओं में पहाड़ों का अकेलापन, जनजातीय जीवन का संघर्ष, आधुनिकता और परंपरा के बीच का द्वंद् और पहचान की तलाश स्पष्ट दिखाई देती है। हिंदी ने इन अनुभवों को देश के कोने–कोने तक पहुँचाया। इससे एक तो हिंदी साहित्य

समृद्ध हुआ वही पूर्वोत्तर को एक नया पाठक वर्ग भी मिला। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि अनुवाद से जहां एक ओर स्रोत भाषा का प्रचार–प्रसार होता है वहीं लक्ष्य भाषा भी समृद्ध होती है।

पूर्वोत्तर के युवाओं के लिए हिंदी केवल एक भाषा नहीं, बल्कि अवसरों का द्वार भी है। केंद्रीय सेवा, विश्वविद्यालय, अखिल भारतीय परीक्षाओं में हिंदी का ज्ञान युवाओं को आगे बढ़ने में मदद कर रहा है। इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंदी ने यहाँ स्थानीय भाषाओं को साथ लेकर आगे बढ़ने का रास्ता दिखाया है और यहाँ के युवा अपनी मातृभाषा में सोचते हैं, लेकिन हिंदी में देश से जुड़ते हैं। पूर्वोत्तर को शेष भारत के अधिक निकट लाने का काम टीवी, सिनेमा, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर हिंदी की उपस्थिति ने बखूबी किया है। हिंदी फिल्मों, गीतों और कार्यक्रमों के माध्यम से भावनात्मक जुड़ाव बढ़ा जिससे सांस्कृतिक दूरी कम हुई और अब पूर्वोत्तर की कहानियाँ भी हिंदी मीडिया के माध्यम से राष्ट्रीय स्तर पर पहुँच रही हैं।

'सांस्कृतिक सेतु' का अभिप्राय 'एक–दूसरे को समझने, विविधता का सम्मान करने तथा संवाद बनाए रखने से है और हिंदी पूर्वोत्तर में यही भूमिका निभा रही है। हिंदी ने न तो स्थानीय भाषाओं को मिटाया, न उनकी जगह लेने का प्रयास किया बल्कि एक साझा मंच मुहैया कराया। सच है कि कहीं–कहीं हिंदी को लेकर असंतोष भी है। कुछ लोगों को डर है कि कहीं उनकी भाषाएँ पीछे न छूट जाएँ। लेकिन वर्तमान स्थिति से पता चलता है कि जहाँ हिंदी को संवेदनशीलता और सम्मान के साथ प्रस्तुत किया गया, वहाँ उसने विश्वास जीता है। समस्या भाषा में नहीं बल्कि समस्या उसके प्रयोग के तरीके में होती है।

आज पूर्वोत्तर अपनी विशिष्ट पहचान के साथ राष्ट्रीय मंच पर उपस्थित है और इस पहचान को बनाने में हिंदी की भूमिका सहायक की रही है न कि नियंत्रक की। हिंदी ने पूर्वोत्तर को सुना, समझा और दूसरों तक पहुँचाया और यही स्थिति एक सच्चे सांस्कृतिक सेतु की पहचान है। हिंदी और स्थानीय भाषाओं के बीच और अधिक अनुवाद, द्विभाषिक शिक्षा और सांस्कृतिक आदान–प्रदान के नए मंच की आवश्यकता भी है ताकि पूर्वोत्तर में वर्चस्व की भाषा न बनकर हिंदी संवाद की भाषा बनी रहे। पूर्वोत्तर में भारत की भाषा नीति और हिंदी की यह यात्रा हमें सिखाती है कि भाषा शक्तिशाली तब बनती है, जब वह जोड़ने का काम करे और आज वहाँ आदेश की भाषा न बनकर संवाद की भाषा के रूप में हिंदी अपनी जिम्मेदारी बखूबी निभा रही है।

संदर्भ सूची

1. एथ्नोलॉगः लैंग्वेज़ेज़ ऑफ़ द वर्ल्ड, एसआईएल इंटरनेशनल, वेबसाईट
2. पूर्वोत्तर भारत : भाषायी विविधता एवं संकट, कुलदीप सिंह, पूर्वोत्तर प्रभा
3. पूर्वोत्तर में बढ़ती हिंदी की संभावनाएं, जागरण विशेष समाचार
4. भारत में भाषायी अल्पसंख्यकों के लिए आयुक्त की आधिकारिक रिपोर्ट
5. भाषा पत्रिका (पूर्वोत्तर विशेषांक): केंद्रीय हिंदी निदेशालय

ISSN No. : 0970-9398

विकसित भारत @2047 : सामाजिक-राष्ट्रीय दृष्टि

–डॉ. काजल पाण्डे
पुणे, महाराष्ट्र

पूर्वोत्तर भारत, जिसे लंबे समय तक भौगोलिक दूरी, सीमित संपर्क और ऐतिहासिक कारणों से राष्ट्रीय मुख्यधारा से अलग करके देखा गया, आज भारत के विकासात्मक विमर्श में एक नए आत्मविश्वास के साथ उभर रहा है। प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता, जैव विविधता, सांस्कृतिक बहुलता, युवा जनसंख्या और दक्षिण–पूर्व एशिया से संपर्क की भौगोलिक स्थिति इस क्षेत्र को 21वीं सदी के भारत के लिए रणनीतिक रूप से अत्यंत महत्वपूर्ण बनाती है।

विकसित भारत @2047 की संकल्पना एक बहुआयामी, दीर्घकालिक और समग्र राष्ट्रीय दृष्टि को प्रतिबिंबित करती है। यह दृष्टि भारत को केवल एक उच्च आय वाली अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उसे एक ऐसे राष्ट्र के रूप में विकसित करने का लक्ष्य रखती है जहाँ आर्थिक प्रगति, सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक आत्मविश्वास, तकनीकी नवाचार और पर्यावरणीय संतुलन एक–दूसरे के पूरक हों। इस परिकल्पना के केंद्र में मानव–केंद्रित विकास की अवधारणा निहित है, जिसमें विकास का अंतिम उद्देश्य नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता, गरिमा और अवसरों का विस्तार करना है।

इस राष्ट्रीय दृष्टि के अंतर्गत भारत को एक ज्ञान आधारित और नवाचार प्रेरित अर्थव्यवस्था के रूप में उभारने पर विशेष बल दिया गया है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अनुसंधान, स्टार्टअप संस्कृति, डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना और उद्यमिता को भविष्य की आर्थिक वृद्धि के प्रमुख चालक माना गया है। साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया है कि तकनीकी प्रगति का लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँचना चाहिए, ताकि डिजिटल विभाजन नई असमानताओं को जन्म न दे।

विकसित भारत @2047 की दृष्टि में सामाजिक समावेशन एक केंद्रीय तत्व है। गरीबी उन्मूलन, गुणवत्तापूर्ण और समावेशी शिक्षा, सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवाएँ, पोषण सुरक्षा, लैंगिक समानता तथा सामाजिक रूप से वंचित समूहों का सशक्तिकरण इस परिकल्पना के आधार स्तंभ हैं। यह स्वीकार किया गया है कि बिना सामाजिक न्याय और समान अवसरों के कोई भी आर्थिक प्रगति टिकाऊ नहीं हो सकती। इसलिए कल्याणकारी नीतियों को उत्पादकता, कौशल विकास और आत्मनिर्भरता से जोड़ने पर जोर दिया गया है।

पर्यावरणीय दृष्टि से, विकसित भारत @2047 भारत के विकास पथ को सतत और हरित मार्ग पर अग्रसर करने की आवश्यकता को रेखांकित करता है। जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता संरक्षण, नवीकरणीय ऊर्जा और संसाधन दक्षता को राष्ट्रीय विकास रणनीति का अभिन्न अंग माना गया है। यह दृष्टिकोण इस तथ्य को स्वीकार करता है कि पर्यावरणीय क्षरण अंततः आर्थिक और सामाजिक प्रगति को ही बाधित करता है।

इस व्यापक राष्ट्रीय दृष्टि का एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्तंभ संतुलित क्षेत्रीय विकास है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में यदि कुछ क्षेत्र निरंतर विकास से वंचित रहते हैं, तो न केवल क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ता है, बल्कि समग्र राष्ट्रीय प्रगति भी बाधित होती है। असमान क्षेत्रीय विकास सामाजिक असंतोष, प्रवासन, संसाधनों पर दबाव और शासन संबंधी चुनौतियों को जन्म देता है, जो दीर्घकाल में राष्ट्रीय एकता और स्थिरता के लिए घातक हो सकता है।

इसी संदर्भ में पूर्वोत्तर भारत का सशक्तिकरण विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में विशेष महत्व रखता है। पूर्वोत्तर भारत का विकास केवल एक क्षेत्रीय नीति का विषय नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकीकरण, आर्थिक विस्तार और रणनीतिक संतुलन से जुड़ा हुआ प्रश्न है। यदि यह क्षेत्र विकास की मुख्यधारा में पूरी तरह सम्मिलित होता है, तो भारत को न केवल नए आर्थिक अवसर प्राप्त होंगे, बल्कि दक्षिण–पूर्व एशिया से संपर्क, सांस्कृतिक विविधता और हरित विकास के नए आयाम भी सुदृढ़ होंगे।

अतः यह स्पष्ट है कि विकसित भारत @2047 की राष्ट्रीय दृष्टि में पूर्वोत्तर भारत का सशक्तिकरण कोई वैकल्पिक या गौण एजेंडा नहीं, बल्कि एक अनिवार्य रणनीतिक आवश्यकता है। संतुलित, समावेशी और सतत विकास के बिना विकसित भारत का लक्ष्य न तो पूर्ण हो सकता है और न ही टिकाऊ सिद्ध हो सकता है।

भौगोलिक, रणनीतिक और सभ्यतागत महत्व

पूर्वोत्तर भारत के आठ राज्य भौगोलिक दृष्टि से भारत के शेष भाग से एक संकीर्ण सिलीगुड़ी कॉरिडोर के माध्यम से जुड़े हुए हैं। यह विशिष्ट भौगोलिक संरचना इस क्षेत्र को रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील और महत्वपूर्ण बनाती है। पूर्वोत्तर भारत की सीमाएँ भूटान, चीन, म्यांमार और बांग्लादेश जैसे देशों से लगती हैं, जिससे यह क्षेत्र भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, सीमा प्रबंधन, कूटनीति और अंतरराष्ट्रीय व्यापार के

लिए केंद्रीय भूमिका निभाता है।

भू–रणनीतिक दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी का प्रवेश द्वार है। यह क्षेत्र दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों के साथ भारत के आर्थिक, सांस्कृतिक और रणनीतिक संपर्क को सशक्त करने की क्षमता रखता है। सड़क, रेल, जलमार्ग और डिजिटल कनेक्टिविटी के माध्यम से यदि इस क्षेत्र को म्यांमार, थाईलैंड, वियतनाम और अन्य आसियान देशों से जोड़ा जाए, तो भारत को न केवल व्यापार और निवेश के नए अवसर प्राप्त होंगे, बल्कि क्षेत्रीय भू–राजनीति में उसकी भूमिका भी सुदृढ़ होगी। इस संदर्भ में पूर्वोत्तर भारत का विकास विकसित भारत @2047 के लिए केवल आंतरिक क्षेत्रीय संतुलन का प्रश्न नहीं, बल्कि भारत की वैश्विक रणनीतिक स्थिति से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

राष्ट्रीय सुरक्षा के परिप्रेक्ष्य में भी पूर्वोत्तर भारत का महत्व अत्यधिक है। अंतरराष्ट्रीय सीमाओं की लंबाई, सीमापार आवाजाही, अवैध व्यापार और सुरक्षा चुनौतियाँ इस क्षेत्र को विशेष नीति–संवेदनशील बनाती हैं। ऐसे में, विकास–आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से सीमावर्ती क्षेत्रों में आजीविका, बुनियादी सुविधाएँ और संस्थागत उपस्थिति सुदृढ़ करना राष्ट्रीय सुरक्षा को दीर्घकालिक रूप से मजबूत करता है। विकसित भारत @2047 की दृष्टि में सुरक्षा और विकास को परस्पर पूरक माना गया है और पूर्वोत्तर भारत इसका प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करता है।

सभ्यतागत दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत भारत की प्राचीन और बहुलतावादी सांस्कृतिक धारा का अभिन्न अंग रहा है। यह क्षेत्र सदियों से विभिन्न जनजातीय समुदायों, भाषाओं, आस्थाओं और परंपराओं का संगम स्थल रहा है, जिसने भारतीय सभ्यता को सांस्कृतिक रूप से समृद्ध किया है। कामरूप, अहोम और मणिपुर जैसे ऐतिहासिक राज्य न केवल प्रशासनिक और सैन्य दृष्टि से सशक्त थे, बल्कि उन्होंने शासन व्यवस्था, कृषि प्रणाली, जल प्रबंधन, कला और साहित्य के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान दिया।

विशेष रूप से अहोम साम्राज्य की प्रशासनिक संरचना, भूमि प्रबंधन प्रणाली और बाहरी आक्रमणों के विरुद्ध दीर्घकालिक प्रतिरोध भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय है। इसी प्रकार, मणिपुर की सांस्कृतिक परंपराएँ, नृत्य, संगीत और युद्धकला भारतीय सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न हिस्सा रही हैं। इन ऐतिहासिक और सांस्कृतिक निरंतरताओं को पहचान देना विकसित भारत @2047 की संकल्पना में आवश्यक है, क्योंकि कोई भी राष्ट्र तभी आत्मविश्वास के साथ भविष्य की ओर अग्रसर हो सकता है जब वह अपने अतीत और विरासत को सम्मान देता है।

इसके अतिरिक्त, पूर्वोत्तर भारत की सभ्यतागत पहचान भारत की बहुलतावादी और समावेशी राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करती है। यहाँ की सांस्कृतिक विविधता यह संदेश देती है कि भारतीय पहचान एकरूपता पर नहीं, बल्कि विविधताओं के सह–अस्तित्व पर आधारित है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, मीडिया और सार्वजनिक विमर्श में पूर्वोत्तर भारत की सभ्यतागत भूमिका को समुचित स्थान देना न केवल सांस्कृतिक न्याय का विषय है, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सामाजिक समरसता के लिए भी अनिवार्य है।

प्राकृतिक संसाधन, जैव विविधता और हरित विकास

पूर्वोत्तर भारत प्राकृतिक संसाधनों, जैव विविधता और संवेदनशील पारिस्थितिकी तंत्रों से अत्यंत समृद्ध क्षेत्र है। यह क्षेत्र हिमालयी और उप–हिमालयी भूभाग, घने उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय वन, आर्द्रभूमियाँ, पर्वतीय जलस्रोत और विस्तृत नदी प्रणालियों का संगम प्रस्तुत करता है। भारत के कुल वन क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण भाग पूर्वोत्तर राज्यों में स्थित है, जो न केवल कार्बन अवशोषण में योगदान देता है, बल्कि जलवायु संतुलन, वर्षा चक्र और जैविक उत्पादकता को बनाए रखने में भी निर्णायक भूमिका निभाता है।

जैव विविधता के दृष्टिकोण से पूर्वोत्तर भारत वैश्विक स्तर पर मान्यता प्राप्त बायोडाइवर्सिटी हॉटस्पॉट का हिस्सा है। यहाँ पाई जाने वाली वनस्पतियाँ, जीव–जंतु, औषधीय पौधे और स्थानिक प्रजातियाँ न केवल पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि पारंपरिक चिकित्सा, पोषण, आजीविका और स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं। इस क्षेत्र के जनजातीय समुदायों द्वारा विकसित पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान सतत संसाधन प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण के लिए बहुमूल्य मार्गदर्शन प्रदान करता है।

पूर्वोत्तर भारत की नदी प्रणालियाँ, विशेषकर ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियाँ, इस क्षेत्र की जीवनरेखा हैं। ये नदियाँ कृषि, मत्स्य पालन, पेयजल, परिवहन और ऊर्जा उत्पादन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। ब्रह्मपुत्र बेसिन में जलविद्युत उत्पादन की विशाल संभावनाएँ विद्यमान हैं, जो भारत के स्वच्छ ऊर्जा संक्रमण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। यदि इन परियोजनाओं को वैज्ञानिक योजना, पर्यावरणीय प्रभाव आकलन और स्थानीय समुदायों की सहभागिता के साथ विकसित किया जाए, तो यह क्षेत्र ऊर्जा सुरक्षा और हरित विकास का प्रमुख केंद्र बन सकता है।

विकसित भारत @2047 के लक्ष्य में कार्बन न्यूट्रैलिटी, नवीकरणीय ऊर्जा विस्तार और पर्यावरण संरक्षण को विशेष प्राथमिकता दी गई है। इस दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत भारत के हरित संक्रमण का अग्रदूत बन सकता है। जलविद्युत के साथ–साथ सौर ऊर्जा, बायो–एनर्जी, बांस आधारित उत्पाद, प्राकृतिक फाइबर और परिपत्र अर्थव्यवस्था आधारित उद्योग इस क्षेत्र में सतत विकास के नए मॉडल प्रस्तुत कर सकते हैं।

हालाँकि, पूर्वोत्तर भारत की पर्यावरणीय संवेदनशीलता यह भी संकेत देती है कि विकास की प्रक्रिया में अत्यधिक सावधानी और दीर्घकालिक दृष्टि आवश्यक है। अनियंत्रित खनन, वनों की कटाई, अवैज्ञानिक बुनियादी ढाँचा और जल संसाधनों का असंतुलित उपयोग पारिस्थितिकी तंत्र को गंभीर क्षति पहुँचा सकता है। इसलिए विकसित भारत @2047 की परिकल्पना के अनुरूप, पूर्वोत्तर भारत में विकास को

पर्यावरण–अनुकूल, समुदाय–आधारित और विज्ञान–सम्मत बनाना अनिवार्य है।

यदि इस क्षेत्र में हरित प्रौद्योगिकियों, पारिस्थितिकी–आधारित पर्यटन, जैविक कृषि और स्थानीय संसाधन–आधारित उद्यमिता को प्रोत्साहित किया जाए, तो पूर्वोत्तर भारत न केवल भारत की पर्यावरणीय प्रतिबद्धताओं को सुदृढ़ करेगा, बल्कि वैश्विक स्तर पर सतत विकास का एक अनुकरणीय मॉडल भी प्रस्तुत कर सकता है। इस प्रकार, प्राकृतिक संसाधनों और जैव विविधता का संरक्षण और संवर्धन विकसित भारत @2047 की यात्रा में पूर्वोत्तर भारत की केंद्रीय भूमिका को और अधिक सुदृढ़ करता है।

मानव संसाधन, युवा शक्ति और खेल संस्कृति

पूर्वोत्तर भारत की सबसे बड़ी और सबसे गतिशील पूँजी उसकी युवा आबादी है। यह क्षेत्र जनसांख्यिकीय दृष्टि से अपेक्षाकृत युवा है, जहाँ रचनात्मकता, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और शारीरिक क्षमता का अनूठा संगम दिखाई देता है। बीते वर्षों में पूर्वोत्तर भारत के युवाओं ने खेल, संगीत, फैशन, डिज़ाइन, सूचना प्रौद्योगिकी, डिजिटल कंटेंट निर्माण और उद्यमिता जैसे विविध क्षेत्रों में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी प्रतिभा का प्रभावशाली परिचय दिया है। यह उभरती हुई युवा ऊर्जा भारत की ज्ञान–आधारित और नवाचार–प्रधान अर्थव्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करती है।

विशेष रूप से खेल संस्कृति पूर्वोत्तर भारत की विशिष्ट पहचान बनकर उभरी है। एथलेटिक्स, बॉक्सिंग, वेटलिफ्टिंग, तीरंदाजी, फुटबॉल और मार्शल आर्ट्स जैसे खेलों में इस क्षेत्र के खिलाड़ियों ने ओलंपिक, एशियाई खेलों, राष्ट्रमंडल खेलों और अन्य अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। यह सफलता केवल व्यक्तिगत उपलब्धियों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह इस तथ्य को भी रेखांकित करती है कि यदि उचित प्रशिक्षण, अवसंरचना और संस्थागत समर्थन उपलब्ध हो, तो पूर्वोत्तर भारत खेल उत्कृष्टता का वैश्विक केंद्र बन सकता है।

विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में कुशल, स्वस्थ और आत्मविश्वासी युवा शक्ति को राष्ट्र की सबसे बड़ी संपत्ति माना गया है। इस दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत की युवा आबादी भारत के दीर्घकालिक विकास लक्ष्यों के लिए रणनीतिक महत्व रखती है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, बहुभाषी शिक्षण, डिजिटल कौशल, व्यावसायिक प्रशिक्षण और नवाचार–उन्मुख पाठ्यक्रम इस क्षेत्र के युवाओं को राष्ट्रीय और वैश्विक श्रम बाज़ार में प्रतिस्पर्धी बना सकते हैं।

इसके साथ ही, स्टार्टअप इकोसिस्टम और उद्यमिता को प्रोत्साहन देने से पूर्वोत्तर भारत के युवा रोज़गार खोजने वाले से रोज़गार सृजनकर्ता की भूमिका में परिवर्तित हो सकते हैं। स्थानीय संसाधनों, संस्कृति और डिजिटल प्लेटफार्मों पर आधारित स्टार्टअप न केवल आर्थिक अवसर पैदा करेंगे, बल्कि क्षेत्रीय पहचान और आत्मनिर्भरता को भी सुदृढ़ करेंगे। डिजिटल अवसंरचना, फिनटेक, ई–कॉमर्स और क्रिएटिव इंडस्ट्रीज़ के विस्तार से यह प्रक्रिया और अधिक गति पकड़ सकती है।

अतः यह स्पष्ट है कि पूर्वोत्तर भारत की युवा शक्ति और खेल संस्कृति विकसित भारत @2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में केवल सहायक नहीं, बल्कि निर्णायक कारक हो सकती है। सही नीतिगत हस्तक्षेप, संस्थागत समर्थन और दीर्घकालिक दृष्टि के माध्यम से यह क्षेत्र भारत की ज्ञान–आधारित अर्थव्यवस्था, सांस्कृतिक कूटनीति और वैश्विक पहचान को सुदृढ़ करने में अग्रणी भूमिका निभा सकता है।

कृषि, जैविक उत्पादन और ग्रामीण पुनरुत्थान

पूर्वोत्तर भारत की कृषि प्रणाली पारंपरिक ज्ञान, सामुदायिक अभ्यास और प्रकृति के साथ गहरे सामंजस्य का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह क्षेत्र लंबे समय से कम–रसायन, बहु–फसली और जैव–विविध कृषि प्रणालियों पर आधारित रहा है, जिनमें जैविक खेती, झूम कृषि, मिश्रित फसल चक्र और वन–आधारित आजीविका प्रमुख हैं। यद्यपि झूम कृषि को लेकर अतीत में नीतिगत विमर्श प्रायः नकारात्मक रहा है, परंतु हालिया अनुसंधान यह संकेत देता है कि यदि इसे वैज्ञानिक प्रबंधन, फसल विविधीकरण और वैकल्पिक आजीविका विकल्पों के साथ जोड़ा जाए, तो यह प्रणाली पारिस्थितिक संतुलन और खाद्य सुरक्षा दोनों में योगदान दे सकती है।

पूर्वोत्तर भारत की कृषि उत्पादकता केवल मात्रा के दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि गुणवत्ता, विशिष्टता और पर्यावरणीय स्थिरता के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है। असम की चाय, सिक्किम की जैविक खेती, मिज़ोरम और नागालैंड के मसाले, अरुणाचल प्रदेश के फल, बांस और औषधीय पौधे न केवल घरेलू बाज़ार में, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्रतिस्पर्धी क्षमता रखते हैं। इन उत्पादों में Geographical Indication (GI) टैगिंग, जैविक प्रमाणीकरण और गुणवत्ता मानकों के माध्यम से मूल्य संवर्धन की अपार संभावनाएँ विद्यमान हैं।

विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में किसानों की आय में वृद्धि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सशक्तिकरण एक केंद्रीय लक्ष्य के रूप में परिकल्पित है। इस संदर्भ में पूर्वोत्तर भारत ग्रामीण पुनरुत्थान का एक वैकल्पिक और टिकाऊ मॉडल प्रस्तुत कर सकता है। यदि कृषि को केवल प्राथमिक उत्पादन तक सीमित रखने के बजाय उसे मूल्य श्रृंखला के संपूर्ण ढाँचे से जोड़ा जाए जिसमें प्रसंस्करण, भंडारण, परिवहन, विपणन और निर्यात सम्मिलित हों तो ग्रामीण क्षेत्रों में आय, रोजगार और उद्यमिता के नए अवसर सृजित हो सकते हैं।

ग्रामीण पुनरुत्थान का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू युवाओं और महिलाओं की भागीदारी है। पूर्वोत्तर भारत में कृषि और संबद्ध गतिविधियों में महिलाओं की भूमिका ऐतिहासिक रूप से सशक्त रही है। यदि कौशल विकास, सूक्ष्म वित्त, तकनीकी प्रशिक्षण और उद्यमिता समर्थन प्रदान किया जाए, तो ग्रामीण महिलाएँ और युवा न केवल कृषि उत्पादन में, बल्कि प्रसंस्करण, पैकेजिंग, विपणन और नवाचार में भी अग्रणी भूमिका निभा सकते हैं।

पर्यावरणीय दृष्टि से भी पूर्वोत्तर भारत की कृषि प्रणाली विकसित भारत @2047 के हरित और सतत विकास लक्ष्यों के अनुरूप है। जैविक खेती, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और स्थानीय ज्ञान पर आधारित उत्पादन प्रणालियाँ जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक लचीली हैं और दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ करती हैं।

अतः कृषि, जैविक उत्पादन और ग्रामीण पुनरुत्थान के क्षेत्र में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका केवल क्षेत्रीय विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारत के लिए सतत, समावेशी और मानव–केंद्रित विकास का एक अनुकरणीय मॉडल प्रस्तुत कर सकती है। यदि उपयुक्त नीतिगत समर्थन, निवेश और संस्थागत ढाँचा उपलब्ध कराया जाए, तो पूर्वोत्तर भारत विकसित भारत @2047 की यात्रा में ग्रामीण समृद्धि का पथ प्रदर्शक बन सकता है।

औद्योगीकरण, स्टार्टअप और नवाचार

पूर्वोत्तर भारत में औद्योगिक विकास की संभावनाएँ व्यापक और बहुआयामी हैं, विशेषकर उन क्षेत्रों में जो स्थानीय संसाधनों, पारंपरिक कौशल और सांस्कृतिक विरासत पर आधारित हैं। बांस उद्योग, हस्तशिल्प, हथकरघा, खाद्य प्रसंस्करण और पर्यटन जैसे क्षेत्र न केवल स्थानीय रोजगार सृजन की क्षमता रखते हैं, बल्कि क्षेत्रीय पहचान और आत्मनिर्भरता को भी सुदृढ़ कर सकते हैं। बांस को "हरित सोना" के रूप में देखते हुए इसके निर्माण, फर्नीचर, पैकेजिंग और जैव–आधारित उत्पादों में उपयोग से पूर्वोत्तर भारत एक सतत औद्योगिक मॉडल प्रस्तुत कर सकता है।

हस्तशिल्प और हथकरघा उद्योग पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। यहाँ के पारंपरिक वस्त्र, डिज़ाइन और शिल्प कौशल वैश्विक बाज़ारों में विशिष्ट पहचान रखते हैं। यदि इन्हें डिज़ाइन नवाचार, ब्रांडिंग, ई–कॉमर्स और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं से जोड़ा जाए, तो यह क्षेत्र सांस्कृतिक उद्योगों के माध्यम से आर्थिक विकास का एक नया मार्ग प्रशस्त कर सकता है। इसी प्रकार, खाद्य प्रसंस्करण और कृषि–आधारित उद्योग स्थानीय कृषि उत्पादन को मूल्य संवर्धन प्रदान कर ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उत्पन्न कर सकते हैं।

पर्यटन उद्योग भी पूर्वोत्तर भारत के औद्योगिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। प्राकृतिक सौंदर्य, जैव विविधता और सांस्कृतिक विरासत पर आधारित सतत और समुदाय–आधारित पर्यटन न केवल आय और रोजगार बढ़ा सकता है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और सांस्कृतिक संवेदनशीलता को भी प्रोत्साहित कर सकता है। यह मॉडल विकसित भारत @2047 की हरित और समावेशी विकास दृष्टि के अनुरूप है।

इसके साथ ही, सूचना प्रौद्योगिकी और डिजिटल सेवाओं में भी पूर्वोत्तर भारत के लिए नए अवसर उभर रहे हैं। डिजिटल कनेक्टिविटी, रिमोट वर्क, ई–गवर्नेंस और ऑनलाइन सेवाओं के विस्तार ने भौगोलिक दूरी की बाधाओं को काफी हद तक कम किया है। यदि कौशल विकास, स्टार्टअप इन्क्यूबेशन और डिजिटल अवसंरचना में निवेश किया जाए, तो पूर्वोत्तर भारत आईटी सेवाओं, डिजिटल कंटेंट, फिनटेक और ई–कॉमर्स जैसे क्षेत्रों में उभरता हुआ केंद्र बन सकता है।

विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में स्टार्टअप और नवाचार को आर्थिक विकास का प्रमुख इंजन माना गया है। इस दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत में नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण रणनीतिक महत्व रखता है। अनुकूल नीतियाँ, वित्तीय सहायता, उद्यम पूंजी, अनुसंधान संस्थानों और उद्योग–अकादमिक सहयोग के माध्यम से स्थानीय समस्याओं के समाधान पर केंद्रित नवाचार को बढ़ावा दिया जा सकता है।

अतः औद्योगीकरण, स्टार्टअप और नवाचार के क्षेत्र में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका विकसित भारत @2047 के लक्ष्यों की प्राप्ति में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि दीर्घकालिक नीति समर्थन, संस्थागत ढाँचा और निवेश सुनिश्चित किया जाए, तो यह क्षेत्र भारत के लिए समावेशी, सतत और नवाचार–आधारित विकास का एक नया केंद्र बन सकता है।

संस्कृति, पहचान और सामाजिक समावेशन

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता भारत की राष्ट्रीय पहचान को गहराई, विस्तार और जीवंतता प्रदान करती है। यह क्षेत्र भाषाई, जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत बहुलतावादी है, जहाँ सैकड़ों जनजातीय समुदाय, भाषाएँ, लोककलाएँ, नृत्य–परंपराएँ, संगीत शैलियाँ और उत्सव सह–अस्तित्व में पनपते रहे हैं। पूर्वोत्तर भारत की यह सांस्कृतिक बहुलता भारत की उस सभ्यतागत विशेषता को रेखांकित करती है, जिसमें विविधता को कमजोरी नहीं बल्कि शक्ति के रूप में देखा गया है।

यहाँ की भाषाएँ, मौखिक परंपराएँ, लोककथाएँ और जीवनशैली न केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम हैं, बल्कि सामुदायिक स्मृति, सामाजिक संगठन और नैतिक मूल्यों की वाहक भी हैं। विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में सांस्कृतिक आत्मविश्वास और पहचान का संरक्षण इसलिए आवश्यक है, क्योंकि विकास का कोई भी मॉडल तब तक टिकाऊ नहीं हो सकता जब तक वह स्थानीय समाजों की सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा न हो।

एक भारत श्रेष्ठ भारत पहल इसी दृष्टिकोण को संस्थागत स्वरूप देती है। यह पहल सांस्कृतिक आदान–प्रदान, आपसी समझ और पारस्परिक सम्मान को राष्ट्रीय एकता और सामाजिक समरसता का आधार मानती है। पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति को राष्ट्रीय सांस्कृतिक विमर्श में समुचित स्थान देना न केवल ऐतिहासिक अन्याय की भरपाई है, बल्कि यह भारतीय राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया को अधिक समावेशी और संतुलित बनाता है।

शिक्षा संस्थानों की भूमिका इस संदर्भ में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और सह–शैक्षणिक गतिविधियों में पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति, इतिहास और योगदान को सम्मिलित करना भावी पीढ़ी में समावेशी राष्ट्रीय चेतना का निर्माण करता है।

सामाजिक समावेशन के दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि पूर्वोत्तर भारत को केवल "सीमांत" या "विशेष क्षेत्र" के रूप में नहीं, बल्कि भारत की मुख्य सांस्कृतिक और सामाजिक धारा के अभिन्न अंग के रूप में देखा जाए। मीडिया, साहित्य, सिनेमा और डिजिटल प्लेटफार्मों में पूर्वोत्तर भारत का संतुलित और संवेदनशील प्रतिनिधित्व सामाजिक दूरी को कम करने और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में सहायक हो सकता है।

शासन, नीति और संस्थागत समर्थन

पूर्वोत्तर भारत के समग्र विकास के लिए प्रभावी शासन, पारदर्शी नीति–निर्माण और सुदृढ़ संस्थागत समन्वय अत्यंत आवश्यक है। ऐतिहासिक रूप से यह क्षेत्र बहु–स्तरीय प्रशासनिक संरचनाओं, विशेष संवैधानिक प्रावधानों और विविध सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्थाओं से जुड़ा रहा है। ऐसे में एकरूप नीति दृष्टिकोण के बजाय क्षेत्र–संवेदनशील और सहभागी शासन मॉडल को अपनाना विकसित भारत @2047 की दिशा में निर्णायक सिद्ध हो सकता है।

केंद्र और राज्य सरकारों के बीच सहयोगात्मक संघवाद, नीति समन्वय और संसाधन साझेदारी पूर्वोत्तर भारत के विकास की आधारशिला है। इसके साथ ही, स्थानीय समुदायों, स्वायत्त परिषदों, जनजातीय संस्थाओं और नागरिक समाज की सक्रिय भागीदारी विकास प्रक्रियाओं को अधिक उत्तरदायी और टिकाऊ बनाती है। टॉप–डाउन दृष्टिकोण के स्थान पर बॉटम–अप और सहभागी योजना निर्माण स्थानीय आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के बेहतर प्रतिबिंबन में सहायक हो सकता है।

संस्थागत स्तर पर, क्षेत्रीय विकास निकायों, विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों और नीति थिंक–टैंकों की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। साक्ष्य–आधारित नीति निर्माण, डेटा–संचालित योजना और निरंतर निगरानी एवं मूल्यांकन से पूर्वोत्तर भारत में विकास योजनाओं की प्रभावशीलता में सुधार किया जा सकता है। डिजिटल गवर्नेंस और ई–गवर्नेंस के विस्तार से पारदर्शिता, सेवा वितरण और नागरिक विश्वास को भी सुदृढ़ किया जा सकता है।

चुनौतियाँ और समाधान

पूर्वोत्तर भारत के विकास पथ में भौगोलिक दुर्गमता, सीमित संपर्क, अवसंरचना की कमी, निजी निवेश का अभाव और ऐतिहासिक असंतोष जैसी चुनौतियाँ लंबे समय से मौजूद रही हैं। इसके अतिरिक्त, सुरक्षा–संबंधी चिंताएँ, सामाजिक–राजनीतिक जटिलताएँ और संस्थागत क्षमताओं की सीमाएँ भी विकास की गति को प्रभावित करती रही हैं।

इन चुनौतियों का समाधान केवल सुरक्षा–केंद्रित या प्रशासनिक नियंत्रण आधारित दृष्टिकोण से संभव नहीं है। इसके लिए विकास–केंद्रित, मानव–केंद्रित और विश्वास–आधारित नीति दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। जब विकास योजनाएँ स्थानीय समुदायों की भागीदारी, सांस्कृतिक संवेदनशीलता और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों पर आधारित होती हैं, तब वे न केवल आर्थिक प्रगति लाती हैं, बल्कि दीर्घकालिक शांति और स्थिरता को भी सुदृढ़ करती हैं।

भौतिक अवसंरचना के साथ–साथ सामाजिक और संस्थागत अवसंरचना जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल, संवाद और विश्वासकृपर निवेश पूर्वोत्तर भारत के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यह दृष्टिकोण ऐतिहासिक असंतोष को कम करने और राज्य तथा नागरिकों के बीच विश्वास को पुनर्स्थापित करने में सहायक हो सकता है।

निष्कर्ष

विकसित भारत @2047 की परिकल्पना में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका न केवल महत्वपूर्ण, बल्कि अनिवार्य और निर्णायक है। यह क्षेत्र भारत को हरित ऊर्जा, जैविक और सतत कृषि, युवा और खेल प्रतिभा, सांस्कृतिक विविधता तथा दक्षिण–पूर्व एशिया से रणनीतिक संपर्क का नया आयाम प्रदान कर सकता है। यदि दूरदृष्टिपूर्ण नीतियों, संतुलित क्षेत्रीय विकास, सामाजिक समावेशन और सांस्कृतिक संवेदनशीलता के साथ पूर्वोत्तर भारत की संभावनाओं को साकार किया जाए, तो निस्संदेह यह क्षेत्र भारत को 2047 तक एक विकसित, सशक्त और वैश्विक नेतृत्वकर्ता राष्ट्र बनाने की यात्रा में केंद्रीय भूमिका निभाएगा। विकसित भारत की सफलता अंततः इसी में निहित है कि भारत का प्रत्येक क्षेत्र विशेषकर पूर्वोत्तर भारत सम्मान, अवसर और भागीदारी के साथ इस राष्ट्रीय यात्रा का सहभागी बने।

संदर्भ सूची

1. भारत सरकार, विकसित भारत @2047: विज़न डॉक्युमेंट, नई दिल्ली
2. नीति आयोग, India @2047: Transformational Pathways, भारत सरकार
3. उत्तर पूर्वी क्षेत्र विकास मंत्रालय (DoNER), Vision for North East, भारत सरकार
4. विदेश मंत्रालय, lct East Policy Document, भारत सरकार
5. संस्कृति मंत्रालय, एक भारत श्रेष्ठ भारत पहल, भारत सरकार
6. रोमिला थापर, Early India% From the Origins to AD 1300
7. ऊर्जा मंत्रालय, Hydropower Potential of North East India
8. ICAR] Organic and Traditional Farming in North East India
9. APEDA, Agri-Export Potential of North East Region
10. MSME मंत्रालय,, Cluster Development Reports
11. MeitY, Digital India and IT Expansion in NER
12. GNCA, Cultural Traditions of North East India

ISSN No. : 0970-9398

राजभाषा हिंदी: पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक सेतु के रुप में

– मीनाक्षी भसीन
कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी
आईसीएमआर–एनआईएमआर

पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति सदियों पुरानी परंपराओं, विविध भाषाओं, समृद्ध लोक कथाओं और मनमोहक दृश्यों से बुनी गई एक जीवंत टेपेस्ट्री है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जो प्राचीन रीति–रिवाजों और आधुनिक प्रगति के असाधारण मिश्रण को अपने आलिंगन में समेटे हुए है, जहां प्रत्येक समुदाय, प्रत्येक राज्य की अपनी अनूठी पहचान है। असम के हरे–भरे चाय बागानों से लेकर मिजोरम की लहरदार पहाड़ियों तक, मणिपुर की निर्मल नदियों से लेकर नागालैंड के जीवंत त्योहारों तक, पूर्वोत्तर जीवन, कला और विरासत से ओतप्रोत भूमि है। पूर्वोत्तर भारत विविध संस्कृतियों एवं विभिन्न भाषाओं का एक विशाल समूह है। पूर्वोत्तर भारत के आठ राज्य सुंदरता, विविधता एवं संभावनाओं से भरपूर हैं। ये आठ राज्य देवी लक्ष्मी द्वारा प्रतिरुपित समृद्धि के आठ रुपों का प्रतिनिधित्व करते हैं– समृद्धि, ऐश्वर्य, पवित्रता, धन, ज्ञान, कर्तव्य, कृषि और पशुपालन।

यहां आठ राज्यों में भाषाओं की इतनी विविधता है। अकेले अरुणाचल प्रदेश में ही 90 से अधिक भाषाएं हैं। पर इनमें से अनेक भाषाएं लुप्त होने के कगार पर हैं। फिर भी, यहां के स्थानीय लोग अपनी मातृ–भाषाओं को बचाए रखने एवं पुरुत्थान व उनको संरक्षित करने का भरसक प्रयास कर रहे हैं। यही नहीं, इन राज्यों ने आपस में एक राज्य में रहने एवं एक–दूसरे से बातचीत करने अथवा विचारों के आदान–प्रदान के लिए कुछ आम भाषाओं को अपनाया है। इनमें अरुणाचली, बांग्ला, असमिया अंग्रेजी तथा हिंदी भाषा प्रमुख हैं। इन भाषाओं में से असम तथा त्रिपुरा में क्रमशः असमिया तथा बांग्ला, कुम्मिला, बांग्ला की उपभाषा तथा शुद्ध बांग्ला बोली जाती हैं। वहीं स्थानीय भाषा कॉकबोरॉक बोलने वाली जनजाति लोग भी अन्य लोगों से बातचीत करने हेतु बांग्ला अथवा हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं। मेघालय में खासी, बांग्ला, असमिया, नेपाली तथा मणिपुर में मणिपुरी एवं बांग्ला, अरुणाचल प्रदेश में हिंदी, मिज़ोरम में मिजो और हिंदी आदि का व्यापक प्रयोग होता है।

पूर्वोत्तर में इतनी भाषाई विविधता है कि एक दूसरे की भाषा को समझना कठिन हो जाता है। इसलिए हिंदी एक सामान्य भाषा 'लिगुआ फ्रैंका' के रुप में संवाद का माध्यम बनकर उभर रही है। अंतरराज्य व्यापार एवं अलग–अलग राज्यों के लोगों का एक–दूसरे के राज्य जाकर वास करना आदि प्रमुख कारण है। वर्तमान समय में, इन सभी राज्यों में हिंदी का बोलबाला बढ़ा है। इसका कारण है कि देश के अन्य कोनों से आए लोगों का रहना, पर्यटन तथा स्वयं पूर्वोत्तर निवासियों का भी देश के अन्य राज्यों में जाकर रहना भी हिंदी भाषा के प्रचार में सहयोगी साबित हुआ है। हिंदी के माध्यम से पूर्वोत्तर के लोग बॉलीवुड, टी वी शो और अन्य राष्ट्रीय मंचों पर अपनी प्रतिभा दिखा पाते हैं, जिससे आपसी सांस्कृतिक समझ एवं जुड़ाव की भावना पोषित होती है। इस प्रकार हिंदी भाषा को आम भाषा के रुप में अपनाना वर्तमान जीवन की अनिवार्यता बन चुकी है। पूर्वोत्तर में विश्वविद्यालयों में उच्च स्तर पर हिंदी पठन–पाठन, लेखन बोधन और शोध कार्य द्रुत गति से चल रहा है। हिंदी पूर्वोत्तर को शेष भारत से जोड़कर एक भारत–श्रेष्ठ भारत के विचार को मजबूत करती है और राष्ट्रीय एकता में योगदान देती है।

व्यापार एवं अन्य प्रयोजनों के कारण हिंदी भाषा जनमानस में अपने पांव तेजी से पसार रही है और हिंदी भाषा पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक एकता को बनाए रखने एवं उसके विकास में अप्रत्यक्ष रुप से योगदान दे रही है। एक समय था जब पूर्वोत्तर के सभी राज्य एक ही राज्य असम के अंतर्गत आते थे। असम में हिंदी शिक्षण का कार्य तो स्वतंत्रता के वर्षों पूर्व प्रारंभ हो गया था। यद्यपि स्वतंत्रता से पूर्व कुछ और स्वतंत्रता के पश्चात् पर्याप्त ऐसे ग्रंथ सृजित हुए जो असम में हिंदी–शिक्षण के क्षेत्र में मील के पत्थर सिद्ध हुए। ये व्याकरणिक और कोश–ग्रंथ थे। इसके अतिरिक्त, केंद्र सरकार और राज्य सरकारों का अनुकूल रवैया असम में हिंदी की भी वृद्धि के लिए अधिक सफल सिद्ध हुआ। धार्मिक, राजनीतिक तथा व्यापारिक संबंधों के कारण असम में भी इसकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई। हिंदी असम में अत्यंत समृद्ध है। असम में हिंदी प्रचारक संस्थानों की स्थापनाएं हुईं। परंतु वर्ष 1963 से ही असम से एक–एक करके सभी राज्य भाषाई अंतर एवं सांस्कृतिक अंतर के कारण अलग होते गए एवं पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त करते गए। सांस्कृतिक विविधता की इसमें अहम भूमिका रही। वहीं अकेले असम में ही असमिया के अलावा बांग्ला, मणिपुरी, खासी, बोडो जैसी भाषाएं मुख्य रही हैं।

मेघालय क्षेत्र में खासी नेता महाम सिंह के अतिरिक्त बैकुंठनाथ सिंह, पद्मनाभ बड़ठाकुर विश्वनाथ उपाध्याय आदि

हिंदी प्रेमियों ने हिंदी के प्रारंभिक प्रचार–प्रसार में अपना योगदान दिया। असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने मेघालय क्षेत्र में अपने प्रचारकों को हिंदी के प्रचार–प्रसार हेतु भेजा। मेघालय में मेघालय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, शिलांग की स्थापना 1972 में हुई। मेघालय की राजधानी शिलांग में राष्ट्रभाषा विद्यालय भी खोला गया। इस राज्य की अन्य प्रमुख स्वैच्छिक संस्थाएं हैं–मेघालय हिंदी प्रचार परिषद, शिलांग, पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी, शिलांग। जो संस्थान अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर लेता है, वह दिशाहीन नहीं रह जाता। मेघालय ने हिंदी के प्रचार–प्रसार की अपनी लय प्राप्त कर ली है और यह अनवरत उसी दिशा की ओर अग्रसर हो रहा है। वहीं केंद्र सरकार ने मणिपुर में हिंदी प्रचार के लिए अनेक योजनाएं प्रारंभ की। इनमें अनुवादकों की नियुक्तियां, हिंदी शिक्षकों की भर्ती और उनका प्रशिक्षण छात्रों को छात्रवृत्तियां प्रदान करना, स्कूलों में प्राथमिक स्तर से हिंदी को एक अनिवार्य विषय के रुप में पढ़ाया जाना आदि प्रमुख थीं। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के हिंदी कार्यक्रम भी इस दिशा मे उपयोगी सिद्ध हुए। सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई हिंदी के फिल्मी गानों और हिंदी फिल्मों को जिन्होंने मणिपुर के जनमानस पर जबरदस्त प्रभाव छोड़ा। मणिपुर विश्वविद्यालय का हिंदी विभाग शोध की दिशा में शोधार्थियों को प्रोत्साहित करता रहता है।

हिंदी संपर्क भाषा के रुप में असमिया, मणिपुरी, नागामिस आदि जैसी स्थानीय भाषाओं एवं बोलियों के मध्य एक सेतु का कार्य करती है। पूर्वोत्तर भारत में भारतीय संविधान द्वारा स्वीकृत चार मुख्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग किया जाता है। असम राज्य में असमिया तथा बोड़ों, मणिपुर में मणिपुरी तथा त्रिपुरा व असम की बराक घाटी में बांग्ला भाषा का प्रयोग मुख्य भाषा के रुप में किया जाता है। पूर्वोत्तर भारत भाषाओं का संगम क्षेत्र है। अरुणाचल प्रदेश में कुल 25 भाषाओं का प्रयोग किया जाता है। यहां भी सन् 1970 में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा अरुणाचल प्रदेश का दौरा किया गया। हिंदी दिवस के अवसर पर 14 सितंबर, 1974 को प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री प्रेमाखान्दू खुंगन की उपस्थिति में संपन्न बैठक में उत्तर पूर्वाचल राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना की गई। जिस प्रकार असम में बोडो भाषा के लिए देवनागरी लिपि का प्रयोग होता है उसी प्रकार अरुणाचल प्रदेश की जेमी के लिए देवनागरी को अपनाया गया है। अरुणाचल प्रदेश में समस्त जनजातीय भाषाओं के मध्य संपर्क भाषा के रुप में हिंदी का प्रयोग होता है। सभी आठ राज्यों में हिंदी मुख्य संपर्क भाषा के रुप में विकसित हो रही है। हिंदी को मुख्य संपर्क भाषा के रुप में विकसित करने में सूचना प्रौद्योगिकी और मीडिया का स्थान मुख्य है। रेडियो से बोडो अनुष्ठान तथा कार्बी अनुष्ठान का प्रसारण हो चुका है।

पूर्वोत्तर की भारतीय भाषाओं के साहित्य के अनुवाद कार्य तथा कोश निर्माण कार्य से भी हिंदी का संपर्क भाषा के रुप में विकसित होने का वातावरण निर्मित हुआ है। नागालैंड में हिंदी का प्रचार–प्रसार करना आसान काम नहीं था। कोश निर्माण के क्षेत्र में नागालैंड भाषा परिषद कोहिमा की भूमिका मुख्य रही है जिसने पूर्वोत्तर की लगभग सभी भाषाओं में 100 से अधिक कोशों का निर्माण और प्रकाशन किया है। नागालैंड में नगामीज मुख्य संपर्क भाषा है तथा अब हिंदी भी वहां मुख्य संपर्क भाषा के रुप में स्थापित होती जा रही है। दीमापुर और कोहिमा में हिंदी का संवाद का अच्छा वातावरण निर्मित हो गया है। त्रिपुरा में काकबरक भी जनजातीय समाज की मुख्य संपर्क भाषा है। केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा काकबरक भाषा का शब्दकोश प्रकाशित कर चुका है।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी भाषा को लाने का श्रेय हिंदी भाषियों को भी जाता है जो कि यहां दशकों से रहते आएं हैं। इनका यहां की आधारभूत संरचना के विकास तथा व्यापारिक विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सदियों पूर्व, बिहार तथा उत्तर भारत के अन्य राज्यों से आकर यहां की भूमि में बसे ये लोग मजदूरी, व्यापार तथा सरकारी पदों पर आसीन इन सभी ने हिंदी भाषा को पूर्वोत्तर में अच्छे से फैलाया। वहीं हिंदी साहित्य, सिनेमा और मीडिया के माध्यम से पूर्वोत्तर की कहानियों और मुद्दों को राष्ट्रीय पटल पर भी लाया गया। विशेषकर दूरदर्शन पर 89–90 के दशक में पूर्वोत्तर की भाषाओं में बनी फिल्मों को भी हिंदी एवं अंग्रेजी में डब कर दिखाया जाता रहा है। वहीं कहीं न कहीं भारतीय सेना का भी इसमें योगदान रहा है जिन्होंने पूर्वोत्तर को सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ सांस्कृतिक वैविध्यता के बावजूद भी एक साथ रहने की कला सिखा दी। सेना में भी पूर्वोत्तर निवासियों की भर्ती के बाद हिंदी सीखना उनके लिए अनिवार्य सा हो गया।

पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी भाषा सांस्कृतिक एकता को बनाए रखने में बहुत योगदान दे रही है। पूर्वोत्तर के विभिन्न 8 राज्यों में प्रत्येक समुदाय की अपनी विशिष्ट भाषाएं हैं। इन समुदायों के बीच आपसी संवाद स्थापित करने के लिए एक साझा माध्मय की आवश्यकता होती है । हिंदी ने वर्षो से यह भूमिका सफलतापूर्वक निभाई है।

अंतर–समुदाय संवादः पूर्वोत्तर राज्यों में अधिकतर सभी स्थानीय शिक्षण संस्थान एवं स्थानीय बाजार या अन्य आम जगहों पर सभी राज्यों से आए हुए लोगों में आपसी तालमेल एवं विचारों के आदान–प्रदान की आवश्यकता महसूस की है। अतः हिंदी अपनी भूमिका अच्छी तरह से निभा सकती है। कुछ लोग स्थानीय भाषा को अधिक महत्व देते हैं परंतु मातृ भाषा के प्रभाव के कारण तथा वर्णों एवं उच्चारण की विविधता के कारण दूसरी भाषा सीखना अथवा समझना कठिन हो सकता है। इसलिए भी हिंदी भाषा अनिवार्य हो जाती है। वही हिंदी भाषा की सरलता एवं उसका अन्य भाषाओं के शब्दों और व्याकरण को सहजता से अपना लेने की कला भी इसमें बहुत महत्वपूर्ण ढंग से सहायक होती है। कुछ अनुसंधानों से यह स्पष्ट हुआ है कि अरुणाचल प्रदेश में हिंदी को संपर्क भाषा के रुप में अपनाने का मुख्य कारण राज्य की बहु–भाषी और बहुजातीय संरचना है। चूंकि प्रदेश में 100 से अधिक जनजातियां हैं जिनकी अलग–अलग भाषाएं हैं, इसलिए वे एक–दूसरे से संवाद करने के लिए हिंदी को एक सामान्य माध्यम के रुप में

चुनते हैं। हिंदी के लोकप्रिय होने के अन्य कारणों में स्कूली शिक्षा में इसका समावेश, बॉलीवुड फिल्मों और टीवी सीरियलों का प्रभाव और केंद्र सरकार से जुड़े काम करने वाले कर्मियों की भाषा भी शामिल है। स्वयं अरुणाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री पेमा खांडू जी ने इस बात को स्वीकार किया है कि– अरुणाचल प्रदेश पूर्वोत्तर का एकमात्र राज्य है जिसने हिंदी को अपनी भाषा के रुप में अपनाया है। भाषा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए, यहां केंद्रीय हिंदी संस्थान का एक क्षेत्रीय केंद्र स्थापित करना स्वाभाविक है। हिंदी भाषा की इसलिए भी आवश्यकता रही है क्योंकि ये राष्ट्रीय मुख्यधारा से भी जोड़ता है। पूर्वोत्तर भारत के नागरिक देश के अन्य राज्यों में कामकाज, नौकरी, व्यापार, इलाज या पढ़ाई के लिए जाते हैं। तो हिंदी भाषा की सहजता के कारण वे इसका प्रयोग कर अपनी आवश्यकताएं पूरी कर सकते हैं।

हिंदी केवल बोलचाल की भाषा नहीं है अपितु यह सांस्कृतिक विनिमय का एक शक्तिशाली माध्यम है। इसने पूर्वोत्तर की समृद्ध संस्कृति को राष्ट्रीय पटल पर लाने और राष्ट्रीय संस्कृति के तत्वों को पूर्वोत्तर तक पहुंचाने में मदद की है। विशेषकर मीडिया और सिनेमा के माध्यम से तो इसका व्यापक प्रचार हुआ है। पूर्वोत्तर भारत में हिंदी सिनेमा की गहरी पैठ है। सर्वस्वीकृत है कि सिनेमाई हिंदी गीतों के माध्यम से यहां के जनमानस में हिंदी भाषा की लोकप्रियता और स्वीकार्यता दोनों को विस्तार मिला है। कुछेक राज्यों को छोड़कर यहां हिंदी संपर्क भाषा के रुप में निरंतर विकसित हो रही है। यहां हिंदी भाषा के विकास में हिंदी सिनेमा की भूमिका अत्यंत उल्लेखनीय है। ज्वैल थीव, रंगून, कुर्बान, दिल से, कोयला, साया, रॉक ऑन, जग्गा जासूस, चमेली, भेड़िया, जवान जैसी फिल्मों में पूर्वोत्तर राज्यों की सांस्कृतिक एवं सामाजिक मुद्दों को जोर–शोर से दर्शाया गया है। पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी सिनेमा के जरिए हिंदी भाषा अपनी जड़े गहरी बना पाने में सक्षम हुई हैं। फिल्म निर्माण की अलग–अलग विधाओं/क्षेत्रों को देखें तो इनमें पूर्वोत्तर भारत के कुछ ऐसे हस्ताक्षर शामिल हैं जिनका उल्लेख किए बिना सिनेमा का इतिहास अधूरा सा प्रतीत होता है। इस श्रृंखला में भूपेन हजारिका, डैनी डेन्जोगपा, सीमा विश्वास, पत्रलेखा, आन्द्रेया तारियांग, दीगांता हजारिका, ज्होखोई चुजहों, देवी दोलो, रिकेन ड्गोल, आदिल हुसैन, विश्वजीत बोरा, पापोन, लुकाराम स्मील, गीतांजली थापा, जुबीन गर्ग एवं रीमा देबनाथ आदि का नाम उल्लेखनीय है। इस संदर्भ में असम राज्य से भूपेन हजारिका का नाम सर्वोपरि है। भूपेन हजारिका अपने सदाबहार गीतों के कारण ब्रह्मपुत्र कवि के रुप में जाने जाते हैं। एक अच्छे कवि, मशहूर संगीतकार, चर्चित गीतकार, अभिनेता एवं पत्रकार के रुप में भूपेन हजारिका की लोकव्याप्ति उल्लेखनीय एवं जनप्रिय है। भारतीय संस्कृति को केंद्र में रखते हुए उन्होंने अपने सिनेमाई गीतों के माध्यम से समाज में सौहार्द्र, मानवता, बंधुत्व, सद्भावना एवं समरसता की भावना को अनुप्राणित करने का कार्य किया है। भाषाई सीमाओं का अतिक्रमण करते हुए उनके गीत आज भी जन–जन में गुंजायमान हैं। वहीं जुबीन गर्ग की आवाज एवं संगीत ने हिंदी एवं असमीया सिनेमा को राष्ट्रीय पहचान दिलाई। देश के मुख्य धारा से जुड़ी सभी प्रकार की मीडिया ने अब पूर्वोत्तर राज्य की खबरों को स्थान देना शुरु कर दिया है। जिसके फलस्वरुप रिपोर्टरों को खबरे जुटाने के लिए स्थानीय लोगों से बातचीत करनी होती है तब हिंदी भाषा ही वहां एक सरल माध्यम के रुप में उभरी है।

हिंदी साहित्यिक मंचों और अकादमियों ने पूर्वोत्तर के लेखकों को अपनी कहानियां और क्षेत्रीय अनुभव देश के सामने प्रस्तुत करने का अवसर दिया है। कई स्थानीय लोक कथाओं और कविताओं का हिंदी में अनुवाद हुआ है जिससे उनकी पहुंच और पहचान बढ़ी है। अज्ञेय, देवेन्द्र सत्यार्थी, श्रीधर पाण्डेय, रीतामणि वैश्य जैसे बड़े साहित्यकारों द्वारा पूर्वोत्तर भारत के संस्कृति एवं समाज पर आधारित रचनाएं भी उपलब्ध हैं। वही अब स्वयं पूर्वोत्तर के ही अनेक रचनाकार भी हिंदी भाषा में साहित्यिक रचनाएं लिख रहे हैं जिनमें पूर्वोत्तर की संस्कृति की झलक देखने को मिलती है जैसे कि मिनम–मोरजुम लोई द्वारा लिखित उपन्यास काफी चर्चित रहा है। वही केंद्रीय हिंदी संस्थान का इसमें बहुत बड़ा योगदान रहा है। 'समन्वय पूर्वोत्तर' जैसी पत्रिका में त्रैमासिक तथा विशेष अंकों में पूर्वोत्तर राज्यों की अनोखी परंपराओं, सांस्कृतिक धरोहर, स्थानीय भाषाओं में लिखित कविता, कहानी आदि का हिंदी में अनुवाद बड़े उत्साह से किया जा रहा है। इस अनुवाद का ये फल हुआ कि आज जो लोग पूर्वोत्तर भारत के बारे में अधिक जानकारी रखने के इच्छुक हैं उनके लिए ऐसी पत्रिका बड़ी कारगर साबित हो रही है। वही पूर्वोत्तर राज्यों के निवासी भी अपनी सांस्कृतिक विरासत, भाषाई विविधता एवं अनोखेपन तथा वहां के स्थानीय रीति रिवाज को देश से हर्षपूर्वक अवगत कराने हेतु तत्पर हैं जिस कारण भी वे हिंदी भाषा को सीखने का उद्योग दिखा रहे हैं।

कला और रंगमंच संबंधित गतिविधियां भी तेजी से हिंदी के प्रयोग को बढ़ा रही हैं। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, संगीत नाटक अकादेमी जैसे संस्थानों में हिंदी का उपयोग पूर्वोत्तर के कलाकारों को भारतीय रंगमंच की मुख्यधारा से जोड़ता है। वे अपनी स्थानीय शैलियों को हिंदी नाटकों में मिलाकर एक समग्र सांस्कृतिक सौंदर्य का निर्माण करते हैं।

हिंदी का राष्ट्रीय एकता और सामाजिक स्थिरता में भी योगदान है। हिंदी भाषा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देती है। ये बात सर्वविदित है कि देश की आजादी की लड़ाई के समय इसी भाषा ने देश को एक कोने से दूसरे कोने तक एक सूत्र में जोड़ने का काम किया था। एकता के मूल्य को बढ़ावा देने का काम भी हिंदी भाषा करती है। आज देश के प्रत्येक राज्य में त्रिभाषा सूत्र के माध्यम से हिंदी, अंग्रेजी तथा स्थानीय भाषा को स्कूली शिक्षा के अनिवार्य कर देने से इसका लाभ छात्रों को अच्छे से मिलने लगा है। वे अपनी मातृ–भाषा के साथ–साथ दो अन्य भाषा को सीख पा रहे हैं जिससे भविष्य में वे रोजगार हेतु देश के किसी भी कोने में जाकर आसानी से वास कर सकते हैं। वही कई सारी ऐसी नौकरियां भी हैं जहां हिंदी भाषा

की आवश्कता पड़ती है जैसे न्यूज चैनल, फिल्म तथा टेलीविजन सीरियल, विज्ञापन आदि में हिंदी भाषा का ही बोलबाला है। अतः हिंदी शिक्षण अनिवार्य हो चुका है। पूर्वोत्तर राज्यों के लोगों ने इस तथ्य को भलीभांति समझ लिया है कि भाषाई विविधता के बीच हिंदी भाषा सभी के मध्य समानता की भावना को संजोकर रखे हुए है। भाषिक सौहार्द प्रांतीय भाषाओं के मेल–जोल और पठन–पाठन के लिए अत्यंत आवश्यक है। हिंदी की अभिवृद्धि में समस्त भाषाओं की समृद्धि है।

असम में बोडो भाषा का आंदोलन काफी समय से चलता रहा है। बोडो समुदाय द्वारा अपने लिए सामाजिक–सांस्कृतिक और राजनैतिक अधिकारों की मांग अनेक वर्षों तक चलती रही। इसके परिणाम स्वरुप, बोडो भाषा को भी असम में आधिकारिक भाषा का दर्जा तो प्राप्त हुआ लेकिन जब इसकी लिपि की समस्या आई तो हिंदी की देवनागरी लिपि को इन्होंने अपना लिया। इसके अतिरिक्त, जेभी, संताली तथा अरुणाचल प्रदेश की अनेक जनजातीय बोलियों ने भी अपनी भाषा के पुनरुत्थान हेतु भी हिंदी की देवनागरी लिपि को अपना लिया है। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि हिंदी भाषा तथा इसकी लिपि न केवल सांस्कृतिक विकास को ही समर्थन देती है बल्कि स्थानीय भाषाओं के पुनरुत्थान में भी सहायक सिद्ध हो रही है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि राजभाषा हिंदी पूर्वोत्तर भारत में विभिन्न भाषाई समूहों के बीच सांस्कृतिक सेतु का कार्य कर रही है। यह क्षेत्र अनेक स्थानीय भाषाओं और बोलियों (लगभग 220 से भी अधिक) से समृद्ध है और हिंदी संपर्क भाषा लिगुआ फ्रैंका के रुप मे विभिन्न जनजातियों और राज्यों को जोड़ने की भूमिका बखूबी निभा रही है। यह कहना समीचीन होगा कि वर्तमान में पूर्वोत्तर भारत में सांस्कृतिक विकास तथा एकता के लिए हिंदी भाषा ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। न केवल हिंदी भाषा ने पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति एवं सामाजिक ढांचे को आवाज़ दी है बल्कि देश की मुख्य धारा के साथ जोड़ने का भी कार्य किया है। अरुणाचल प्रदेश हो, असम हो या मेघालय वहां की राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को विकसित करने बल्कि निखारने में भी हिंदी भाषा का योगदान रहा है। हिंदी भाषा अब किसी प्रतिद्वंदी भाषा के रुप में नहीं बल्कि स्थानीय भाषा को मजबूती देने के रुप में सामने आ रही है। इसलिए हम हिंदी के अनेक रुप देख पाते हैं जैसे हैदराबादी हिंदी, अरुणाचली हिंदी, खासी हिंदी अथवा देश वाली हिंदी लोग अपनी स्थानीय मातृ भाषा के शब्दों के साथ हिंदी भाषा का प्रयोग सहजता से कर पा रहे हैं और अन्य लोगों के साथ आसानी से संपर्क साध पा रहे हैं। हिंदी से भावात्मक एकता बढ़ी है और राष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक व व्यावसायिक अवसरों के द्वार खुलते हैं। अंत में कहा जाता है कि हिंदी का भविष्य पूर्वोत्तर राज्यों में बहुत उज्जवल है। इसके प्रसार के लिए क्षेत्रीय भाषाओं के साथ संतुलन और संवेदनशीलता की आवश्यकता है।

संदर्भः–

1. *https://www.ashtalakshmimahotsav.com/*
2. वैभव, अतुल, जनवरी–दिसंबर, 2021 पूर्वोत्तर का हिंदी सिनेमा, सिक्किमः कंचनजंघा पत्रिका
3. सिंह, (आलोक संपा) पूर्वोत्तर भारतः लोक और समाज, नई दिल्लीः सर्वभाषा ट्रस्ट
4. हिंदी भाषा शिक्षण–पूर्वोत्तर भारत के विशेष संदर्भ में–संपादक–राधा मोहन मीणा, अवधेश कुमार मिश्र आलेख–(पूर्वोत्तर में हिंदी एवं हिंदी भाषा शिक्षण–जितेंद्र कुमार मिश्र) लक्षी प्रकाशक एवं वितरक, 2015 दिल्ली
5. *https//nayidhara.in/*
6. *Bi-Lingual International Research Journal] vol.11-issue 41-January to March 2021*
7. https://www.bhartiyadharohar.com/- भाषा और एकात्मता/
8. *https://www.allresearchjournal.com*

ISSN No. : 0970-9398

हिंदी भाषा, सिनेमा और पूर्वोत्तर भारत के गीतकार

– डॉ. बी. बालाजी,
प्रबंधक, मिश्र धातु निगम लिमिटेड, हैदराबाद

विश्व में भारत ही एक ऐसा राष्ट्र है जिसकी आत्मा "विविधता में एकता" के सिद्धांत पर आधारित है। इस राष्ट्र की बहुभाषिकता, सांस्कृतिक अनेकता और धार्मिक बहुलता का सबसे जीवंत और समृद्ध उदाहरण उत्तर–पूर्वी भारत है। भौगोलिक रूप से यह क्षेत्र भारत के अन्य क्षेत्रों से दूरस्थ होने के बावजूद ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और संवैधानिक रूप से भारत की मुख्य धारा से गहराई से जुड़ा हुआ है। यहां का प्राकृतिक सौंदर्य, जैव विविधता और जनजातीय–सांस्कृतिक विरासत भारत की पहचान को और अधिक व्यापक बनाती है।

उत्तर–पूर्वी भारत में आठ राज्य शामिल हैं–अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। इनमें से सात राज्यों को "सात बहनें" कहा जाता है, जबकि सिक्किम को भी आज इस क्षेत्र का अभिन्न हिस्सा माना जाता है। इन राज्यों के नाम केवल प्रशासनिक पहचान नहीं, बल्कि उनकी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परंपराओं के प्रतीक हैं। अरुणाचल प्रदेश का अर्थ है "सूर्य के उदय का पर्वतीय प्रदेश"। असम का नाम 'असमा' से जुड़ा है, जिसका अर्थ है 'अद्वितीय'। मणिपुर का अर्थ है 'रत्नों का नगर', जिसका उल्लेख महाभारत में भी मिलता है। मेघालय का अर्थ है 'बादलों का घर'। त्रिपुरा का अर्थ है 'तीन नगर', जो पौराणिक परंपराओं से जुड़ा है। मिज़ोरम का नाम मिज़ो भाषा से लिया गया है– 'लोगों की पहाड़ी भूमि'। नागालैंड का नाम नागा जनजातियों से संबंधित है। सिक्किम का नाम स्थानीय लिम्बू भाषा से आया है– 'नया घर'। इन नामों में मिजोरम और सिक्किम को छोड़कर सभी संस्कृत या यों कहे कि हिंदी की शब्दावली से निर्मित नाम हैं, तो गलत नहीं होगा।

सांस्कृतिक और भाषाई विविधता

उत्तर–पूर्वी भारत की संस्कृति अत्यंत समृद्ध है। यहां सैकड़ों जनजातियां निवास करती हैं जिनकी अपनी परंपराएं, लोककथाएं, वेशभूषा, संगीत और नृत्य हैं। बिहू (असम), हॉर्नबिल (नागालैंड), वांगला (मेघालय), चापचार कुट (मिज़ोरम) और याओशांग (मणिपुर) जैसे पर्व इस क्षेत्र की सांस्कृतिक चेतना को जीवंत बनाते हैं। भाषाई दृष्टि से यहां तिब्बती–बर्मी, इंडो–आर्यन और ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवारों की भाषाएं बोली जाती हैं। इतनी भाषाई विविधता के बीच एक संपर्क भाषा आवश्यक है, जिससे राज्यों के बीच संवाद और शेष भारत से जुड़ाव सरल हो सके। अंग्रेज़ी प्रशासनिक भाषा है, किंतु आम जनमानस तक समान रूप से नहीं पहुंच पाती। इसीलिए हिंदी यहाँ भाषायी सेतु बन कर उभर रही है। इन राज्यों के विकास और एकता का माध्यम बन रही है। हिंदी भारत की राजभाषा होने के साथ–साथ अधिकांश भाग में समझी जाती है। उत्तर–पूर्वी राज्यों में हिंदी रोजगार और शिक्षा के अवसर बढ़ा रही है, पर्यटन और व्यापार को प्रोत्साहित कर रही है और साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर संवाद को सशक्त बना रही है। हिंदी का उद्देश्य स्थानीय भाषाओं को प्रतिस्थापित करना नहीं, बल्कि उनके साथ सहअस्तित्व में एक सेतु भाषा के रूप में कार्य करना है।

हिंदीः अंतर–राज्यीय और राष्ट्रीय सेतु

भारत का यह उत्तर–पूर्व क्षेत्र ऐतिहासिक रूप से भौगोलिक दूरी और संचार के अभाव के कारण देश की मुख्यधारा से अपेक्षाकृत कटा हुआ रहा। किंतु, कला और सिनेमा में वह शक्ति होती है जो सीमाओं को लांघकर दिलों को जोड़ती है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा, संचार और कला के माध्यम से यह दूरी कम होती गई, जिसमें हिंदी फिल्म जगत एक सशक्त माध्यम बना। हिंदी सिनेमा केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक संवाद का मंच रहा है। हिंदी भाषा उत्तर–पूर्वी राज्यों को भारत के अन्य हिस्सों से जोड़ने के साथ–साथ स्वयं इन राज्यों के बीच भी संवाद का माध्यम बन रही है। हिंदी साहित्य, सिनेमा, मीडिया और डिजिटल मंचों के जरिए यहां की संस्कृति और परंपराएं पूरे देश तक पहुंच रही हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः प्रारंभिक संपर्क के सूत्र

उत्तर–पूर्व क्षेत्र के संगीत, गायन और अभिनय से जुड़े कलाकारों ने अपने राज्यों को भारत की आम जनता के समक्ष प्रस्तुत करने और जोड़ने के लिए हिंदी भाषा को अपना माध्यम बनाया।

1950 और 1960 के दशकों में जब हिंदी फिल्म उद्योग आकार ले रहा था, उसी समय उत्तर–पूर्व से आए कुछ कलाकारों ने मुंबई को कर्मभूमि बनाया। सचिन देव बर्मन, डॉ. भूपेन हजारिका, डैनी डेन्जोंगपा से लेकर आज की युवा पीढ़ी में लोकप्रिय हुए पापोन, जुबिन गर्ग और चुम दारंग तक उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के कालाकारों ने अपनी प्रतिभा को प्रदर्शित करने हेतु हिंदी भाषा को चुना।

ISSN No. : 0970-9398

हिंदी फिल्म जगत के महान संगीतकार सचिन देव बर्मन और आर.डी बर्मन की लोकप्रियता से भारत का कोई फिल्म संगीत प्रेमी अनजान नहीं है। त्रिपुरा से जुड़े सचिन देव बर्मन हिंदी फिल्म संगीत के स्तंभ बने। उनके माध्यम से पहली बार उत्तर–पूर्व की लोक–संवेदना और धुनें हिंदी फिल्मों में प्रवेश कर पाईं। यह वह दौर था जब संगीत ही उत्तर–पूर्व और हिंदी सिनेमा के बीच पहला सेतु बना।

सचिन देव बर्मनः लोक–धुनों के सम्राट और भाषिक समन्वय

सचिन देव बर्मन का जन्म 1906 में त्रिपुरा रियासत के शाही परिवार में हुआ। उनके पिता नवाब ईशानचंद्र देव बर्मन संगीत प्रेमी थे। परिवार की असहमति के बावजूद उन्होंने संगीत को जीवन का लक्ष्य बनाया और मुंबई में संघर्ष के बाद 'देवदास', 'प्यासा', 'गाइड' और 'बाजी' जैसी फिल्मों में कालजयी संगीत दिया। बर्मन दा ने संगीतकारों और गीतकारों के साथ मिलकर हिंदी फिल्मों को लोक–तत्वों से जोड़ाः

- **साहिर लुधियानवी के साथः** फिल्म 'प्यासा' में साहिर के उर्दू शब्दों और बर्मन दा की उत्तर–पूर्वी लोक–धुनों ने एक जादू पैदा किया। एस.डी. बर्मन और साहिर लुधियानवी ने मिलकर 'नौजवान', 'बाजी', 'जादू', 'टैक्सी ड्राइवर', 'प्यासा', 'फंटूश', 'हाउस नंबर 44', 'मुनिमजी', 'सुजाता', 'कागज़ के फूल' जैसी कई सफल फ़िल्में दीं, जिनमें 'सर जो तेरा चकराए', 'जाने वो कैसे लोग थे', 'ये रात ये चांदनी', और 'हम आपकी आँखों में' जैसे कालजयी गाने हैं, जो हिंदी सिनेमा के सुनहरे दौर का हिस्सा हैं।
- **मजरूह सुल्तानपुरी के साथः** उन्होंने हिंदी को बहुत ही सहज और लयबद्ध रूप में प्रस्तुत किया। एस.डी. बर्मन और मजरूह सुल्तानपुरी की जोड़ी ने कई सफल फ़िल्मों के लिए यादगार गीत दिए, जिनमें 'नौ दो ग्यारह' (1957) ('हम हैं राही प्यार के'), 'पेइंग गेस्ट' (1957) ('माना जनाब ने पुकारा'), 'चलती का नाम गाड़ी' (1958) ('एक लड़की भीगी भागी सी'), 'गाइड' (1965) ('होठों में ऐसी बात'), 'तीन देवियाँ' (1965) ('उफ कितनी है'), और 'शर्मीली' (1971) ('खिलते हैं गुल यहाँ') जैसी फ़िल्में शामिल हैं, जो हिंदी सिनेमा के क्लासिक गीतों में गिनी जाती हैं।
- **शैलेंद्र के साथः** 'गाइड' और 'बंदिनी' जैसी फिल्मों में शैलेंद्र की सरल हिंदी और बर्मन दा की गहरी संवेदनाओं ने ऐसे गीत दिए जो आज भी कालजयी हैं। एस.डी. बर्मन और शैलेंद्र ने कई यादगार फिल्मों में साथ काम किया, जिनमें प्रमुख हैं ' गाइड' (1965) (जैसे 'पिया तोसे नैना लागे रे'), 'बंदिनी' (1963) (जैसे 'मेरे साजन हैं उस पार'), और 'जाग उठा इंसान', जहाँ उन्होंने मिलकर बेहतरीन संगीत और गीत दिए, जो हिंदी सिनेमा के क्लासिक्स बन गए।

राहुल देव बर्मन (आर.डी. बर्मन): आधुनिकता और किशोर कुमार का साथ

आर.डी. बर्मन भी अपने पिता सचिन देव बर्मन और उनकी माता मीरा देव बर्मन भी एक संगीतज्ञ थीं। उन्होंने पश्चिमी वाद्ययंत्रों को भारतीय रागों से जोड़ा और 'शोले', 'अमर प्रेम', 'हरे रामा हरे कृष्णा' जैसी फिल्मों के जरिए युवा पीढ़ी की आवाज़ बने।

- **किशोर कुमार के साथ रोचक किस्सेः** किशोर कुमार और आर.डी. बर्मन के बीच अक्सर ऐसी चर्चाएँ होती थीं कि कैसे किसी धुन को उत्तर–पूर्वी वाद्ययंत्रों की तरह 'बाउंसी' बनाया जाए।
- **पहाड़ी प्रभावः** उनकी योडेलिंग शैली और संगीत में सिक्किम व असम के लोक गीतों की ताल का गहरा प्रभाव देखा जा सकता है।

डॉ. भूपेन हजारिकाः ब्रह्मपुत्र का स्वर

असम में जन्मे भूपेन हजारिका केवल गायक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक दार्शनिक थे। उनकी हिंदी रचनाएँ– 'दिल हूम हूम करे', 'गंगा मेरी माँ'–उत्तर–पूर्व की पीड़ा, वहां की प्रकृति और मानवीय करुणा को गहराई से व्यक्त करती हैं। उन्हें दादा साहेब फाल्के पुरस्कार सहित अनेक राष्ट्रीय सम्मान मिले।

डॉ. भूपेन हजारिका का हिंदी फिल्मों से गहरा नाता रहा है, खासकर कल्पना लाजमी के साथ काम करके उन्होंने 'एक पल', 'रुदाली', 'दमन' जैसी फिल्मों के संगीत और निर्देशन में

महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिनमें उनके कई पुराने असमिया गानों को हिंदी में रूपांतरित किया गया और 'रुदाली' के लिए उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिला, जिससे वे असमिया सिनेमा से हिंदी फिल्मों तक अपनी आवाज़ और संगीत का प्रभाव फैला पाए।

हिंदी फिल्मों में उनका मुख्य योगदान कुछ इस प्रकार है:

- **संगीत और निर्देशन:** उन्होंने कई हिंदी फिल्मों जैसे 'रुदाली' (1993), 'एक पल' (1986), और 'दमनः ए विक्टिम ऑफ मेट्रियल वायलेंस' (2001) के लिए संगीत दिया और निर्देशन भी किया।
- **गाना:** वह कई भाषाओं के जानकार थे और अक्सर अपने असमिया गानों को हिंदी में अनुवाद करके गाते थे, जैसे 'दिल हूम हूम करे' और 'ओ गंगा बहती हो क्यों'।
- **'रुदाली' (1993):** इस फिल्म के लिए उन्हें सर्वश्रेष्ठ संगीत निर्देशन के लिए राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार मिला, जो उनके हिंदी सिनेमा में एक बड़ी उपलब्धि थी।
- **'गजगामिनी' (2000):** इस फिल्म में भी उन्होंने संगीत दिया।
- **'साज' (1998) और 'दरमियां' (1997):** इन फिल्मों में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा।
- उन्होंने 1970 के दशक से हिंदी फिल्मों पर ध्यान केंद्रित करना शुरू किया, खासकर कल्पना लाजमी के साथ मिलकर काम किया।
- उनकी कला सिर्फ असम तक सीमित नहीं थी; उन्होंने हिंदी सिनेमा के माध्यम से सामाजिक मुद्दों को अपनी आवाज़ दी।
- उन्हें उनके कार्यों के लिए पद्म श्री, पद्म भूषण, और मरणोपरांत भारत रत्न जैसे सम्मान मिले और उनकी विरासत हिंदी और असमिया सिनेमा दोनों में जीवित है।

आधुनिक स्वरः पापोन और जुबीन गर्ग

पापोन (अंगराग महंत) और जुबीन गर्ग आधुनिक हिंदी सिनेमा में उत्तर–पूर्व की सशक्त आवाज़ हैं। पापोन के गीत 'जीये क्यों' और जुबीन गर्ग के सूफी और ऊर्जावान गीतों ने युवा श्रोताओं में विशेष लोकप्रियता पाई।

अभिनय जगत : सशक्त संवाद

डैनी डेन्जोंगपाः सिक्किम का गौरव

डैनी डेन्जोंगपा (त्सेरिंग फुंटसोक डेन्जोंगपा) का जन्म 1948 में सिक्किम में हुआ। एफटीआईआई, पुणे से शिक्षा प्राप्त कर उन्होंने 'धर्मात्मा', 'अग्निपथ', 'खुदा गवाह' जैसी फिल्मों में सशक्त भूमिकाएँ निभाईं।

प्रसिद्ध संवादः फिल्म 'क्रांतिवीर' में चतुर सिंह चीता की भूमिका में उनका संवाद– "यह धरती तुम्हारी भी है और हमारी भी, लेकिन इस पर राज करने का हक सिर्फ हमारा है! "–अत्यंत प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने हिंदी और उर्दू के शब्दों को अपनी भारी आवाज़ के साथ ऐसा मिलाया कि वह खलनायक की नई परिभाषा बन गए। उन्हें पद्मश्री से सम्मानित किया गया।

डैनी डेन्जोंगपा ने हिंदी फिल्मों के अभिनेता, पार्श्व गायक और फिल्म निर्देशक के रूप में बहुत नाम कमाया। उनका फिल्मी करियर मुख्य रूप से हिंदी में रहा है, लेकिन उन्होंने कभी–कभी बंगाली, नेपाली और तमिल फिल्मों में भी काम किया है। पांच दशकों के अपने करियर में, उन्होंने 1971 से अब तक 190 से अधिक फिल्मों में अभिनय किया है। 2003 में, डेन्जोंगपा को भारत के चौथे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पद्म श्री से सम्मानित किया गया।

उन्होंने कुछ अंतर्राष्ट्रीय फिल्मों में भी अभिनय किया है, जिनमें से सबसे 'प्रसिद्ध सेवेन इयर्स इन तिब्बत' है जिसमें वह ब्रैड पिट के साथ दिखाई दिए थे। उनकी सबसे प्रसिद्ध खलनायक भूमिकाएँ धुंध, 36 घंटे, बंदिश, जियो और जीने दो, प्यार झुकता नहीं, आंधी–तूफान, अग्निपथ, हम, क्रांतिवीर, इंडियन और एंथिरन में हैं जबकि उनकी सबसे प्रसिद्ध सकारात्मक भूमिकाएँ चोर मचाये शोर, फकीरा, कालीचरण, देवता, बुलंदी, अधिकार, आग ही आग, चाइना गेट में थीं। उनके निर्देशन में बनी फिल्म 'फिर वही रात' को हिंदी सिनेमा की शीर्ष पांच सर्वश्रेष्ठ हॉरर सस्पेंस फिल्मों में से एक माना गया था। उर्दू भाषा पर उनकी पकड़ सावन कुमार की सनम बेवफा और मुकुल आनंद की खुदा गवाह जैसी फिल्मों में काम आई ।

अदिल हुसैनः असम की पहचान

असम के गोलपाड़ा ज़िले में जन्मे अदिल हुसैन हिंदी फिल्म जगत के उन अभिनेताओं में हैं जिन्होंने सशक्त अभिनय के माध्यम से अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। रंगमंच से प्रशिक्षित अदिल हुसैन ने हिंदी सिनेमा में प्रारंभिक रूप से छोटे किरदार निभाए, किंतु अपनी अभिनय क्षमता के बल पर शीघ्र ही वे महत्त्वपूर्ण भूमिकाओं तक पहुँचे।

वर्ष 2010 में आई फिल्म 'इश्किया' में विद्या बालन के पति की भूमिका ने उन्हें व्यापक पहचान दिलाई। इसके बाद 'इंग्लिश विंग्लिश' (2012) में श्रीदेवी के पति के रूप में उनका संयमित और यथार्थवादी अभिनय विशेष रूप से सराहा गया। 'एजेंट विनोद', 'लूटेरा', 'ज़ेड प्लस', 'एंग्री इंडियन गॉडेसिस'

ISSN No. : 0970-9398

और 'पार्च्ड' जैसी फिल्मों में उनके विविध चरित्र हिंदी सिनेमा में उनकी बहुमुखी प्रतिभा को रेखांकित करते हैं। अदिल हुसैन के अभिनय की विशेषता उसकी सहजता, गहराई और सामाजिक यथार्थ से जुड़ाव है। उनके योगदान ने न केवल हिंदी सिनेमा को समृद्ध किया है, बल्कि उत्तर–पूर्वी भारत के कलाकारों की सशक्त उपस्थिति को भी राष्ट्रीय मंच पर स्थापित किया है।

महिला सहभागिता

सीमा बिस्वासः असम की यथार्थवादी अभिनेत्री

असम की सीमा बिस्वास ने 'बैंडिट क्वीन' से हिंदी सिनेमा में यथार्थवादी अभिनय की मिसाल कायम की और राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्राप्त किया। सीमा बिस्वास का जन्म एक शिक्षित बंगाली परिवार में हुआ। उनके पिता जगदीश बिस्वास पेशे से निर्माण व्यवसायी थे, जबकि उनकी माता मीरा बिस्वास इतिहास की शिक्षिका थीं। प्रारंभिक शिक्षा के उपरांत सीमा बिस्वास ने असम के नलबाड़ी कॉलेज से राजनीति विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। अभिनय के प्रति गहरी रुचि के कारण उन्होंने आगे चलकर नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा, नई दिल्ली से नाट्य कला में डिप्लोमा किया, जिसने उनके अभिनय कौशल को सुदृढ़ आधार प्रदान किया।

सीमा बिस्वास ने अपने फ़िल्मी करियर की शुरुआत वर्ष 1988 में फिल्म 'अम्शिनी' से की, किंतु उन्हें वास्तविक पहचान वर्ष 1994 में शेखर कपूर निर्देशित चर्चित फिल्म 'बैंडिट क्वीन' से मिली। इस फिल्म में फूलन देवी की भूमिका निभाकर उन्होंने हिंदी सिनेमा में एक सशक्त और साहसी स्त्री पात्र को अमर बना दिया। इस भूमिका के लिए उन्हें सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्रदान किया गया।

इसके पश्चात् उन्होंने 'खामोशीः द म्यूजिकल', 'भूत', 'विवाह' और 'हाफ गर्लफ्रेंड' जैसी हिंदी फिल्मों में विविध भूमिकाएँ निभाईं। सीमा बिस्वास का अभिनय यथार्थ, संवेदना और गहन सामाजिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। उनके योगदान ने हिंदी सिनेमा में उत्तर–पूर्वी भारत की प्रतिभा को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठा दिलाई है।

सीमा बिस्वास के अलावा जिन अभिनेत्रियों ने हिंदी फिल्म जगत में अपनी प्रतिभा को प्रदर्शित किया है, वे हैं –

- **डिपनिता शर्मा (असम)**: मॉडलिंग से अभिनय तक का सफर तय किया और 'लड़की 420' के साथ कई वेब सीरीज़ में कार्य किया।
- **लिन लैशराम (मणिपुर)**: थिएटर से हिंदी फिल्मों तक अपनी पहचान बनाई और उत्तर–पूर्व के किरदारों को गरिमा प्रदान की।
- **चुम दारंग (अरुणाचल प्रदेश)**: विज्ञापनों और आधुनिक सिनेमा में उत्तर–पूर्व की एक नई और आत्मविश्वास से भरी छवि प्रस्तुत करती हैं।

डिजिटल युग में ओटीटी प्लेटफॉर्म उत्तर–पूर्व के कलाकारों के लिए नए अवसर लेकर आए हैं। वेब सीरीज़ और विज्ञापनों में उनकी बढ़ती उपस्थिति ने सांस्कृतिक दूरी को कम किया है। प्रारंभिक हिंदी फिल्मों में उत्तर–पूर्व को अक्सर रहस्यमय या सीमांत रूप में दिखाया गया था, किंतु हाल के वर्षों में यथार्थपरक और सम्मानजनक प्रस्तुति बढ़ी है। यह परिवर्तन राष्ट्रीय सांस्कृतिक संवाद का एक अत्यंत सकारात्मक संकेत है।

निष्कर्ष

हिंदी फिल्म जगत और उत्तर–पूर्व राज्यों का अंतः संबंध भारतीय सांस्कृतिक एकता का सशक्त उदाहरण है। इसने न केवल कलाकारों को एक विशाल मंच दिया, बल्कि राष्ट्रीय चेतना को भी अपनी लोक–संवेदनाओं और कला से समृद्ध किया है। भविष्य में ओटीटी, क्षेत्रीय सिनेमा और सह–निर्माण के माध्यम से यह संबंध और भी गहरा होने की अपार संभावनाएँ हैं। पूर्वोत्तर राज्यों को भारत के कोने–कोने से जोड़ने में हिंदी भाषा का कला स्तंभ 'हिंदी फिल्म' एक सशक्त माध्यम के रूप में उभर रहा है।

ISSN No. : 0970-9398

'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना में पूर्वोत्तर भारत

– रमेश कुमार पाण्डेय,
निरीक्षक (हिंदी अनुवादक)
केरिपुबल, दलगांव, जिला–दरंग (असम)

भारत एक अद्वितीय राष्ट्र है– विविध भाषाओं, संस्कृतियों, धर्मों, परंपराओं और भौगोलिक चेहरों का ऐसा संगम जहाँ विविधता में एकात्मता ही राष्ट्रीय पहचान है। इस बहुलतावादी भारतीयता को और प्रभावशाली, सशक्त और समावेशी बनाने के उद्देश्य से केंद्र सरकार ने "एक भारत श्रेष्ठ भारत" की संकल्पना विकसित की है। यह न केवल राष्ट्रीय एकता और सार्वभौमिकता की भावना को बढ़ावा देती है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक संयोजन को भी सुदृढ़ करती है।

1. "एक भारत श्रेष्ठ भारत" की अवधारणा : उद्देश्य और संरचना–

"एक भारत श्रेष्ठ भारत" का मूल लक्ष्य संस्कृति, भाषा, विचार और अनुभवों के आदान–प्रदान को प्रोत्साहित करना है। यह पहल केंद्र सरकार, राज्य सरकारों, शैक्षणिक संस्थानों, नागरिक संगठनों और समुदायों के सहयोग से राष्ट्रीय बान्धविकता को सुदृढ़ करती है। इसके तीन प्रमुख उद्देश्य हैं:

1. सांस्कृतिक एकात्मता का संवर्धन।
2. भाषाई और सामाजिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहन।
3. अन्य राज्यों के साथ परस्पर समझ और सहिष्णुता का निर्माण।

"एक भारत श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम के तत्वगत अंश जैसे विद्यार्थी आदान–प्रदान, सांस्कृतिक कार्यक्रम, स्थानीय विरासत संरक्षण और पर्यटन उन्नयन पूर्वोत्तर को एक राष्ट्रीय समन्वय–केंद्र के रूप में उभारते हैं। यह पहल यह मानती है कि "एकता समानता नहीं, बल्कि विविधता में सामंजस्य है।"

2. पूर्वोत्तर भारतः भौगोलिक, ऐतिहासिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य

पूर्वोत्तर भारत, भारत का सामरिक एवं सांस्कृतिक प्रवेश द्वार अपनी विशिष्ट भौगोलिक संरचना, पर्वतीय परिदृश्य और नदी–प्रधान भूभाग के कारण न केवल प्राकृतिक रूप से समृद्ध है, बल्कि दक्षिण–पूर्व एशिया से भारत को जोड़ने वाला रणनीतिक क्षेत्र भी है।

पूर्वोत्तर भारत आठ राज्यों का क्षेत्र है – असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। यह क्षेत्र भारत का सांस्कृतिक और भौगोलिक "दक्षिण–पूर्व एशिया का प्रवेश द्वार" भी है। इसकी सीमा भूटान, बांग्लादेश, चीन और म्यांमार से मिलती है और इसका आवागमन ऐतिहासिक रूप से सूखे गलियारों तथा पारंपरिक व्यापार मार्गों के माध्यम से रहा है।

इतिहास में यह क्षेत्र विभिन्न राज्यों और जनजातीय संघों के रूप में विकसित हुआ। अहोम साम्राज्य, कोहिमा के नागा राज्यों, मेघालय के खासी–गारो समुदायों और मणिपुर के मैतेई संस्कृति की परंपरा इस क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान है। ब्रिटिश काल में इसे सीमांत क्षेत्र के रूप में देखा गया, जिसके परिणामस्वरूप औपनिवेशिक प्रशासन ने इसे मुख्यधारा से अलग रखा, जिसका प्रभाव आज भी सामाजिक और आर्थिक संकेतकों में परिलक्षित होता है।

पूर्वोत्तर की सामाजिक संरचना में जनजातीय विविधता, भाषा समूहों की बहुलता, परंपरागत सामाजिक व्यवस्थाएँ और विविध आर्थिक प्रणालियाँ शामिल हैं। इस क्षेत्र में विविधता की

ISSN No. : 0970-9398

यह परंपरा "एक भारत, श्रेष्ठ भारत" के उद्देश्यों के अनुरूप एक बहुआयामी सम्मिलन का आधार प्रदान करती है।

3. सांस्कृतिक एकात्मता और विविधताः साझा विरासत की पहचान

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक परंपराएँ–बिहू, मणिपुरी नृत्य, चेराओ और हॉर्नबिल उत्सव, सामुदायिक जीवन, प्रकृति–सम्मान और सामाजिक एकता की जीवंत अभिव्यक्ति हैं, जो 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' की भावना को साकार करती हैं।

पूर्वोत्तर भारत सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यंत समृद्ध है। यहाँ की नृत्य–परंपराएँ (जैसे बिहू, मणिपुरी, चेरओ), संगीत (लोक संगीत से आधुनिक समन्वय), त्यौहार (बिहू, हॉर्नबिल, लोंगदार), लोक कलाएँ और परंपरागत वस्त्र–बुनाई इस क्षेत्र की पहचान रही हैं।

"एक भारत, श्रेष्ठ भारत" के तहत जब भारत के विभिन्न भागों से लोग पूर्वोत्तर के त्योहारों, लोककला, हस्तशिल्प और जीवनशैली का अनुभव करते हैं, तब यह न केवल पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान को मान्यता देता है, बल्कि राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकात्मता को भी सुदृढ़ बनाता है। उदाहरणतः असम के बिहू का अनुभव यदि किसी अन्य राज्य के विद्यार्थी तक पहुँचता है, तो वह केवल नृत्य नहीं सीखता, बल्कि वह वहां की सामाजिक भावना, कृषि–आधारित परंपरा और स्थानीय सोच तक पहुँचता है। यही प्रवाह जब पीछे की दिशा में होता है, तो पूर्वोत्तर के युवाओं में अन्य भारतीय संस्कृतियों का सम्मान और समझ उत्पन्न होती है।

4. पारंपरिक वेशभूषा और हस्तशिल्प : पहचान की बुनावट

पूर्वोत्तर भारत की पारंपरिक वेशभूषा और हथकरघा उत्पाद स्थानीय पहचान, जनजातीय विरासत और आत्मनिर्भर

सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था के प्रतीक हैं, जो राष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक समन्वय को सुदृढ़ करते हैं। पूर्वोत्तर भारत की वेशभूषा उसकी सांस्कृतिक स्मृति को संजोए हुए है। असम की मेखला–चादर, नागा जनजातियों की रंगीन पोशाकें, मिज़ो और खासी परिधानों की सादगी, ये सभी स्थानीय इतिहास और सामाजिक संरचना की कथा कहते हैं।

हथकरघा और हस्तशिल्प यहाँ केवल आजीविका नहीं, बल्कि आत्मनिर्भर संस्कृति का आधार हैं। 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' के अंतर्गत जब इन उत्पादों को राष्ट्रीय बाजार और पहचान मिलती है, तब सांस्कृतिक सम्मान के साथ आर्थिक सशक्तिकरण भी सुनिश्चित होता है।

5. भाषा, संवाद और सामाजिक समावेशन

विविध जनजातीय समुदायों और भाषाई समूहों से समृद्ध पूर्वोत्तर भारत भारतीय बहुलतावाद का सजीव उदाहरण है, जहाँ भाषा केवल संवाद नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक पहचान का माध्यम है। पूर्वोत्तर भारत में भाषाई विविधता अत्यधिक गहन है। असमिया, मणिपुरी, खासी, गारो, मिज़ो, नागा भाषाएँ और सैकड़ों उपभाषाएँ इस क्षेत्र की बोलचाल की भाषा हैं। ऐसी बहुलतावादी भाषा–संस्कृति के बीच राष्ट्रीय एकता का अर्थ है भाषाई सम्मान और भाषा आदान–प्रदान।

ISSN No. : 0970-9398

"एक भारत, श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम भाषाई आदान–प्रदान कार्यक्रमों के माध्यम से स्थानीय भाषाओं का सम्मान बढ़ाता है। शिक्षण संस्थानों में भाषा कार्यशालाएँ, अनुवाद परियोजनाएँ, और भारतीय भाषाओं के बीच संवाद को प्रोत्साहित किया जाता है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि भाषाई विविधता सामाजिक दूरी का कारण न बने, बल्कि साझे संवाद का पुल बने।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि भाषा केवल संवाद का साधन नहीं होती, बल्कि सांस्कृतिक चेतना, आत्म–पहचान और सामाजिक संवेदनशीलता का वाहक भी होती है। इसलिए भाषाई आदान–प्रदान राष्ट्रीय एकता की वास्तविक आधारशिला है।

6. शिक्षा और युवाः राष्ट्रीय चेतना का संवाहक

छात्र–विनिमय, एनसीसी तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते पूर्वोत्तर भारत के युवा, 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' के अंतर्गत राष्ट्रीय चेतना, आपसी समझ और भावनात्मक एकात्मता के सशक्त वाहक के रूप स्थापित करते हैं। "एक भारत श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम का एक महत्त्वपूर्ण आयाम छात्रों तथा युवाओं को जोड़ना है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत विद्यार्थियों का आपसी आदान–प्रदान, शैक्षणिक संबद्ध कार्यक्रम, युवा नेतृत्व शिविर, एनसीसी, एनएसएस, खेल, कला एवं विज्ञान प्रतियोगिताएँ जैसे कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

पूर्वोत्तर के छात्रों को जब अन्य राज्यों के साथ सम्मिलित किया जाता है, तो वे केवल संवाद नहीं करते, बल्कि समस्याओं, चेतना, जीवन के दृष्टिकोण और राष्ट्रीय भावनाओं को साझा करते हैं। इसी प्रक्रिया में वे राष्ट्रीय चेतना, आत्मसम्मान और

विश्वास का निर्माण करते हैं। उदाहरणार्थ, असम के एक छात्र का तमिलनाडु के छात्र के साथ सांस्कृतिक आदान–प्रदान केवल भाषा नहीं सीखता; वह समय, परंपरा, इतिहास और जीवनशैली की समृद्धि को अनुभव करता है। युवा इस प्रक्रिया में अपने क्षेत्र की पहचान को सम्मान और गर्व से प्रस्तुत करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे भारतीय राष्ट्र–चेतना के जीवंत संरक्षक बनते हैं।

7. आर्थिक समन्वय और सामाजिक समृद्धि

चाय बागान, बांस–आधारित हस्तशिल्प और जैविक कृषि, पूर्वोत्तर भारत की ये आर्थिक गतिविधियाँ स्थानीय आत्मनिर्भरता, महिला सशक्तिकरण और समावेशी विकास की मजबूत आधारशिला हैं। राष्ट्रीय संकल्पना में आर्थिक पहलू का समावेश अत्यंत आवश्यक है। पूर्वोत्तर भारत की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि, हस्तशिल्प, बुनाई, पर्यटन और वन–उत्पादों पर आधारित है। चाय, बांस, रेशम, मसाले और जैविक कृषि इस क्षेत्र के विशिष्ट उत्पादन हैं।

ISSN No. : 0970-9398

"एक भारत, श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम के अंतर्गत पोर्टल और बाज़ार–प्रवेश योजनाएँ, उत्पाद ब्रांडिंग, तकनीकी सहयोग और राष्ट्रीय फ़ैशन की विधाओं से संयोजन जैसे उपाय किए जाते हैं। इससे न केवल स्थानीय उत्पादों को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिलती है, बल्कि स्थानीय रोजगार, आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक समृद्धि भी सुनिश्चित होती है। उदाहरणतः असम के सिले चीनी, मिज़ोरम के हस्तशिल्प और नागालैंड की पारंपरिक वस्त्र बुनाई जब राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुँचती हैं, तो वहाँ की स्थानीय पहचान, ग्रामीण रोजगार और सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है।

8. पर्यटन और आदान–प्रदानः राष्ट्रीयता की दिशा में संवेदनशील अनुभव

पूर्वोत्तर भारत का प्राकृतिक सौंदर्य पर्वत, झीलें, वन और जैव विविधता संवेदनशील पर्यटन के माध्यम से सांस्कृतिक संवाद और राष्ट्रीय एकता को नई गहराई प्रदान करता है। पर्यटन केवल यात्रा नहीं, बल्कि संवेदनशील अनुभव का आदान–प्रदान है। पूर्वोत्तर भारत की प्राकृतिक खूबसूरती–पर्वत, नदियाँ, घाटियाँ, वन्य–जीव अभ्यारण्य और शांत झीलें–इसे भारत के पर्यटन मानचित्र का प्रमुख केंद्र बनाती हैं। "एक भारत श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम में पर्यटन को संवाद, सहभागिता और समझ का मार्ग माना जाता है। जब देश के अन्य हिस्सों के नागरिक पूर्वोत्तर आते हैं, तो वे केवल दृश्यों को नहीं देखते; वे वहाँ के जीवन रूप, परंपरा और प्राकृतिक दृष्टिकोण को महसूस करते हैं। इससे राष्ट्रीय एकता की भावना और सम्मान दोनों को मजबूती मिलती है।

9. सामाजिक चुनौतियाँ और संभावनाएं

पूर्वोत्तर भारत की चुनौतियाँ – जैसे सड़क और परिवहन की कमी, संचार दूरी, सामाजिक पूर्वाग्रह और केंद्रीय नीतियों की केंद्रित पहुँच– एकता के पथ में बाधक हैं। "एक भारत श्रेष्ठ भारत" कार्यक्रम इन बाधाओं को दूर करने हेतु स्थानीय सहभागिता, निरंतर संवाद, जन–आधारित परियोजनाएँ और सांस्कृतिक संवेदनशीलता प्रस्तुत करता है।

यद्यपि प्रगति उल्लेखनीय है, फिर भी संपर्क, अवसंरचना, कौशल–विकास और सांस्कृतिक संवेदनशीलता जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इनका समाधान भागीदारीपूर्ण नीति–निर्माण, स्थानीय नेतृत्व और सांस्कृतिक सम्मान से ही संभव है। पूर्वोत्तर भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसकी विविधता है और यही शक्ति भारत को श्रेष्ठ बनाती है।

10. निष्कर्षः

"एक भारत, श्रेष्ठ भारत" की संकल्पना का सार यह है कि विविधता में एकता, सामंजस्य में सम्मान और परस्पर समझ में सहयोग हो। पूर्वोत्तर भारत इस संकल्पना का केवल भाग नहीं, बल्कि परोक्ष प्रमाण है कि जब हम विविधता को अपनाते हैं, तो हमारा राष्ट्रीयतावादी दृष्टिकोण समृद्ध, सशक्त और सर्वसमावेशी बनता है। पूर्वोत्तर के जीवन, संस्कृति, भाषा, इतिहास और पहचान को सम्मान देकर हम केवल उस क्षेत्र को नहीं जोड़ते, बल्कि भारत की राष्ट्रीय आत्मा को और मजबूत करते हैं। पूर्वोत्तर भारत को समझे बिना भारत को पूर्ण रूप से समझना संभव नहीं। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना पूर्वोत्तर को केवल भौगोलिक रूप से नहीं, बल्कि भावनात्मक, सांस्कृतिक और वैचारिक रूप से राष्ट्रीय चेतना के केंद्र में स्थापित करती है। एक भारत, श्रेष्ठ भारत वह मार्ग है जो हमें यह याद दिलाता है कि एकता केवल शब्द नहीं, यह एक अनुभव, साझेदारी और विश्वास है क्योंकि जब पूर्वोत्तर की लोक धुनें राष्ट्रीय मंच पर गूंजती हैं, जब वहाँ के युवा देश का नाम रोशन करते हैं, और जब उसकी प्रकृति–संवेदनशील संस्कृति भारत के विकास मॉडल को दिशा देती है तब सच्चे अर्थों में 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' बनता है।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारतः कला, संस्कृति और प्रकृति का अनूठा संगम

– डॉ. सुकांत सुमन
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी
परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार

पूर्वी हिमालय में स्थित भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र, अद्भुत प्राकृतिक सौंदर्य एवं समृद्ध आदिवासी विरासत की भूमि रही है, जो अपने नायाब खनिज संसाधनों और जीवंत सांस्कृतिक पहचान के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। राजनैतिक दृष्टिकोण से देखें तो यह क्षेत्र भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाला एक अहम इकोनॉमिक कॉरिडोर है। अपनी खास भौगोलिक स्थिति के कारण यह भारत की 'एक्ट ईस्ट' पॉलिसी के लिए बेहद महत्वपूर्ण है, जिसका मकसद दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों के साथ वित्तीय एवं सामरिक रिश्तों को प्रगाढ़ करना है।

पूर्वोत्तर भारत, दुनिया के 'बायोडायवर्सिटी हॉटस्पॉट' में से एक है, जहाँ पेड़–पौधों और जानवरों की कई दुर्लभ और आदिम प्रजातियां पाई जाती हैं। इसके अलग–अलग पारिस्थितिकी तंत्र, ट्रॉपिकल वर्षा वन से लेकर अल्पाइन घास के मैदानों तक, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने और जलवायु परिवर्तन से निपटने में बेहद अहम भूमिका निभाते हैं। इस इलाके में तेल, प्राकृतिक गैस और कोयले के भी बड़े रिज़र्व हैं, जो इसे भारत की बढ़ती इकोनॉमी के लिए प्राकृतिक संसाधन का एक बेशकीमती स्रोत बनाता है।

पूर्वोत्तर भारत में 220 से ज़्यादा जनजातियां रहती हैं, जिनकी अपनी खास परंपराएं, रीति–रिवाज, खान–पान और लोक कलाओं की शैली है। संस्कृति, परंपरा एवं भाषा के स्तर पर पूर्वोत्तर की यह समृद्धि वैश्विक मंच पर भारत की बहुलतावादी पहचान और 'सॉफ्ट पावर' के निर्माण में काफी अहम योगदान देती है। इस इलाके की अपनी खास सांस्कृतिक विरासत, जैसे संगीत, नृत्य, शिल्पकला और खान–पान की परंपराओं के कारण इस क्षेत्र में सांस्कृतिक पर्यटन अर्थात् कल्चरल टूरिज्म की बहुत ज़्यादा संभावना है। काज़ीरंगा, असम के एक सिंग वाले गैंडे (राईनो), वहां के घास के मैदानों से लेकर सिक्किम की बर्फीली वादियाँ, मेघालय के केइबुल लामजाओ नेशनल पार्क का लीविंग रूट ब्रिज, अरूणाचल की तवांग वैली आदि पूर्वोत्तर का पूरा इलाका ऐसे अनोखे अनुभव देता है जो घरेलू और विदेशी दोनों तरह के पर्यटकों को आकर्षित कर सकता है।

पूर्वोत्तर के त्योहार इस क्षेत्र की विविध संस्कृति, परंपराओं और रीति–रिवाजों की दिलचस्प झाँकी प्रस्तुत करते हैं। अलग–अलग तरीकों से मनाये जाने वाले ये त्यौहार, वहां के स्थानीय समुदायों की खास विरासत और आध्यात्मिक आस्था को प्रदर्शित करते हैं। पूर्वोत्तर भारत में मनाए जाने वाले सभी त्यौहार सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक मेलजोल और आध्यात्मिक श्रद्धा का एक भावपूर्ण मिश्रण है जो न सिर्फ इस क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत की समृद्धि का जश्न मनाते हैं, बल्कि यहां के लोगों में एकता और अपनेपन की भावना को भी पोषित करते हैं।

उदाहरण के लिए अरुणाचल प्रदेश का सोलुंग पर्व 'आदि समुदाय' का एक सामाजिक–धार्मिक त्योहार है; वहीं म्योको फेस्टिवल मार्च में अलग–अलग अपतानी गांवों के बीच दोस्ती और मेलजोल के त्योहार के तौर पर मनाया जाता है। अरुणाचल प्रदेश के ही गालो समुदाय का एक महत्वपूर्ण त्योहार है– मोपिन, जो खेती–बाड़ी से जुड़ा है। मणिपुर का कांग चिंगबा पर्व 10 दिन का त्योहार है जो हर साल जुलाई में वैष्णव धर्म को मानने वाले मैतेई समुदाय द्वारा मनाया जाता है। त्रिपुरा का खारची पूजा जिसे '14 देवताओं का त्योहार' भी कहा जाता है, और यह हर साल जुलाई या अगस्त में अमावस्या के आठवें दिन मनाया जाता है। इसी प्रकार असम का माजुली पर्व नवंबर में असम राज्य मंत्रालय द्वारा माजुली द्वीप पर आयोजित किया जाता है, जिसमें उद्घाटन और समापन समारोह के दौरान स्थानीय संरक्षक देवता का आह्वान किया जाता है। वहाँ का बिहू पर्व तो कृषि के तीन महत्वपूर्ण चरणों को प्रदर्शित करने के लिए वर्ष भर में तीन बार मनाया जाता है– बोहाग बिहू (जिसे रोंगाली बिहू भी कहा जाता है) बुवाई की शुरुआत का प्रतीक है, काती बिहू खड़ी फसलों के लिए प्रार्थना करने के लिए मनाया जाता है। जबकि माघ बिहू (जिसे भोगाली बिहू भी कहा जाता है) कटाई के मौसम का प्रतीक है। इसके अलावा असम का अंबुवाची मेला हर साल जून महीने के बीच कामाख्या मंदिर में मनाया जाता है जो देवी कामाख्या के 'सालाना शुद्धिकरण' की मान्यताओं से जुड़ा है। इसे पूरब का महाकुंभ भी कहा जाता है।

पूर्वोत्तर के त्योहार की तरह ही यहां के नृत्य भी इस क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधताओं का सजीव प्रतिबिंब हैं। ये नृत्य वहां के समुदायों के लिए केवल मनोरंजन के साधन ही नहीं हैं, बल्कि वे वहां की सामाजिक संरचना, धार्मिक आस्थाओं, प्रकृति–प्रेम और संस्कृति को प्रभावशाली ढंग से प्रदर्शित करते हैं। असम का मुखौटा नृत्य (मुखा भाओना), मणिपुर का पुंग चोलोम, बसंत रास लीला (मणिपुर), अत्रिया नृत्य (असम), बैम्बू डांस (मिज़ोरम), नागा डांस (नागालैंड), त्योहारों के मौकों पर विशेष आकर्षण के केंद्र होते हैं। "हूका हूकी" नृत्य, जो विशेष रूप से नागा जनजातियों में लोकप्रिय है, सामूहिकता और युद्ध की भावना को दर्शाता है।

यह नृत्य एक प्रकार से संघर्ष और सामूहिक शक्ति का प्रतीक है। मिजोरम का चा पुआ नृत्य युवाओं द्वारा मुख्य रूप से आयोजित किया जाता है। यह नृत्य मिजो संस्कृति की आदतों, जैसे कि सामूहिक काम और परंपराओं के प्रति सम्मान, को व्यक्त करता है। यह नृत्य विशेष रूप से नए अनाज की फसल के समय होता है, और यह खेती के प्रति उनकी श्रद्धा को दर्शाता है। अरुणाचल प्रदेश के इडू–मिशमी जनजाति का नृत्य प्राकृतिक तत्वों जैसे पहाड़ों, नदियों और जंगली जीवन से जुड़ा हुआ है। यह नृत्य जनजातीय लोगों के शिकार, कृषि और धार्मिक अनुष्ठानों से संबंधित होता है। इसके माध्यम से वे अपने पूर्वजों और देवी–देवताओं का सम्मान करते हैं। असम का बिहू नृत्य तो अपनी भौगोलिक सीमाओं को पार करते हुए पूरे देश भर में लोकप्रिय हो रहा है। इन नृत्यों में कहीं आध्यात्मिकता और सौंदर्यबोध का पुट मिलता है तो कहीं कोमल गतियाँ और भाव प्रधान अभिनय देखने को मिलता है। नृत्य की ताल एवं गतियाँ प्रकृति से जुड़ाव; जैसे पर्वत, वन, नदियाँ, पशु–पक्षी आदि को अभिव्यक्त करती हैं। इन नृत्यों में कृत्रिम आडंबर के बजाय सरलता, लय और सामूहिक सहभागिता प्रमुख होती हैं। नागालैंड, मिजोरम तथा अरूणाचल प्रदेश के नृत्यों में वीरता, शिकार, युद्ध तथा सामुदायिक एकता के भाव प्रदर्शित होते हैं। इन नृत्यों में पारंपरिक वेश–भूषा, रंग–बिरंगे वस्त्र, पंख, आभूषण और ढोल नगाड़ों का प्रयोग वहाँ की प्राकृतिक संपदा और लोक विश्वासों को उजागर करता है। इस प्रकार ये नृत्य जनजातीय जीवन, जैव विविधता एवं लोक विश्वासों से गहराई से जुड़े होते हैं।

दरअसल पूर्वोत्तर भारत के सभी नृत्य अपनी सांस्कृतिक और धार्मिक धरोहर को जीवित रखने का एक अद्‌भुत तरीका है। इन नृत्यों में न केवल कला का सुंदर रूप दिखता है, बल्कि यह जनजातीय लोगों के जीवन, उनके विश्वासों और उनके संघर्षों को भी व्यक्त करते हैं। इस प्रकार, ये नृत्य उत्तर–पूर्वी भारत की अस्मिता और उनकी समृद्ध सांस्कृतिक विविधताओं का प्रतीक हैं। पूर्वोत्तर के नृत्य केवल मंच प्रदर्शन नहीं, बल्कि उस समुदाय की पहचान, परंपरा एवं भावनाओं की भी अभिव्यक्ति हैं।

पूर्वोत्तर भारत की वेश–भूषा वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों, जलवायु और सांस्कृतिक विविधता से गहराई से जुड़ी हुई है। यह क्षेत्र पर्वतीय, वनाच्छादित और अधिक वर्षा वाला है, जिसका प्रभाव यहाँ के वस्त्रों की बनावट, सामग्री और रंगों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अधिकांश पारंपरिक वेश–भूषाएँ ऊनी, सूती और हाथ से बुने कपड़ों से बनी होती हैं, जो ठंड और नमी दोनों के अनुकूल होती हैं। उदाहरण के लिए असम में महिलाओं की मेखला–चादर वहाँ की समतल भूमि, नदी घाटी और समृद्ध बुनकरी परंपरा को दर्शाती है। इसमें प्राकृतिक रंगों और फूल–पत्तियों के डिज़ाइन ब्रह्मपुत्र घाटी की उर्वरता और प्रकृति–प्रेम का प्रतीक हैं। नागालैंड की जनजातियों की वेश–भूषा में लाल, काला और सफेद रंग प्रमुख होते हैं, जो वीरता, बलिदान और सामाजिक पहचान से जुड़े हैं। इनके वस्त्रों में पंख, दाँत और मोतियों का प्रयोग वन्य जीवन से निकट संबंध को दर्शाता है। मिजोरम की पुआन वेश–भूषा सरल रेखाओं और गहरे रंगों में होती है, जो वहाँ के अनुशासित सामुदायिक जीवन और पर्वतीय भौगोलिक संरचना को प्रतिबिंबित करती है। अरुणाचल प्रदेश की जनजातीय पोशाकों में बाँस, ऊन और फर का प्रयोग ठंडे पर्वतीय क्षेत्रों की आवश्यकता को दर्शाता है, साथ ही यह उनके धार्मिक विश्वासों से भी जुड़ा होता है।

इस प्रकार पूर्वोत्तर की वेश–भूषा केवल पहनावा नहीं, बल्कि वहाँ की भौगोलिक पहचान, प्राकृतिक संसाधनों और सांस्कृतिक मूल्यों को मुखरता से अभिव्यक्त करती है।

पूर्वोत्तर के खान–पान पर अगर गौर करें तो भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र अपनी विशिष्ट खान–पान परंपराओं और सरल, प्रकृति–आधारित जीवन–शैली के लिए जाना जाता है। यहाँ के भोजन में चावल प्रमुख है, जिसे सब्ज़ियों, मांस, मछली और बाँस की कोपलों (बेम्बो शूट) के साथ प्रयोग किया जाता है। नागालैंड और मिज़ोरम में स्मोक्ड मीट लोकप्रिय है, जबकि असम में खट्टे स्वाद के लिए खोरिसा और तेंगा जैसे व्यंजन प्रसिद्ध हैं। अरुणाचल प्रदेश और मणिपुर में उबले या हल्के मसालों वाले भोजन का चलन है, जिससे प्राकृतिक स्वाद बना रहता है। यहाँ तेल और मसालों का सीमित उपयोग किया जाता है, जिससे भोजन स्वास्थ्यवर्धक होता है।

दरअसल पूर्वोत्तर की जीवन–शैली प्रकृति के अत्यंत निकट है। पहाड़ी भू–भाग और घने वनों के कारण यहाँ के लोग कृषि, बागवानी और हस्तशिल्प से जुड़े हैं। झूम खेती कुछ क्षेत्रों में आज भी प्रचलित है। समाज में सामूहिकता, आपसी सहयोग और पारंपरिक मूल्यों को विशेष महत्व दिया जाता है। यहाँ लोकनृत्य, संगीत और त्योहार जीवन का अभिन्न अंग हैं, जिनमें प्रकृति और लोक संस्कृति को काफी महत्व दिया जाता है। सादगी, संतुलन और पर्यावरण के प्रति सम्मान पूर्वोत्तर की जीवन–शैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

उत्तर–पूर्वी भारत की सांस्कृतिक विविधता और गौरव को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार और राज्य सरकारें कई कदम उठा रही हैं। उदाहरण के लिए सन् 2024 में पीएम मोदी ने दिल्ली में पहले बोडोलैंड महोत्सव का उद्‌घाटन किया। यह आयोजन 2020 के बोडो शांति समझौते के बाद बोडो समाज की मजबूती और नए सफर का प्रतीक बना। इसके अलावा सरकार ने दीमापुर में उत्तर पूर्व क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र (NEZCC) की स्थापना की है, ताकि पूर्वोत्तर की संस्कृति को बढ़ावा दिया जा सके। इसी प्रकार उत्तर पूर्वी परिषद (NEC) ने देशभर से लोगों की भागीदारी बढ़ाने, पर्यटन को बढ़ावा देने और सांस्कृतिक अंतर को कम करने के लिए विभिन्न उत्सवों जैसे संगाई महोत्सव (मणिपुर), बेहदीनखलम महोत्सव (मेघालय), और हॉर्नबिल महोत्सव (नागालैंड) के आयोजन में राज्य सरकारों का काफी सहयोग किया है। अप्रैल 2023 में असम में हुए बिहू उत्सव में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी स्वयं शामिल हुए जहाँ 11,000 से अधिक कलाकारों ने एक साथ प्रदर्शन किया और गिनीज वर्ल्ड रिकॉर्ड बनाया। इसी तरह, गत वर्ष उन्होंने झुमोर बिनंदिनी कार्यक्रम में हिस्सा लिया, जिसमें 8,000 कलाकारों ने झुमोर नृत्य प्रस्तुत किया। झुमोर असम की चाय जनजातियों और आदिवासी समुदायों का एक लोक नृत्य है। वर्तमान सरकार विशेषकर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का पूर्वोत्तर क्षेत्र और उसकी संस्कृति से एक लगाव और गौरव का जो भाव है, वह सार्वजनिक जीवन में गाहे–बगाहे परिलक्षित होता रहता है। मसलन प्रधानमंत्री मोदी ने अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में जब

असम के प्रसिद्ध गमछे (फुलाम गोमोसा) को अपने गले में प्रदर्शित किया, तब पूर्वोत्तर की इस सांस्कृतिक विरासत को वैश्विक मंच पर भी पहचान मिली। पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक अस्मिता और उनके गौरवशाली इतिहास के प्रति इस सरकार की निष्ठा का बेहतरीन उदाहरण है– पद्म पुरस्कारों में पूर्वोत्तर की बढ़ती भागीदारी। साल 2014 से अब तक पूर्वोत्तर भारत के 130 से ज्यादा लोगों को पद्म पुरस्कार मिल चुके हैं। इनमें से करीब 50 लोगों को कला और साहित्य के क्षेत्र में काम करने के लिए ये सम्मान मिला है।

इसके अलावा अब इस क्षेत्र के ऐसे गुमनाम नायकों को भी सम्मान दिया जा रहा है जिनके बलिदान के बारे में आम नागरिकों को पहले ज्यादा पता नहीं था। मणिपुर में रानी गाइदिन्ल्यू के नाम पर एक संग्रहालय बनाया गया है, जो इस महान आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी को श्रद्धांजलि है। इसी तरह, खासी नेता यू तिरोत सिंह की बहादुरी को भी याद किया जा रहा है जिन्होंने एंग्लो–खासी युद्ध के समय अंग्रेजों के खिलाफ डटकर लड़ाई लड़ी थी। उनकी कहानी 'मन की बात' कार्यक्रम के जरिए पूरे देश तक पहुंचाई गई। वर्ष 2022 में असम में एक खास उत्सव मनाया गया, जो महान अहोम योद्धा लचित बोरफुकन की 400वीं जयंती को समर्पित था। लचित बोरफुकन ने सरायघाट की लड़ाई में मुगलों के खिलाफ बड़ी बहादुरी से लड़ाई लड़ी थी।

सरकार ने पूर्वोत्तर भारत के गौरवशाली इतिहास को फिर से सामने लाने के लिए अपनी पूरी कोशिश की है। इसी उद्देश्य से असम के शिवसागर में रंग घर को सुंदर बनाने की योजना शुरू की गई है, ताकि अहोम शासन की समृद्ध विरासत को सम्मान दिया जा सके।

इस प्रकार सरकारी स्तर पर तो पूर्वोत्तर की समृद्ध संस्कृति एवं विरासत को संरक्षण एवं प्रचार–प्रसार मिल ही रहा है, बतौर नागरिक भी हमें पूर्वोत्तर के लोगों और उनकी भावनाओं तथा आकांक्षाओं को मुख्य धारा में शामिल करने के लिए और प्रयास करने की आवश्यकता है। मसलन टीवी, फिल्मों, आदि में पूर्वोत्तर के कलाकारों, पूर्वोत्तर की प्राकृतिक सुंदरता, वहाँ के स्थानीय लोगों की कहानियों आदि को और स्थान देने की जरूरत है, ताकि शेष भारत के नागरिक उस क्षेत्र के लोगों और वहां की संस्कृति से अपनापन एवं जुड़ाव महसूस कर सके। हालांकि वर्तमान में कुछ फिल्मों और वेब सीरिज जैसे पाताल लोक, भेड़िया, अखूनी (AXONE) आदि में पूर्वोत्तर को काफी खूबसूरत तरीके से दिखाया गया है। इसके अलावा कुछ यात्रा संस्मरण जैसे– वह भी कोई देश है महराज (अनिल यादव), पूर्वोत्तर भारतः लोक और समाज (संपादन– डॉ. आलोक), प्रवीण झा के पूर्वोत्तर संबंधी सोशल मीडिया (फेसबुक) पोस्ट की श्रृंखलाएं आदि पूर्वोत्तर को करीब से जानने का एक बेहतरीण स्त्रोत हो सकता है, जिसमें पूर्वोत्तर को केवल रूमानी तरीके से ही प्रस्तुत नहीं किया गया है, बल्कि वहाँ की समस्याएँ, पहाड़ी जीवन की चुनौतियाँ एवं विसंगतियों आदि पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है।

इस प्रकार न केवल सरकार को बल्कि शेष भारत के नागरिकों को भी अपने पूर्वोत्तर के इलाके और बाकी देश के बीच के सांस्कृतिक अंतर को भरने के लिए और ज़्यादा प्रयास करने की ज़रूरत है। नागरिक एवं सरकार के स्तर पर किए जाने वाले इस तरह की पहलों से न केवल उत्तर–पूर्व की सांस्कृतिक धरोहर संरक्षित होती है, बल्कि युवा पीढ़ी में आत्म–गौरव और सांस्कृतिक सम्मान की भावना भी मजबूत होती है। इससे हम पूर्वोत्तर में निवेश करके, भारत की सांस्कृतिक समृद्धि, आर्थिक मौके और पर्यावरण की देखभाल का खजाना खोल सकते हैं और पूर्वोत्तर के साथ–साथ पूरे भारत को समृद्धि और तरक्की के रास्ते पर आगे बढ़ा सकते हैं।

संदर्भ सूची

1. https://www.epw.in/journal/2024/25/special-articles/rhetoric-collective-action-north-east-india.html
2. https://www.jagran.com/spiritual/religion-chaitra-navratri-2025-ambubachi-fair-the-great-kumbh-of-the-east-know-the-interesting-secrets-related-to-kamakhya-temple-23912579.html
3. Chakraborty, Ayantika, Religious Migration of Ritualistic Mask Dances of North East, https://www.researchgate.net/publication/389370681_Religious_Migration_of_Ritualistic_Mask_Dances_of_North_East
4. Roy, Reena, Mekhala Chaddor- Beauty of Assam, https://www.researchgate.net/publication/363615802_Mekhala_Chaddor-_Beauty_of_Assam
5. Traditional Elegance of Naga Clothing: A Tapestry of Identity and Culture, https://traditionalnortheast.com/traditional-elegance-of-naga-clothing-a-tapestry-of-identity-and-culture/?srsltid=AfmBOoqPC_6uwx_IPMCFmHAueQXhEihYSMDDnhff3PRCPHd_EpUvl8qr9o
6. सिंह, आलोक (संपादक), पूर्वोत्तर भारतः लोक और समाज, सर्व भाषा ट्रस्ट, पृ.–67
7. Beyond axone: a look at the fermented foods of Northeast India, https://www.thehindu.com/life-and-style/food/fermented-foods-of-northeast/article32030496.ece
8. Dikshit, K.R., Agriculture in North-East India: Past and Present, https://www.researchgate.net/publication/299682221_Agriculture_in_North-East_India_Past_and_Present
9. https://www.pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=2130702&reg=3&lang=2
10. https://www.narendramodi.in/reader/11-years-of-development-and-prosperity-in-northeast-india
11. https://www.narendramodi.in/reader/hindi-from-margins-to-mainstream-promoting-northeast-indian-culture-on-the-global-stage
12. https://www.narendramodi.in/reader/from-margins-to-mainstream-promoting-northeast-indian-culture-on-the-global-stage
13. हाशिये से मुख्यधारा तकः दुनिया के सामने पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति,
    https://www.narendramodi.in/reader/hindi-from-margins-to-mainstream-promoting-northeast-indian-culture-on-the-global-stage

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता

– मधुलीना घोष
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी,
दूरसंचार विभाग

भारत विविधताओं का देश है, जहाँ भौगोलिक, भाषाई, धार्मिक और सांस्कृतिक बहुरूपता एक साथ विद्यमान है। इसी विविधता का एक अत्यंत समृद्ध और रंगीन स्वरूप हमें भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में देखने को मिलता है। पूर्वोत्तर भारत–जिसे 'सात बहनें और एक भाई' के नाम से भी जाना जाता है–भारत की सांस्कृतिक आत्मा का एक अनमोल भाग है। इसमें असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम शामिल हैं। यह क्षेत्र न केवल प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है, बल्कि यहाँ की जनजातीय परंपराएँ, लोक उत्सव, नृत्य–संगीत, हस्तशिल्प और जीवन–शैली इसे सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत विशिष्ट बनाती हैं। पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति में प्रकृति के प्रति सम्मान, सामूहिक जीवन, लोकविश्वास और पारंपरिक ज्ञान की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

आज़ादी से पहले भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में 200 से ज़्यादा जनजातियाँ निवास करती थीं। उत्तर पूर्वी भारत को मूलतः स्वदेशी लोगों की भूमि कहा जा सकता है। पूर्वोत्तर भारत दक्षिण–पूर्व एशिया और दक्षिण एशिया के बीच एक सांस्कृतिक पुल का कार्य करता है। यहाँ निवास करने वाली जनजातियों में प्रमुख जनजातियों में बोडो, मिसिंग, खासी, गारो, जयंतिया, नागा, मिज़ो, अपातानी, न्यिशी, मोनपा, लेपचा और भूटिया शामिल हैं। प्रत्येक जनजातियों की अपनी विशिष्ट भाषा, वेशभूषा और रीति–रिवाज हैं। मंगोलॉयड मूल की इन जनजातियों ने सदियों से अपनी पहचान को अक्षुण्ण रखा है। पूर्वोत्तर भारत हिमालय की तलहटी और घने वन क्षेत्रों में स्थित है। इसकी सीमाएँ चीन, म्यांमार, भूटान और बांग्लादेश से मिलती हैं। इस भौगोलिक स्थिति ने भी यहाँ की संस्कृति को विशिष्ट रूप से प्रभावित किया है। पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति का मूल आधार है प्रकृति के साथ सामंजस्य, सामूहिक जीवन–शैली, लोकविश्वास और परंपराएँ और सांस्कृतिक सहिष्णुता।

पूर्वोत्तर भारत की सामाजिक और पारिवारिक परंपराएँ

पूर्वोत्तर भारत की अधिकांश जनजातियों में सामूहिक जीवन को प्राथमिकता दी जाती है। यहाँ समाज व्यक्ति से ऊपर होता है। अरूणाचल प्रदेश, मिज़ोरम, मणिपुर और मेघालय की खासी और गारो जनजातियों में मातृसत्तात्मक समाज व्यवस्था देखने को मिलती है अर्थात् संपत्ति सबसे छोटी बेटी को मिलती है और वंश माँ के नाम से चलता है। ग्राम परिषद सामाजिक जीवन का प्रमुख आधार है, जो विवाद निपटान और निर्णय प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बुजुर्गों को विशेष सम्मान दिया जाता है और उनके निर्णय समाज में मान्य होते हैं।

पूर्वोत्तर भारत में धार्मिक विविधता भी अत्यंत व्यापक है। जहाँ असम में वैष्णव धर्म और शंकरदेव की भक्ति परंपरा प्रमुख है, वहीं नागालैंड और मिज़ोरम में ईसाई धर्म का प्रभाव है। अरुणाचल प्रदेश में डोनी–पोलो (सूर्य–चंद्र पूजा) जैसी प्रकृति–पूजक आस्थाएँ प्रचलित हैं। मणिपुर में हिंदू और स्थानीय सनामही धर्म का समन्वय देखने को मिलता है। यह धार्मिक बहुलता सांस्कृतिक सहअस्तित्व का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है। प्रत्येक राज्य की अपनी एक कहानी और पहचान है:

- **असमः** पूर्वोत्तर का प्रवेश कहलाने वाला असम अहोम वंश के गौरवशाली इतिहास और 'सत्रिया' जैसी शास्त्रीय परंपराओं का संवाहक है।
- **अरुणाचल प्रदेशः** अरुणाचल अर्थात 'उगते सूरज की भूमि'। यहाँ मोनपा, नयिशी और अपातानी जैसी जनजातियाँ रहती हैं। यहाँ बौद्ध धर्म और जीववाद का सुंदर मिश्रण दिखता है।
- **नागालैंडः** इसे 'उत्सवों की भूमि' कहा जाता है। यहाँ की नागा जनजातियाँ अपनी वीरता और सामुदायिक जीवन के लिए जानी जाती हैं।
- **मणिपुरः** मणिपुर अपनी शास्त्रीय नृत्य शैली और 'लाई हाराओबा' जैसे अनुष्ठानों के लिए विश्व प्रसिद्ध है।
- **मेघालयः** मेघालय का अर्थ है 'बादलों का घर'। यहाँ खासी, जयंतिया और गारो जनजातियाँ रहती हैं। यह दुनिया के गिने–चुने मातृसत्तात्मक समाजों में से एक है।
- **मिजोरमः** यहाँ की मिज़ो संस्कृति बांस और संगीत के इर्द–गिर्द घूमती है।
- **त्रिपुराः** यहाँ बंगाली और आदिवासी संस्कृतियों का मिश्रण है।

- **सिक्किमः** यहाँ तिब्बती बौद्ध धर्म का गहरा प्रभाव है और 'लोसार' जैसे उत्सव धूमधाम से मनाए जाते हैं।

पूर्वोत्तर भारत की पारंपरिक वेशभूषा और खान–पान

पूर्वोत्तर भारत की पारंपरिक वेशभूषा रंगीन और हस्तनिर्मित होती है। असम की महिलाओं का पारंपरिक पोशाक मेखला–चादर है। मणिपुर की स्त्रियाँ पारंपरिक तौर पर फनेक और इनाफी पहनती हैं। नागा जनजातियों की विशिष्ट शॉल उनकी परंपरा का द्योतक है। मिज़ोरम की महिलाओं का पारंपरिक पोशाक पुआन है तो वहीं सिक्किम की भूटिया और लेपचा पोशाक उनकी पारंपरिक वेश–भूषा है। यहाँ का खान–पान प्राकृतिक और स्थानीय संसाधनों पर आधारित है। चावल, मछली, बांस की कोपलें, जंगली साग–सब्जियाँ और फर्मेंटेड खाद्य पदार्थ प्रमुख हैं।

पूर्वोत्तर भारत के प्रमुख उत्सव

उत्सव किसी भी संस्कृति की आत्मा होती हैं। पूर्वोत्तर भारत के उत्सव कृषि, ऋतु परिवर्तन और सामुदायिक उल्लास से जुड़े होते हैं। उत्तर पूर्व भारत में मुख्यतः तीन तरह के त्यौहार मनाए जाते हैं– फसल उत्सव, नया साल और बौद्ध परंपरा से जुड़े त्यौहार।

असम – बिहू असम का एक प्रमुख सांस्कृतिक और कृषि त्यौहार है, जो साल में तीन बार मनाया जाता हैः रोंगाली बिहू, कोंगाली बिहू और भोगाली बिहू। रोंगाली बिहू या बोहाग बिहू वसंत ऋतु में असमिया नव वर्ष के आगमन पर अप्रैल के महीने में मनाया जाता है। यह असम का सबसे रंगीन उत्सव है जिसमें नई फसल बोई जाती है। कोंगाली बिहू या काति बिहू शरद ऋतु में मूलतः फसलों की सुरक्षा के लिए मनाया जाता है। अक्टूबर में मनाए जाने वाले इस त्यौहार के दौरान किसान तुलसी पूजा करते हैं और फसलों की सुरक्षा के लिए दीपक जलाते हैं। भोगली बिहू या माघ बिहू जनवरी के महीने में फसलों की कटाई के बाद सामुदायिक भोज के रूप में मनाया जाता है। इस उत्सव में मृदंग बजाए जाते हैं और बिहू नृत्य किया जाता है। बिहू नृत्य और गीत असमिया संस्कृति की पहचान हैं। यह उत्सव बिहू नृत्य और लोकगीतों से जुड़ा और असम की संस्कृति और एकता का प्रतीक है जोकि वहाँ के सभी समुदायों द्वारा मनाया जाता है।

अम्बुबाची मेला असम के गुवाहाटी में कामाख्या मंदिर में मनाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण वार्षिक हिंदू मेला है, जो जून के महीने में मानसून के दौरान होता है, और यह देवी कामाख्या के वार्षिक मासिक धर्म का प्रतीक है, जिसके कारण 3–4 दिनों के लिए मंदिर के कपाट बंद रहते हैं। इस दौरान तांत्रिक, अघोरी और नागा साधु सहित बड़ी संख्या में भक्त आते हैं। इस मेले का उद्देश्य स्त्री शक्ति और पृथ्वी की उर्वरता का सम्मान करना है, और मंदिर खुलने के बाद भक्तों को 'प्रसाद' के रूप में लाल कपड़ा और पवित्र जल दिया जाता है।

बिहू उत्सव (असम)

नागालैंड – हॉर्नबिल महोत्सव नागालैंड का सबसे प्रसिद्ध उत्सव है, जिसे "उत्सवों का उत्सव" कहा जाता है। यह उत्सव दिसंबर के पहले सप्ताह (1 से 10 दिसम्बर तक) में कोहिमा के पास किसामा गाँव में मनाया जाता है। इस उत्सव का नाम नागालैंड में पाए जाने वाले रंगीन हॉर्नबिल पक्षी के नाम पर रखा गया है। इसमें विभिन्न नागा जनजातियाँ अपने पारंपरिक नृत्य, संगीत, भोजन और हस्तशिल्प का प्रदर्शन करती हैं। दिसंबर के पहले सप्ताह में आयोजित होने वाला यह त्यौहार नागालैंड की सभी जनजातियों को एक मंच पर लाता है, जहाँ उनकी पारंपरिक कला, नृत्य और खान–पान का प्रदर्शन होता है। इसका उद्देश्य अंतर जनजातीय एकता और नागा संस्कृति का संरक्षण करना है। यह नागालैंड के स्थापना दिवस 1 दिसम्बर से भी जुड़ा है।

हॉर्नबिल महोत्सव (नागालैंड)

मणिपुर –

याओशांग (निंगोल चाकोउबा) मणिपुर का प्रमुख त्योहार है जो वसंत ऋतु, मार्च या अप्रैल में मनाया जाता है। यह एक पांच दिवसीय त्यौहार है जो होली जैसा मनाया जाता है। यह रंगों, मस्ती और पारिवारिक मिलन का एक महत्वपूर्ण मेइतेई त्योहार है जो विशेष रूप से विवाहित बेटियों के सम्मान में मनाया जाता है।

दुलर्भ संगाई हिरण के नाम पर रखा गया संगाई महोत्सव नवंबर के महीने में आयोजित एक प्रमुख वार्षिक कार्यक्रम है। यह उत्सव राज्य में एकता और पर्यटन को बढ़ावा देता है।

ISSN No. : 0970-9398

अप्रैल में मनाया जाने वाला चेइराओबा उत्सव मणिपुर के मैतेई लोगों का नव वर्ष है। यह त्यौहार समृद्ध वर्ष की कामना के लिए अनुष्ठानों, दावतों और पहाड़ियों पर चढ़ाई के साथ मनाया जाता है।

लाई हराओबा मणिपुर का एक प्राचीन और महत्वपूर्ण पारंपरिक धार्मिक–सांस्कृतिक उत्सव है, जिसमें देवी–देवताओं की प्रस्तुति और पारंपरिक नृत्य किए जाते हैं। लाई हराओबा का अर्थ है 'देवताओं का उत्सव'। यह पूर्व वैष्णव काल से मनाया जाता रहा है और उमंग लाई अर्थात वन देवताओं को समर्पित है। इस अवसर पर नृत्य, संगीत और सृष्टि की पौराणिक कथाओं का मंचन किया जाता है। मणिपुरी शास्त्रीय नृत्य मणिपुर की संस्कृति और पहचान का अभिन्न अंग है।

याओशांग उत्सव (मणिपुर)

मेघालय –

वांगला महोत्सव गारो जनजाति का प्रमुख फसल उत्सव है। इसे 'सौ ढोलों का त्यौहार' भी कहते हैं। यह प्रतिवर्ष नवम्बर महीने के द्वितीय सप्ताह में मनाया जाता है। उत्सव से संबंधित रस्में उनके मुखिया जिन्हें वे नोकमा कहते हैं, के द्वारा की जाती हैं। यह गारो जनजाति द्वारा फसल कटाई के बाद सूर्य देवता (मिसी सल्जोंग) के सम्मान में मनाया जाता है। इसमें पारंपरिक रंगीन पोशाकें पहनकर संगीत, नृत्य (विशेष रूप से 'नाग्री' नृत्य) पेश किया जाता है और स्वादिष्ट स्थानीय भोजन परोसा जाता है।

नोंगक्रेम नृत्य उत्सव मेघालय की खासी जनजाति द्वारा नवम्बर के महीने में मनाया जाने वाला एक धार्मिक और सांस्कृतिक त्योहार है। यह पाँच दिनों तक मनाया जाता है। शरद ऋतु में आयोजित यह त्यौहार अच्छी फसल के लिए देवी को धन्यवाद देने और शांति व समृद्धि की प्रार्थना करने के लिए होता है। इसमें पारंपरिक नृत्य और 'पोम्बलांग' नामक बकरे की बलि जैसी रस्में शामिल होती हैं। इसमें पारंपरिक वेशभूषा में युवा पुरुष और अविवाहित लड़कियां ड्रम और पाइप की धुन पर नृत्य करते हैं। यह स्मित गाँव में आयोजित किया जाता है।

नोंगक्रेम नृत्य उत्सव (मेघालय)

मिज़ोरम –

मिज़ोरम के त्यौहार कृषि और सामुदायिक मूल्यों से जुडे हैं। यह मिज़ो संस्कृति का जीवंत उदाहरण है। चापचर कुट मिज़ोरम का सबसे बड़ा और प्रसिद्ध त्योहार है, जो खेती के लिए कठिन जंगल की कटाई (झूम) के बाद मार्च में मनाया जाता है। इस त्योहार में गीतों, नृत्यों और दावतों के साथ वसंत का स्वागत किया जाता है। यह उत्सव कृषि से जुड़ा है।

मिम कुट मक्के की फसल का उत्सव है, जो अगस्त और सितंबर के आसपास मनाया जाता है। इस उत्सव में पूर्वजों का सम्मान किया जाता है और इसमें दावत और सांस्कृतिक प्रदर्शन शामिल होते हैं। इस उत्सव में चेराव नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। चेराव मिज़ोरम का प्रसिद्ध पारंपरिक नृत्य है जो बांस के सहारे प्रस्तुत किया जाता है। इसमें कौशल और समन्वय की आवश्यकता होती है।

पॉल कुट को "पुआल महोत्सव" के नाम से भी जाना जाता है। दिसंबर में मनाया जाने वाला यह त्यौहार चावल की कटाई का प्रतीक है। इसमें संगीत, नृत्य और अनुष्ठानों के साथ अच्छी पैदावार का जश्न मनाया जाता है। आधुनिक काल में मिज़ोरम में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए एंथुरियम महोत्सव मनाया जाता है। इसमें स्थानीय शिल्प, व्यंजन और संस्कृति का प्रदर्शन किया जाता है।

मिम कुट उत्सव (मिज़ोरम)

त्रिपुरा –

गरिया पूजा त्रिपुरा का एक प्रमुख और प्राचीन आदिवासी त्यौहार है जो बाबा गरिया को समर्पित है। बांस के खंभे को

ISSN No. : 0970-9398

बाबा गरिया का प्रतीक मानकर पूजा जाता है। अच्छी फसल, स्वास्थ्य और समृद्धि की कामना करते हुए यह पूजा की जाती है। हर साल अप्रैल के मध्य में 7 दिनों तक इसे मनाया जाता है। पारंपरिक नृत्य (गरिया नृत्य), गीत और मुर्गे की बलि जैसे अनुष्ठान होते हैं।

त्रिपुरा का खारची पूजा सदियों पुराना हिंदू त्यौहार है। इसमें पृथ्वी देवी का पूजन होता है। 'खार्ची' शब्द त्रिपुरा की स्थानीय भाषा कोकबोरोक से आया है जिसका मतलब है 'शुभ समय'। यह पूजा त्रिपुरा के शाही परिवार द्वारा की जाती है। अगरतला के पास चतुर्दश देवता मंदिर में चौदह देवताओं की पूजा की जाती है। वर्ष में एक बार जुलाई के महीने में मंदिर से इन देवताओं को निकालकर सैदरा नदी में स्नान कराया जाता है। इस अवसर पर पशु बलि जैसे अनुष्ठान किए जाते हैं।

गरिया पूजा (त्रिपुरा)

सिक्किम –

सिक्किम में तिब्बती नववर्ष (लोसूंग या नामसूंग) उत्सव मनाया जाता है। यह दिसम्बर के महीने में मनाया जाता है। भूटिया और लेप्चा जनजाति के लोग इसे मनाते हैं। बौद्ध मठों जैसे रूमटेक और फोडोंग में जानवरों के मुखौटे और वस्त्र पहनकर नकाबपोश चाम नृत्य प्रस्तुत करते हैं। पारंपरिक तीरंदाजी प्रतियोगिताएं, ग्रीस्ड पोल क्लाइम्बिंग जैसे अन्य स्थानीय खेल खेले जाते हैं। ब्लैक हैट डांस (झानक नृत्य) भी प्रस्तुत किया जाता है। लोग छांग (स्थानीय मादक पेय) पीकर झूमते हैं।

सागा दावा सिक्किम का सबसे महत्वपूर्ण बौद्ध त्यौहार है, जिसे "त्रिपला आशीर्वाद उत्सव" भी कहा जाता है। यह तिब्बती चंद्र कैलेंडर के चौथे महीने (मई या जून) की पूर्णिमा को मनाया जाता है। बुद्ध के जन्म, ज्ञान प्राप्ति और निर्वाण का उत्सव मनाया जाता है। इस त्यौहार के दौरान, मठों में मंत्रों का जाप करते हुए प्रार्थना की जाती है और घी के दीये जलाए जाते हैं। गंगटोक जैसे शहरों में बौद्ध भिक्षु और भक्त उनके पवित्र धर्म ग्रंथों और भगवान बुद्ध की तस्वीर लेकर रंगारंग जुलूस निकालते हैं।

सिक्किमी नववर्ष

अरुणाचल प्रदेश –

अरुणाचल प्रदेश में कई जनजातियाँ अपने अनूठे त्यौहार मनाती हैं। ये उत्सव कृषि, समृद्धि और सामुदायिक सद्भाव पर केंद्रित होते हैं, जिनमें प्रार्थनाएँ, नृत्य, लोकगीत और पारंपरिक अनुष्ठान शामिल होते हैं।

ज़िरो संगीत महोत्सव अरुणाचल प्रदेश की सुरम्य ज़िरो घाटी में आयोजित होने वाला एक जीवंत, चार दिवसीय वार्षिक आउटडोर कार्यक्रम है। इसमें अपातानी जनजाति की सांस्कृतिक से जुड़े संगीत पेश किए जाते हैं। धुंध भरी पहाड़ियों और धान के खेतों के बीच पर्यटक यहाँ आदिवासी भोजन, हस्तशिल्प के साथ–साथ गांव की सैर जैसी गतिविधियों का भी आनंद लेते हैं।

मोपिन अरुणाचल प्रदेश की गालो जनजाति द्वारा मनाया जाने वाला एक प्रमुख कृषि और सांस्कृतिक त्यौहार है। यह अप्रैल में मनाया जाता है। यह गालो नव वर्ष का प्रतीक है। इसमें प्रजनन क्षमता, समृद्धि और बुरी आत्माओं से बचाव के लिए प्रार्थना की जाती है। इस त्यौहार में चेहरे पर चावल का पाउडर लगाकर, सफेद पारंपरिक पोशाक पहनकर पोपीर नृत्य और लोकगीत प्रस्तुत किया जाता है। चावल की बीयर (अपोंग) का आनंद लिया जाता है। देवी मोपिन से प्रार्थना की जाती है और मिथुन नामक जानवर का बलिदान दिया जाता है।

मोपिन महोत्सव (अरुणाचल प्रदेश)

ISSN No. : 0970-9398

खान–पान की विविधता

पूर्वोत्तर भारतीय खाना विविध प्रकार का होता है जो चावल, ताज़े फल और सब्ज़ियों के साथ–साथ पारंपरिक फर्मेंटेड चीज़ों से बनता है। यहाँ का भोजन स्वाद और स्वास्थ्य का मिश्रण है। बांस के अंकुर, सोयाबीन और स्थानीय जड़ी–बूटियों का प्रयोग यहाँ की विशेषता है। असम का प्रसिद्ध भोजन खार (केले के छिलके से बना), चटपटा मसूर टेंगा (मछली करी) और पीठा है। मेघालय का मुख्य भोजन सूअर का मांस और चावल से बना पकवान जदोह है। नागालैंड के लोग स्मोक्ड सुआर और बांस शूट खाना पसंद करते हैं। मणिपुर में मछली को फर्मेंट करके 'इरोंबा' नामक एक व्यंजन बनाया जाता है। सिक्किम के मोमो से तो हम सभी परिचित हैं। अरूणाचल प्रदेश के लोग नुडल सूप और थुकपा खाते हैं। मिजोरम में हरी पत्तेदार सब्जियों को उबालकर और सुअर की फर्मेंटेड चर्बी को मिलाकर बाई नामक एक स्टू तैयार किया जाता है। इस क्षेत्र में मिर्ची, बांस जैसी चीज़ों के साथ–साथ सुअर, मछली और गाय के मांस को सूखाकर अचार बनाया जाता है। इन सभी पकवानों की खासियत है उनमें इस्तेमाल होने वाली स्थानीय जड़ी–बूटियाँ, अत्यधिक तीखी स्थानीय मिर्च (जिसे स्थानीय भाषा में भूत जोलोकिया कहा जाता है) और फर्मेंटेड सोयाबीन या मछली का तेज़ स्वाद।

पूर्वोत्तर भारत की लोककला

पूर्वोत्तर की लोककला केवल सजावट के लिए नहीं, बल्कि उनके जीवन का अभिन्न अंग है। यहाँ के लोकनृत्य प्रकृति, वीरता और प्रेम की अभिव्यक्ति हैं। मणिपुरी नृत्य को शास्त्रीय नृत्य का दर्जा प्राप्त है। असम का सत्रिया नृत्य भक्ति परंपरा से जुड़ा है। सत्रिया नृत्य को भी शास्त्रीय नृत्य की मान्यता प्राप्त है। बिहू नृत्य असम का लोक नृत्य है जो उत्साह और उल्लास का प्रतीक है। नागा युद्ध नृत्य वीरता का प्रदर्शन करता है। पूर्वोत्तर भारत के लोकसंगीत में ढोल, पेपा, बाँसुरी और पारंपरिक वाद्य यंत्रों का प्रयोग होता है। पूर्वोत्तर का संगीत प्रकृति की आवाजों से प्रेरित है। यहाँ संगीत और नृत्यः आत्मा की अभिव्यक्ति है। पूर्वोत्तर के कुछ लोकनृत्य–

- **चेराव नृत्य (मिजोरम):** इसे 'बांस नृत्य' भी कहते हैं, जिसमें जमीन पर रखे बांसों के बीच नर्तक अत्यंत कुशलता से थिरकते हैं।
- **मणिपुरी रासलीला:** यह भगवान कृष्ण और राधा के प्रेम पर आधारित एक अत्यंत सौम्य और शास्त्रीय नृत्य है।
- **होजागिरी (त्रिपुरा):** इसमें नर्तक अपने शरीर का संतुलन बनाते हुए सिर पर घड़ा रखकर नृत्य करते हैं।
- **तवांग का शेर और याक नृत्यः** अरुणाचल के बौद्ध क्षेत्रों में प्रचलित ये नृत्य बुराई पर अच्छाई की जीत का प्रतीक हैं।

हस्तशिल्प और बुनाई कला

पूर्वोत्तर भारत का बांस और बेंत शिल्प विश्व प्रसिद्ध है। यहाँ बांस को 'हरा सोना' कहा जाता है। मिजोरम और त्रिपुरा में बांस से बनी टोकरियाँ, फर्नीचर, चटाई, मछली पकड़ने के उपकरण और सजावटी वस्तुएँ, यहाँ तक कि संगीत वाद्ययंत्र भी बनाए जाते हैं। यहाँ की महिलाएँ कुशल बुनकर होती हैं। असम का 'मूगा रेशम' अपनी सुनहरी चमक के लिए विश्व प्रसिद्ध है। नागा शॉल के पैटर्न व्यक्ति के सामाजिक पद और उसकी जनजाति की पहचान बताते हैं। यहाँ के हाथ से बुने वस्त्र–जैसे नागा शॉल, मिज़ो पुआन और असमिया गमछा विश्व प्रसिद्ध हैं। असम की लोक चित्रकला और मुखौटा कला (मुखा) इसकी विरासत का हिस्सा है। असम के माजुली द्वीप पर 'मुखौटा निर्माण' की प्राचीन परंपरा है, जिसका उपयोग 'भाओना' (धार्मिक नाटक) में किया जाता है। जनजातीय चित्रकला में प्रकृति, पशु–पक्षी और लोककथाएँ प्रमुख विषय होते हैं।

पूर्वोत्तर भारत की बाँस की बनी वस्तुएं

निष्कर्ष

पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति हमें प्रकृति के साथ संतुलन, विविधता में एकता, सामूहिक जीवन का महत्व, सांस्कृतिक सहिष्णुता सिखाती है। भारत के आठ पूर्वोत्तर राज्यों असम, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मणिपुर, नागालैंड, मिजोरम, त्रिपुरा और सिक्किम को "अष्टलक्ष्मी" कहा जाता है क्योंकि वे देवी लक्ष्मी के आठ स्वरूपों (आदि लक्ष्मी, धन लक्ष्मी, धान्य लक्ष्मी, गज लक्ष्मी, संतान लक्ष्मी, वीर लक्ष्मी, विद्या लक्ष्मी और विजय लक्ष्मी) की तरह गुणों से सम्पन्न हैं। ये हमारी सांस्कृतिक और आर्थिक समृद्धि का प्रतीक हैं। भारत सरकार ने 6 से 8 दिसंबर, 2024 को नई दिल्ली के भारत मंडपम में 'अष्टलक्ष्मी महोत्सव' आयोजित किया था। इस महोत्सव का लक्ष्य पूर्वोत्तर भारत का विकास था। इसका उद्देश्य मुख्य रूप से भारत के पूर्वोत्तर राज्यों (अष्टलक्ष्मी) की समृद्ध विरासत को प्रदर्शित कर देश की बाकि जनता को उनकी संस्कृति से परिचित कराना था।

पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विविधता उसकी सबसे बड़ी पहचान और शक्ति है। यहाँ की परंपराएँ, उत्सव और लोककला न केवल अतीत की धरोहर हैं, बल्कि वर्तमान और

भविष्य की दिशा भी तय करती हैं। इस क्षेत्र की संस्कृति हमें यह संदेश देती है कि विविधता कोई बाधा नहीं, बल्कि सौंदर्य है। 'अनेकता में एकता' का सही अर्थ हमें इस क्षेत्र की गलियों और गाँवों में देखने को मिलता है। पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति केवल परंपराओं का प्रदर्शन नहीं है, बल्कि यह प्रकृति और मनुष्य के बीच सामंजस्यपूर्ण सह–अस्तित्व का प्रमाण है। यहाँ की रंगीन वेशभूषा, ढोल की थाप और पहाड़ों की शांति मिलकर एक ऐसा अनुभव प्रदान करती हैं जो दुनिया में कहीं और नहीं मिलता। यदि इन परंपराओं का संरक्षण और सम्मान किया जाए, तो पूर्वोत्तर भारत न केवल भारत की सांस्कृतिक पहचान को सुदृढ़ करेगा, बल्कि विश्व संस्कृति में भी अपनी विशिष्ट छाप छोड़ेगा।

एशिया का सबसे स्वच्छ गांव मेघालय में स्थित मावलिननॉन्ग है। दुनिया का एकमात्र तैरता हुआ राष्ट्रीय उद्यान केइबुल लामजाओ राष्ट्रीय उद्यान मणिपुर राज्य की लोकटक झील पर स्थित है। एशिया का पहला ग्रीन गाँव नागालैंड का खोनोमा गाँव है। विश्व का सबसे बड़ा नदी द्वीप असम का माजुली है तो वहीं विश्व का सबसे छोटा बसा हुआ नदी द्वीप असम का उमानंदा द्वीप है। एशिया का सबसे बड़ा महिला संचालित बाजार मणिपुर की राजधानी इंफाल में स्थित इमा मार्केट है, जिसे मदर्स मार्केट के नाम से भी जाना जाता है। यह एक अनूठा बाजार है जिसका प्रबंधन सदियों से हजारों "इमाओं" (माताओं) द्वारा किया जा रहा है। यहां ताजी फल सब्जियों और मछली से लेकर पारंपरिक वस्त्र और हस्तशिल्प तक सब कुछ बेचा जाता है। यह बाजार इस क्षेत्र में महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण का प्रतीक है। मिजोरम की साक्षरता दर 98.2% है, जिससे यह मई 2025 में घोषित होने वाला भारत का पहला पूर्णतः साक्षर राज्य बन गया है।

पूर्वोत्तर भारत की मिट्टी ने हमें रानी गाइदिन्ल्यू, मनीराम दीवान और कनकलता बरुआ जैसे कई स्वतंत्रता सेनानी दिए। इस क्षेत्र से संगीत की दुनिया को जुबीन गर्ग जैसे गायक, डॉ भूपेन हजारिका जैसे गीतकार, संगीतकार, गायक, कवि और फिल्म निर्माता, पापोन जैसे संगीतकार और गायक, और नाइस मेरुनो जैसे शास्त्रीय पियानो वादक मिले हैं। खेल जगत के चमकते सितारों में मणिपुर की मुक्केबाज मैरी कॉम का नाम अग्रणी है। वे छह बार की वर्ल्ड एमेच्योर बॉक्सिंग चैंपियन हैं और पहली सात वर्ल्ड चैंपियनशिप में से हर एक में मेडल जीतने वाली एकमात्र महिला बॉक्सर हैं। भारतीय राष्ट्रीय फुटबॉल टीम के पूर्व कप्तान बाइचुंग भूटिया से तो हम सभी परिचित हैं। पूर्वोत्तर से ऐसे और भी कई दिग्गज हैं जिन्होंने हमारे देश को गौरवान्वित किया है। पूर्वोत्तर भारत हमारी धरोहर है जो विश्व मंच पर हमारे देश का नाम रोशन करता है।

ISSN No. : 0970-9398

राष्ट्रीय एकता में राजभाषा हिंदी और पूर्वोत्तर की भाषाओं का समन्वय

– डॉ. वरुण भारद्वाज
उप प्रबंधक (मानव संसाधन – राजभाषा)
केंद्रीय भंडारण निगम, निगमित कार्यालय, नई दिल्ली

"भाषा भेद न बाँटती, भाव जोड़ता देश,
हिंदी सेतु बन जाए, पूर्वोत्तर रहे विशेष।"

भारत की भाषाई संरचना विश्व में अद्वितीय है। यहाँ भाषा केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता, सामाजिक समरसता और ऐतिहासिक निरंतरता का माध्यम भी है। भारतीय संविधान ने इस बहुभाषिक यथार्थ को स्वीकार करते हुए भाषाओं के संरक्षण और विकास को लोकतांत्रिक मूल्यों से जोड़ा है। इसी संदर्भ में भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र भाषाई, सांस्कृतिक और सामाजिक विविधता का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ और भारत की राजभाषा हिंदी–इन दोनों के मध्य समन्वय का प्रश्न समकालीन भारत में भाषाई नीति, राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समावेशन के विमर्श का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। भारत की राष्ट्रीय चेतना का मूल उसकी भाषाई विविधता में निहित है। इसी व्यापक भाषाई परिदृश्य में भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र विशेष महत्व रखता है।

पूर्वोत्तर भारत ऐतिहासिक, भौगोलिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भारत के अन्य क्षेत्रों से विशिष्ट रहा है। लंबे समय तक भौगोलिक दूरी और ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण यह क्षेत्र राष्ट्रीय मुख्यधारा से अपेक्षाकृत अलग अनुभव करता रहा। ऐसे में भाषा संवाद का वह सेतु बन सकती है, जो दूरी को कम करे और राष्ट्रीय एकता को बढ़ाएं। पूर्वोत्तर भारत अपनी भौगोलिक स्थिति, जातीय संरचना और सांस्कृतिक विविधता के कारण सदैव एक विशिष्ट पहचान रखता आया है। यहाँ भाषाएँ न केवल संप्रेषण का माध्यम हैं, बल्कि सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक निरंतरता की आधारशिला भी हैं। ऐसे में पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं और भारत की राजभाषा हिंदी के मध्य समन्वय का प्रश्न अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है। यह प्रश्न केवल भाषाई नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता, प्रशासनिक दक्षता और सांस्कृतिक समावेशन से भी जुड़ा हुआ है।

राजभाषा हिंदी : संवैधानिक परिप्रेक्ष्य

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के अंतर्गत हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। संविधान निर्माताओं की मंशा स्पष्ट थी कि हिंदी को किसी भी क्षेत्रीय भाषा के विकल्प या प्रतिस्थापक के रूप में नहीं, बल्कि प्रशासनिक एवं राष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में विकसित किया जाए। साथ ही संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन की भी समान रूप से व्यवस्था की गई। इस संवैधानिक संतुलन का उद्देश्य भाषाई विविधता को सुरक्षित रखते हुए राष्ट्रीय संवाद को सुदृढ़ करना है। हिंदी की भूमिका इसी संतुलनकारी दृष्टि से समझी जानी चाहिए, विशेषकर पूर्वोत्तर जैसे बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक क्षेत्र में।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी की भूमिका

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी का प्रसार किसी एकांगी प्रक्रिया का परिणाम नहीं है। यह सामाजिक संपर्क, शैक्षणिक आवश्यकताओं, प्रशासनिक संवाद और आर्थिक गतिविधियों के माध्यम से क्रमिक रूप से विकसित हुआ है। विभिन्न जनजातीय समुदायों और राज्यों के मध्य परस्पर संवाद के लिए हिंदी एक व्यावहारिक संपर्क भाषा के रूप में उभरी है। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षा, प्रतियोगी परीक्षाओं, केंद्रीय सेवाओं और राष्ट्रीय संस्थानों में हिंदी की उपयोगिता ने इसकी स्वीकार्यता को और बढ़ाया है। यह उल्लेखनीय है कि पूर्वोत्तर में हिंदी की स्वीकार्यता तभी संभव हुई, जब उसे स्थानीय भाषाओं के प्रतिद्वंद्वी के रूप में नहीं, बल्कि सहायक और पूरक भाषा के रूप में प्रस्तुत किया गया। यही दृष्टिकोण राष्ट्रीय एकता में भाषाई समन्वय की आधारशिला है।

शिक्षा, संस्कृति एवं साहित्य के माध्यम से भाषाई समन्वय

शिक्षा किसी भी समाज में भाषाई नीति का सबसे प्रभावी माध्यम होती है। शिक्षा के क्षेत्र में त्रिभाषा सूत्र ने समन्वय की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित बनाया है। स्कूलों में क्षेत्रीय भाषा के साथ हिंदी का अध्ययन युवाओं को देश के अन्य हिस्सों में रोजगार और उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करता है। प्रशासनिक स्तर पर भी, राजभाषा हिंदी ने जटिल जनजातीय बोलियों के बीच एक साझा मंच उपलब्ध कराया है। अरुणाचल प्रदेश इसका सबसे जीवंत उदाहरण है, जहाँ हिंदी प्रशासनिक और सामाजिक विनिमय की मुख्य भाषा बन गई है। यहाँ की 'अरुणाचली हिंदी' में स्थानीय मुहावरों का समावेश यह दर्शाता है कि हिंदी ने यहाँ की मिट्टी को आत्मसात कर लिया है। यह समन्वय केवल सरकारी दस्तावेजों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह बाज़ारों, खेल के मैदानों और स्थानीय उत्सवों में जीवंत रूप से दिखाई देता है। केंद्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों, विश्वविद्यालयों और अन्य उच्च शिक्षण संस्थानों में हिंदी शिक्षा की सुदृढ़ व्यवस्था के साथ–साथ स्थानीय भाषाओं के अध्ययन और अनुसंधान पर भी ध्यान दिया जा रहा है। यह संतुलित दृष्टिकोण भाषाई समन्वय को व्यवहारिक आधार प्रदान करता है।

भाषाई समन्वय का एक महत्वपूर्ण पक्ष सांस्कृतिक और साहित्यिक आदान–प्रदान है। हिंदी साहित्य में पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति, इतिहास और सामाजिक यथार्थ पर आधारित रचनाओं की संख्या निरंतर बढ़ रही है। इसके साथ ही पूर्वोत्तर के लोकसाहित्य, आधुनिक साहित्य और मौखिक परंपराओं का हिंदी में अनुवाद उस क्षेत्र को राष्ट्रीय साहित्यिक विमर्श में स्थान दिला रहा है। यह साहित्यिक संवाद न केवल पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान को व्यापक पाठक वर्ग तक पहुँचाता है, बल्कि हिंदी साहित्य को भी नई विषयवस्तु और संवेदनशीलता प्रदान करता है। इस प्रकार हिंदी और क्षेत्रीय भाषाएँ परस्पर एक–दूसरे को समृद्ध करती हैं।

ऐतिहासिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य के माध्यम से समन्वय

ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो पूर्वोत्तर के राज्यों, विशेषकर असम और मणिपुर का शेष भारत के साथ सांस्कृतिक संबंध सदियों पुराना है। वैष्णव संत श्रीमंत शंकरदेव के काल में 'ब्रजावली' भाषा के प्रयोग ने हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के बीच प्रारंभिक सेतु का कार्य किया था। आधुनिक काल में, जब स्वाधीनता संग्राम की लहर इस क्षेत्र तक पहुँची, तब हिंदी ने राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। आज की स्थिति यह है कि जहाँ असमिया, मणिपुरी और नेपाली जैसी भाषाएँ अपनी समृद्ध साहित्यिक परंपरा के साथ खड़ी हैं, वहीं दूसरी ओर अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड जैसे राज्यों में, जहाँ दर्जनों जनजातीय बोलियाँ प्रचलित हैं, हिंदी एक 'लिंगुआ फ्रैंका' (Lingua Franca) बनकर उभरी है। यहाँ हिंदी किसी राजनैतिक दबाव के कारण नहीं, बल्कि सामाजिक आवश्यकता के कारण फल–फूल रही है।

सांस्कृतिक आदान–प्रदान और सिनेमा के माध्यम से समन्वय

सांस्कृतिक समन्वय की इस यात्रा में संचार माध्यमों और कला जगत का योगदान अतुलनीय रहा है। हिंदी सिनेमा और संगीत ने भौगोलिक दूरियों को पाटते हुए पूर्वोत्तर के घर–घर में अपनी जगह बनाई है। यह रोचक है कि जहाँ शेष भारत हिंदी के शुद्ध स्वरूप को लेकर बहस करता है, वहीं पूर्वोत्तर के लोग इसे अपनी स्थानीय शब्दावली और लहजे में ढालकर एक नया स्वरूप प्रदान करते हैं। दूसरी ओर, पूर्वोत्तर के लोकगीतों की मिठास और वहाँ के शास्त्रीय नृत्य जैसे 'सत्रिया' और 'मणिपुरी' का परिचय जब हिंदी माध्यम से शेष भारत को मिलता है, तो भाषाई समन्वय और अधिक प्रगाढ़ हो जाता है। पूर्वोत्तर से संबंध रखने वाले पपोन और जुबीन गर्ग जैसे नामचीन कलाकारों ने न केवल हिंदी गीतों को अपनी आवाज दी, बल्कि अपनी क्षेत्रीय जड़ों को भी राष्ट्रीय पहचान दिलाने का कार्य किया।

पूर्वोत्तर भारत की भाषाई संरचना

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र, जिसे भौगोलिक और सांस्कृतिक रूप से 'अष्टलक्ष्मी' के रूप में पूजा जाता है, भाषाई दृष्टि से विश्व के सबसे समृद्ध और जटिल क्षेत्रों में से एक है। यहाँ की पहाड़ियों, घाटियों और घने जंगलों के बीच सैकड़ों ऐसी बोलियाँ जीवित हैं, जो मानव सभ्यता के प्राचीनतम स्वर संजोए हुए हैं। इस विशाल भाषाई कैनवास पर राजभाषा हिंदी का आगमन किसी बाहरी भाषा के थोपे जाने के रूप में नहीं, बल्कि एक सहज संपर्क सूत्र के रूप में हुआ है। जब हम पूर्वोत्तर की क्षेत्रीय भाषाओं और हिंदी के मध्य समन्वय की बात करते हैं, तो यह केवल दो व्याकरणों का मिलन नहीं, बल्कि दो भिन्न जीवन–पद्धतियों के बीच सेतु निर्माण की प्रक्रिया है। यह समन्वय इस बात का प्रमाण है कि भाषाएँ दीवारों का काम नहीं करतीं, बल्कि वे झरोखे खोलती हैं जिनसे हम एक–दूसरे की संस्कृति को निहार सकते हैं।

पूर्वोत्तर भारत में असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम जैसे आठ राज्य सम्मिलित हैं। यह क्षेत्र भाषाई दृष्टि से अत्यंत बहुलतावादी है, जहाँ सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हैं। इन भाषाओं का संबंध मुख्यतः इंडो–आर्यन, तिब्बतो–बर्मी और ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवारों से है। असमिया, बोड़ो, मणिपुरी (मैतेई), खासी, गारो, मिज़ो, कोकबोरोक, लेपचा, भूटिया और नेपाली जैसी भाषाएँ इस क्षेत्र की भाषाई पहचान को आकार देती हैं। इन भाषाओं की विशेषता यह है कि वे केवल भाषिक संरचनाएँ नहीं, बल्कि अपने–अपने समाज की सांस्कृतिक चेतना, परंपराओं, लोककथाओं, गीतों और अनुष्ठानों की वाहक हैं। अनेक भाषाएँ अल्पसंख्यक भाषाओं की श्रेणी में आती हैं, जिनके संरक्षण का प्रश्न आज विशेष रूप से प्रासंगिक हो गया है। इस पृष्ठभूमि में किसी भी राष्ट्रीय भाषा नीति का संवेदनशील और समावेशी होना अनिवार्य है।

"हिंदी की धारा जब पहुँची ब्रह्मपुत्र के तट
लहजे बदले, भाव न बदले–भारत रहा अखंड।"

यहाँ हम पूर्वोत्तर की प्रमुख भाषाएँ एवं उनके संक्षिप्त इतिहास तथा विकास के बारे में नजर डालते हैं –

1. **असमः** असमिया और बोडो असमिया भाषा का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। इसकी उत्पत्ति 'मागधी प्राकृत' से मानी जाती है और यह हिंद–आर्य भाषा परिवार का हिस्सा है। इसके विकास के चरणों को तीन भागों में बांटा जा सकता हैः प्राचीन (7वीं से 12वीं सदी), मध्यकालीन (13वीं से 18वीं सदी) और आधुनिक असमिया। मध्यकाल में महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित 'अंकिया नाट' और अहोम राजाओं द्वारा लिखे गए 'बुरंजी' (इतिहास) ने इस भाषा को साहित्यिक रूप से समृद्ध किया। वहीं, बोडो भाषा तिब्बती–बर्मी परिवार की है। 20वीं सदी के मध्य में बोडो साहित्य सभा के प्रयासों से इसने अपनी लिपि और पहचान को सुदृढ़ किया। जो हिंदी के साथ इसके समन्वय का एक प्रत्यक्ष उदाहरण है।

2. **अरुणाचल प्रदेशः** न्यीशी और आदि अरुणाचल प्रदेश भाषाई विविधता का गढ़ है। यहाँ की न्यीशी भाषा तिब्बती–बर्मी मूल की है। ऐतिहासिक रूप से यह एक मौखिक भाषा रही है, जिसकी समृद्ध लोक–कथाओं और गीतों की परंपरा पीढ़ियों से चली आ रही है। विकास के क्रम में अब इसे रोमन और कुछ स्तरों पर देवनागरी में लिखने का प्रयास किया जा रहा है। आदि भाषा का भी इतिहास इसी तरह मौखिक परंपराओं से

जुड़ा है। रोचक तथ्य यह है कि इन दर्जनों जनजातीय भाषाओं की विविधता के कारण ही यहाँ हिंदी एक 'संपर्क भाषा' के रूप में स्वतः विकसित हुई, जिसे 'अरुणाचली हिंदी' के रूप में एक नई पहचान मिली है।

3. **मणिपुरः** मणिपुरी (मेइतेइ) मणिपुरी भाषा का इतिहास 2000 वर्षों से भी अधिक पुराना है। इसकी अपनी विशिष्ट लिपि 'मेइतेइ मायेक' है। यह तिब्बती–बर्मी परिवार की भाषा है, लेकिन इस पर संस्कृत और वैष्णव धर्म का गहरा प्रभाव रहा है। विकास के क्रम में, एक समय इस पर बंगाली लिपि का प्रभाव रहा, लेकिन हाल के वर्षों में अपनी मूल लिपि के पुनरुद्धार के लिए व्यापक आंदोलन हुए हैं। यह भाषा पूर्वोत्तर की उन चुनिंदा भाषाओं में से है, जिसे भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में स्थान प्राप्त है।

4. **मेघालयः** खासी और गारो मेघालय की खासी भाषा एक अनूठा उदाहरण है क्योंकि यह 'ऑस्ट्रो–एशियाटिक' परिवार से संबंधित है, जो इसे उत्तर भारत की अधिकांश भाषाओं से अलग करती है। इसकी उत्पत्ति और विकास के सूत्र दक्षिण–पूर्व एशिया से जुड़े माने जाते हैं। 19वीं सदी में ईसाई मिशनरियों के आगमन के साथ इसकी मौखिक परंपराओं को रोमन लिपि में लिपिबद्ध किया गया। वहीं, गारो भाषा तिब्बती–बर्मी परिवार की 'बोडो–कोच' उपशाखा का हिस्सा है। इन दोनों भाषाओं ने अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता बनाए रखते हुए हिंदी और अंग्रेजी के साथ एक सहज समन्वय स्थापित किया है।

5. **मिज़ोरमः** मिज़ो भाषा का विकास मुख्य रूप से 'लुशाई' बोली से हुआ है। यह भी तिब्बती–बर्मी भाषा परिवार की एक शाखा है। 18वीं और 19वीं सदी तक यह पूर्णतः मौखिक थी। मिशनरियों ने 19वीं सदी के अंत में रोमन लिपि का उपयोग कर मिज़ो व्याकरण और शब्दकोश तैयार किया। इसके विकास का सबसे महत्वपूर्ण चरण वह था जब विभिन्न मिज़ो कबीलों की बोलियों का एकीकरण हुआ और एक मानकीकृत मिज़ो भाषा का उदय हुआ। आज मिज़ोरम में साक्षरता दर बहुत अधिक होने के कारण मिज़ो साहित्य और पत्रकारिता अत्यंत सशक्त है।

6. **नागालैंडः** आओ और अंगामी (नागामी) नागालैंड में 16 से अधिक मुख्य जनजातियाँ हैं और प्रत्येक की अपनी भाषा है। 'आओ' और 'अंगामी' यहाँ की प्रमुख भाषाएँ हैं। इनकी उत्पत्ति भी तिब्बती–बर्मी परिवार से है। ऐतिहासिक रूप से, अलग–अलग नागा जनजातियों के बीच संवाद की भारी समस्या थी। इसी आवश्यकता ने 'नागामी' (असमिया, हिंदी और नागा बोलियों का मिश्रण) को जन्म दिया। नागामी का विकास समन्वय की एक अनूठी कहानी है, जहाँ विभिन्न संस्कृतियों ने मिलकर संवाद का एक नया माध्यम तैयार किया।

7. **त्रिपुराः** कोकबोरोक और बंगाली कोकबोरोक त्रिपुरा की मूल जनजातीय भाषा है, जो तिब्बती–बर्मी परिवार की है। इसका इतिहास त्रिपुरा के 'माणिक्य राजवंश' के अभिलेखों में मिलता है। 19वीं और 20वीं शताब्दी के दौरान बंगाली भाषा के प्रभाव के कारण इसके विकास में कुछ ठहराव आया, लेकिन 1979 में इसे राज्य की आधिकारिक भाषा का दर्जा मिलने के बाद कोकबोरोक साहित्य में नया प्राण फूँका गया। आज यह भाषा रोमन और बंगाली दोनों लिपियों में लिखी जाती है।

8. **सिक्किमः** नेपाली और लेप्चा सिक्किम में नेपाली भाषा प्रमुखता से बोली जाती है, जो एक हिंद–आर्य भाषा है। इसका विकास 11वीं–12वीं शताब्दी के आसपास शुरू हुआ था और यह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। वहीं, लेप्चा यहाँ की मूल और सबसे प्राचीन भाषा मानी जाती है, जिसकी अपनी विशिष्ट लिपि है। लेप्चा भाषा का इतिहास प्राचीन हिमालयी संस्कृतियों से जुड़ा है। इन भाषाओं के साथ हिंदी का समन्वय यहाँ बहुत गहरा है क्योंकि लिपि की समानता (देवनागरी) संचार को अत्यंत सुगम बनाती है।

"हिंदी राजभाषा है, संवाद की धार बने
पूर्वोत्तर की बोलियाँ, संस्कृति की पहचान रहें।"

भाषाई समन्वय में चुनौतियाँ और भावी संभावनाएँ

किसी भी भाषाई समन्वय के मार्ग में चुनौतियाँ होना स्वाभाविक है। पूर्वोत्तर में हिंदी के प्रसार को अक्सर पहचान के संकट से जोड़कर देखा जाता रहा है। यह चिंता वाजिब है कि वैश्विक भाषाओं के प्रभाव में स्थानीय बोलियाँ कहीं लुप्त न हो जाएं। इसलिए, वर्तमान समय की मांग है कि हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के बीच का यह संबंध 'सह–अस्तित्व' पर आधारित हो। हमें ऐसी तकनीक और अनुवाद प्रणालियों की आवश्यकता है जो स्थानीय साहित्य को हिंदी के माध्यम से विश्व पटल पर ला सकें। जब एक गारो या मिज़ो कविता का हिंदी में अनुवाद होता है, तो वह केवल शब्द नहीं बदलते, बल्कि एक पूरा विचार तंत्र साझा होता है। समन्वय का अर्थ हिंदी को क्षेत्रीय भाषाओं पर हावी करना नहीं, बल्कि उन्हें एक ऐसा मंच देना है जहाँ वे अपनी विशिष्टता को सुरक्षित रखते हुए शेष राष्ट्र से संवाद कर सकें।

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ और राजभाषा हिंदी परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक–दूसरे की पूरक हैं। हिंदी राष्ट्रीय संवाद और राजभाषा के रूप में कार्य करती है, जबकि क्षेत्रीय भाषाएँ सांस्कृतिक आत्मा और स्थानीय चेतना की अभिव्यक्ति हैं। इन दोनों के मध्य संतुलित समन्वय ही भारत की भाषाई एकता और अखंडता को सुदृढ़ करता है। पूर्वोत्तर भारत और हिंदी के बीच यह समन्वय "एक भारत, श्रेष्ठ भारत" की अवधारणा को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है। भाषाई विविधता में एकता का यही भाव भारत की राष्ट्रीय चेतना का मूल है और भविष्य में भी यही उसकी सबसे बड़ी शक्ति रहेगा। आने वाले समय में यह भाषाई मित्रता और अधिक प्रगाढ़ होगी, जिससे न केवल पूर्वोत्तर का विकास होगा, बल्कि हिंदी भी अपनी एकता और अखंडता की छवि के साथ और अधिक समृद्ध होकर उभरेगी।

"पूर्वोत्तर की बोलियाँ, हिंदी की वाणी
दोनों मिलकर रचें–भारत की नवीन कहानी।"

ISSN No. : 0970-9398

विकसित भारत @2047: राष्ट्र निर्माण में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका

– प्रदीप शर्मा
कार्यालय सहायक, पंजाब नैशनल बैंक, डिब्रूगढ़

वर्ष 2047 भारत के इतिहास में एक ऐतिहासिक मोड़ होगा। इसी वर्ष भारत अपनी स्वतंत्रता के 100 वर्ष पूरे करेगा। यह केवल उत्सव का समय नहीं होगा, बल्कि यह आत्मनिरीक्षण का समय भी होगा–कि आज़ादी के सौ वर्षों बाद भारत कहाँ खड़ा है और भविष्य की दिशा क्या है। इसी सोच से "विकसित भारत @2047" का सपना सामने आया है।

विकसित भारत का अर्थ केवल ऊँची इमारतें, तेज़ ट्रेनें या बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं है। विकसित भारत का वास्तविक अर्थ है– हर नागरिक को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, सुलभ स्वास्थ्य सेवाएँ, सम्मानजनक रोज़गार, सुरक्षित जीवन, समान अवसर और सम्मान के साथ जीने का अधिकार। यह सपना तभी साकार हो सकता है जब भारत का विकास संतुलित और समावेशी हो। अगर देश का कोई भी क्षेत्र विकास से पीछे रह जाता है, तो पूरे देश का विकास अधूरा रह जाता है। इसी संदर्भ में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। पूर्वोत्तर भारत केवल भारत का सीमावर्ती क्षेत्र नहीं है, बल्कि यह भारत की प्राकृतिक संपदा, सांस्कृतिक विविधता, रणनीतिक शक्ति और भविष्य की संभावनाओं का केंद्र है। यदि इस क्षेत्र का सही दिशा में विकास होता है, तो विकसित भारत @2047 का लक्ष्य आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

पूर्वोत्तर भारत का परिचय

पूर्वोत्तर भारत में आठ राज्य शामिल हैं– असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। यह क्षेत्र भारत के नक्शे में एक विशेष स्थान रखता है। यहाँ ऊँचे पहाड़, गहरी घाटियाँ, चौड़ी नदियाँ, घने जंगल और उपजाऊ ज़मीन पाई जाती है। इस क्षेत्र को भारत का जैव–विविधता हॉटस्पॉट कहा जाता है, क्योंकि यहाँ अनेक दुर्लभ वनस्पतियाँ और जीव–जंतु पाए जाते हैं। पूर्वोत्तर भारत की जनसंख्या कम है, लेकिन यहाँ संसाधनों की प्रचुरता है। लंबे समय तक भौगोलिक कठिनाइयों, सीमित संपर्क और ऐतिहासिक उपेक्षा के कारण यह क्षेत्र विकास की मुख्यधारा से पीछे रहा। लेकिन आज हालात बदल रहे हैं। सड़कें, रेल लाइनें, हवाई सेवाएँ, डिजिटल कनेक्टिविटी और शिक्षा संस्थान इस क्षेत्र को नई दिशा दे रहे हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

पूर्वोत्तर भारत का इतिहास अत्यंत समृद्ध और गौरवशाली रहा है। असम का अहोम साम्राज्य लगभग 600 वर्षों तक विदेशी आक्रमणों का सामना करता रहा। मणिपुर और त्रिपुरा की राज परंपराएँ इस क्षेत्र की राजनीतिक और सांस्कृतिक मजबूती को दर्शाती हैं। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही भारत और दक्षिण–पूर्व एशिया के बीच सांस्कृतिक और व्यापारिक सेतु रहा है। बौद्ध धर्म, कला, संगीत और व्यापार के मार्ग इसी क्षेत्र से होकर आगे बढ़े। औपनिवेशिक काल में इस क्षेत्र की उपेक्षा हुई, जिससे विकास बाधित हुआ। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने धीरे–धीरे इसे राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया। आज आवश्यकता है कि इस ऐतिहासिक विरासत को आधुनिक विकास से जोड़ा जाए।

भौगोलिक और रणनीतिक महत्व

पूर्वोत्तर भारत की सीमाएँ चीन, म्यांमार, बांग्लादेश और भूटान से मिलती हैं। इस कारण इसका रणनीतिक महत्व अत्यंत अधिक है। यह क्षेत्र भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है और साथ ही यह भारत को एशिया के अन्य देशों से जोड़ने वाला प्राकृतिक द्वार है। भारत सरकार की "एक्ट ईस्ट नीति" में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका केंद्रीय है।

यदि इस क्षेत्र में सड़क, रेल, जलमार्ग और हवाई संपर्क मजबूत होते हैं, तो भारत अंतरराष्ट्रीय व्यापार और सहयोग में बड़ी भूमिका निभा सकता है। एक मजबूत पूर्वोत्तर भारत, एक सुरक्षित और सशक्त भारत की नींव रखता है।

आर्थिक विकास की संभावनाएँ

पूर्वोत्तर भारत प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर है। यहाँ अनेक नदियाँ हैं, जिनसे जलविद्युत ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है। ऊर्जा आत्मनिर्भरता विकसित भारत की पहचान है, और इसमें पूर्वोत्तर भारत की भूमिका निर्णायक हो सकती है। यह क्षेत्र चाय उत्पादन के लिए पूरी दुनिया में प्रसिद्ध है। इसके अलावा यहाँ बांस, रबर, तेल, गैस, फल–फूल, मछली पालन और वन उत्पादों की अपार संभावनाएँ हैं। यदि इन संसाधनों पर आधारित स्थानीय उद्योग विकसित किए जाएँ, तो रोज़गार के अवसर बढ़ेंगे और पलायन रुकेगा। आर्थिक रूप से सशक्त पूर्वोत्तर भारत, विकसित भारत @2047 का मजबूत आधार बनेगा।

कृषि और जैविक खेती

पूर्वोत्तर भारत में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम होता है। इसलिए यहाँ की खेती प्राकृतिक रूप से जैविक है।

आज पूरी दुनिया जैविक और स्वस्थ भोजन की ओर बढ़ रही है, जिससे इस क्षेत्र के किसानों के लिए नए अवसर पैदा हो रहे हैं। यदि सरकार किसानों को प्रशिक्षण, आधुनिक तकनीक और बाज़ार की सुविधा दे, तो यह क्षेत्र जैविक खेती का राष्ट्रीय मॉडल बन सकता है। इससे किसानों की आय बढ़ेगी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होगी।

पर्यटन और प्राकृतिक सौंदर्य

पूर्वोत्तर भारत का प्राकृतिक सौंदर्य अद्वितीय है। यहाँ के पहाड़, झीलें, झरने, नदियाँ और घने जंगल पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। पर्यटन केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह रोज़गार और विकास का एक बड़ा माध्यम है। यदि पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए पर्यटन विकसित किया जाए, तो यह क्षेत्र आर्थिक रूप से सशक्त बन सकता है और स्थानीय संस्कृति को पहचान मिलेगी।

संस्कृति और परंपराएँ

पूर्वोत्तर भारत की संस्कृति अत्यंत विविध और समृद्ध है। यहाँ अनेक जनजातियाँ रहती हैं, जिनकी अपनी भाषा, वेशभूषा, त्योहार और जीवनशैली है। लोकनृत्य, लोकगीत, हस्तशिल्प और पारंपरिक त्योहार भारत की सांस्कृतिक विविधता को दर्शाते हैं। आज के समय में संस्कृति भी एक सॉफ्ट पावर है और पूर्वोत्तर भारत इस शक्ति को और मज़बूत करता है।

शिक्षा और मानव संसाधन विकास

विकसित भारत @2047 की सबसे मजबूत नींव शिक्षा है। बिना अच्छी शिक्षा के कोई भी देश लंबे समय तक प्रगति नहीं कर सकता। पूर्वोत्तर भारत में शिक्षा के क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। पूर्वोत्तर भारत में कई केंद्रीय और राज्य विश्वविद्यालय, तकनीकी संस्थान और मेडिकल कॉलेज स्थापित किए गए हैं। डिजिटल शिक्षा, ऑनलाइन कक्षाएँ और स्कॉलरशिप योजनाओं ने दूर–दराज़ के क्षेत्रों में रहने वाले छात्रों को आगे बढ़ने का अवसर दिया है। यदि स्कूल स्तर से ही गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आधुनिक पाठ्यक्रम और प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध कराए जाएँ, तो पूर्वोत्तर भारत का युवा वर्ग देश के किसी भी हिस्से से पीछे नहीं रहेगा। शिक्षा केवल नौकरी पाने का साधन नहीं है, बल्कि यह सोचने, समझने और नेतृत्व करने की क्षमता भी विकसित करती है। शिक्षित युवा ही विकसित भारत @2047 के सच्चे निर्माता होंगे।

युवा शक्ति और कौशल विकास

पूर्वोत्तर भारत की जनसंख्या संरचना युवा है। यह युवा शक्ति इस क्षेत्र की सबसे बड़ी पूँजी है। यदि इस ऊर्जा को सही दिशा दी जाए, तो यह भारत को तेज़ी से आगे बढ़ा सकती है। कौशल विकास कार्यक्रम, स्टार्टअप प्रशिक्षण, डिजिटल स्किल्स और स्थानीय संसाधनों पर आधारित रोजगार युवाओं को आत्मनिर्भर बना सकते हैं। आईटी, पर्यटन, कृषि–आधारित उद्योग, हैंडलूम, हस्तशिल्प और फूड प्रोसेसिंग जैसे क्षेत्रों में युवाओं के लिए अपार संभावनाएँ हैं। विकसित भारत @2047 का अर्थ है–ऐसा भारत जहाँ युवा नौकरी खोजने वाला नहीं, बल्कि नौकरी देने वाला बने। पूर्वोत्तर भारत इस बदलाव में बड़ी भूमिका निभा सकता है।

खेल और पूर्वोत्तर भारत

पूर्वोत्तर भारत ने खेलों के क्षेत्र में भारत को कई प्रतिभाशाली खिलाड़ी दिए हैं। बॉक्सिंग, फुटबॉल, एथलेटिक्स, वेटलिफ्टिंग और तीरंदाज़ी जैसे खेलों में इस क्षेत्र के युवाओं ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का नाम रोशन किया है। खेल केवल पदक जीतने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह अनुशासन, आत्मविश्वास और राष्ट्रीय गौरव भी बढ़ाता है।

यदि खेल सुविधाएँ, प्रशिक्षण केंद्र और प्रोत्साहन योजनाएँ बढ़ाई जाएँ, तो पूर्वोत्तर भारत भारत का स्पोर्ट्स हब बन सकता है। विकसित भारत @2047 में खेलों के माध्यम से भारत की वैश्विक पहचान और मज़बूत होगी।

महिला सशक्तिकरण की भूमिका

पूर्वोत्तर भारत में महिलाओं की सामाजिक भूमिका अपेक्षाकृत मज़बूत रही है। कई जनजातीय समाजों में महिलाएँ आर्थिक और सामाजिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। महिला स्वयं सहायता समूह, हस्तशिल्प, हथकरघा, कृषि और छोटे व्यवसायों में महिलाएँ सक्रिय रूप से योगदान दे रही हैं। यदि महिलाओं को शिक्षा, वित्तीय सहायता और बाज़ार तक पहुँच मिले, तो वे विकास की गति को दोगुना कर सकती हैं। विकसित भारत @2047 का सपना तब तक पूरा नहीं हो सकता, जब तक महिलाएँ पूरी तरह सशक्त न हों। इस दिशा में पूर्वोत्तर भारत एक सकारात्मक उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है।

तकनीक, डिजिटल कनेक्टिविटी और नवाचार

आज का युग तकनीक और डिजिटल क्रांति का युग है। विकसित भारत @2047 के लिए तकनीकी विकास अत्यंत आवश्यक है। पूर्वोत्तर भारत में इंटरनेट, मोबाइल नेटवर्क और डिजिटल सेवाओं का विस्तार हो रहा है। डिजिटल इंडिया, स्टार्टअप इंडिया और ई–गवर्नेंस जैसी योजनाएँ इस क्षेत्र में पारदर्शिता और अवसर बढ़ा रही हैं। यदि तकनीक को शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और प्रशासन से जोड़ा जाए, तो विकास की गति कई गुना बढ़ सकती है। पूर्वोत्तर भारत नवाचार और स्टार्टअप के लिए एक नया केंद्र बन सकता है, जहाँ स्थानीय समस्याओं के स्थानीय समाधान विकसित हों।

सीमावर्ती क्षेत्र और राष्ट्रीय सुरक्षा

पूर्वोत्तर भारत का सीमावर्ती होना इसे राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण बनाता है। सीमावर्ती क्षेत्रों का विकास केवल आर्थिक आवश्यकता नहीं, बल्कि रणनीतिक आवश्यकता भी है। जब सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वाले लोग शिक्षित, सशक्त और खुशहाल होते हैं, तो देश की सीमाएँ भी सुरक्षित होती हैं। सड़क, संचार, स्वास्थ्य और रोज़गार से जुड़ा

विकास सुरक्षा को और मज़बूत करता है । इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत का विकास सीधे–सीधे भारत की सुरक्षा और स्थिरता से जुड़ा हुआ है।

शांति, स्थिरता और विश्वास का वातावरण

किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए शांति और स्थिरता सबसे ज़रूरी शर्त है। पिछले कुछ वर्षों में पूर्वोत्तर भारत में शांति की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। संवाद, विकास और विश्वास के माध्यम से कई समस्याओं का समाधान हुआ है। जब लोगों को लगता है कि वे विकास की प्रक्रिया का हिस्सा हैं, तो समाज में सकारात्मक बदलाव आता है। विकसित भारत @2047 का रास्ता शांति, संवाद और समावेश से होकर ही जाता है।

पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास

पूर्वोत्तर भारत प्रकृति के अत्यंत निकट है। यहाँ का विकास तभी सार्थक होगा जब वह पर्यावरण के साथ संतुलन बनाकर किया जाए। वन संरक्षण, जल संरक्षण, जैव–विविधता की रक्षा और स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग इस क्षेत्र को सतत विकास का मॉडल बना सकता है। दुनिया आज ऐसे विकास मॉडल की तलाश में है जो प्रकृति को नुकसान न पहुँचाए। पूर्वोत्तर भारत भारत को यह रास्ता दिखा सकता है कि विकास और पर्यावरण साथ–साथ कैसे आगे बढ़ सकते हैं।

2047 की ओर दृष्टिः पूर्वोत्तर भारत का भविष्य 2047 तक भारत को एक ऐसा राष्ट्र बनाना है जहाँ हर नागरिक को समान अवसर मिले। पूर्वोत्तर भारत को "पिछड़ा क्षेत्र" नहीं, बल्कि "भविष्य का अग्रदूत" माना जाना चाहिए। यदि सही नीति, सही निवेश और स्थानीय लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए, तो यह क्षेत्र भारत के लिए विकास, नवाचार और संतुलन का प्रतीक बन सकता है। पूर्वोत्तर भारत का विकास पूरे भारत की प्रगति को नई दिशा देगा।

पूर्वोत्तर भारत और सामाजिक समावेशन

विकसित भारत @2047 का एक महत्वपूर्ण आधार सामाजिक समावेशन है। इसका अर्थ है कि समाज का कोई भी वर्ग–चाहे वह जनजातीय हो, ग्रामीण हो या सीमावर्ती क्षेत्र में रहने वाला हो–विकास की प्रक्रिया से बाहर न रहे। पूर्वोत्तर भारत में बड़ी संख्या में जनजातीय समुदाय रहते हैं, जिनकी अपनी परंपराएँ, सामाजिक संरचना और जीवन दृष्टि है। लंबे समय तक विकास योजनाएँ इन समुदायों की ज़रूरतों को पूरी तरह समझे बिना बनाई गईं, जिससे असंतोष और दूरी बनी। आज आवश्यकता है कि विकास ऊपर से थोपने वाला नहीं, बल्कि स्थानीय भागीदारी वाला हो। जब योजनाओं के निर्माण और क्रियान्वयन में स्थानीय लोगों की भागीदारी होती है, तो विकास स्थायी और प्रभावी बनता है।

स्वास्थ्य सेवाएँ और मानव विकास

स्वास्थ्य किसी भी विकसित राष्ट्र का आधार होता है। पूर्वोत्तर भारत में भौगोलिक कठिनाइयों के कारण स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच एक बड़ी चुनौती रही है। हाल के वर्षों में मोबाइल मेडिकल यूनिट, टेलीमेडिसिन और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों के विस्तार से स्थिति में सुधार हुआ है। लेकिन विकसित भारत @2047 के लिए ज़रूरी है किः हर गाँव में प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा हो, मातृ एवं शिशु मृत्यु दर कम हो, कुपोषण समाप्त हो और मानसिक स्वास्थ्य को भी समान महत्व मिले। स्वस्थ नागरिक ही राष्ट्र की सबसे बड़ी पूँजी होते हैं।

पूर्वोत्तर भारत और जल संसाधन प्रबंधन

पूर्वोत्तर भारत को भारत का जल भंडार कहा जा सकता है। ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियाँ इस क्षेत्र की जीवन रेखा हैं। यदि इन जल संसाधनों का सही प्रबंधन किया जाए, तो बाढ़ नियंत्रण संभव है, सिंचाई बेहतर हो सकती है, जलविद्युत उत्पादन बढ़ सकता है, जल प्रबंधन केवल तकनीकी विषय नहीं है, बल्कि यह जीवन और आजीविका से जुड़ा विषय है। विकसित भारत @2047 में जल सुरक्षा एक बड़ी उपलब्धि होगी, जिसमें पूर्वोत्तर भारत निर्णायक भूमिका निभा सकता है।

शहरीकरण और संतुलित विकास

विकास के साथ शहरीकरण स्वाभाविक है, लेकिन अनियंत्रित शहरीकरण समस्याएँ पैदा करता है। पूर्वोत्तर भारत के शहर अभी भी नियोजित विकास का अवसर रखते हैं। यदि छोटे शहरों को स्मार्ट तरीके से विकसित किया जाए, बुनियादी सुविधाएँ समय पर दी जाएँ और ग्रामीण क्षेत्रों को मजबूत रखा जाए तो यह क्षेत्र संतुलित विकास का आदर्श मॉडल बन सकता है।

पूर्वोत्तर भारत और राष्ट्रीय एकता

पूर्वोत्तर भारत केवल भौगोलिक रूप से ही नहीं, बल्कि भावनात्मक रूप से भी भारत से जुड़ा होना चाहिए। राष्ट्रीय एकता केवल नक्शे से नहीं, बल्कि आपसी विश्वास से बनती है। जब पूर्वोत्तर के लोग यह महसूस करेंगे कि उनकी पहचान सुरक्षित है, उनकी संस्कृति का सम्मान है और उन्हें समान अवसर मिल रहे हैं तो भारत की एकता और मजबूत होगी।

मीडिया, साहित्य और पहचान

पूर्वोत्तर भारत की कहानियाँ, संघर्ष और उपलब्धियाँ राष्ट्रीय मीडिया में अपेक्षाकृत कम दिखाई देती हैं। विकसित भारत @2047 के लिए ज़रूरी है कि पूर्वोत्तर की आवाज़ को मंच मिले, स्थानीय साहित्य और कला को बढ़ावा मिले और इस क्षेत्र को "समस्या" नहीं, बल्कि "संभावना" के रूप में देखा जाए। जब पहचान मिलेगी, तो आत्मविश्वास बढ़ेगा।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में पूर्वोत्तर भारत

2047 का भारत केवल राष्ट्रीय नहीं, बल्कि वैश्विक भूमिका निभाने वाला भारत होगा। पूर्वोत्तर भारत भारत को दक्षिण–पूर्व एशिया से जोड़ने वाला प्रवेश द्वार है। व्यापार, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और कूटनीति में यह क्षेत्र भारत की वैश्विक उपस्थिति को मजबूत कर सकता है।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत में स्थानीय शासन और लोकतंत्र की भूमिका

विकसित भारत @2047 के निर्माण में मजबूत लोकतंत्र और स्थानीय शासन व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। पूर्वोत्तर भारत में ग्राम सभाएँ, पारंपरिक परिषदें और स्थानीय संस्थाएँ लंबे समय से सामाजिक निर्णय लेने का कार्य करती रही हैं। यह प्रणाली लोकतंत्र की जड़ों को मज़बूत बनाती है। यदि इन पारंपरिक व्यवस्थाओं को आधुनिक प्रशासन से जोड़ा जाए, तो शासन अधिक प्रभावी, पारदर्शी और जन–हितैषी बन सकता है। स्थानीय लोग अपनी समस्याओं को बेहतर ढंग से समझते हैं, इसलिए समाधान भी अधिक व्यावहारिक होते हैं। स्थानीय शासन को सशक्त बनाकर भ्रष्टाचार कम किया जा सकता है और विकास योजनाओं का लाभ सही व्यक्ति तक पहुँचाया जा सकता है। यह लोकतांत्रिक भागीदारी विकसित भारत की पहचान बनेगी।

पूर्वोत्तर भारत और भाषा संरक्षण

भाषा किसी भी समाज की आत्मा होती है। पूर्वोत्तर भारत में सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ बोली जाती हैं। यह भाषाई विविधता भारत की सांस्कृतिक शक्ति है, कमजोरी नहीं। विकसित भारत @2047 का अर्थ यह नहीं है कि सब एक जैसे बन जाएँ, बल्कि इसका अर्थ है कि हर पहचान सुरक्षित रहते हुए आगे बढ़े। यदि स्थानीय भाषाओं को शिक्षा, प्रशासन और डिजिटल माध्यमों में स्थान दिया जाए, तो लोगों का आत्मविश्वास बढ़ेगा और वे विकास प्रक्रिया से अधिक जुड़ाव महसूस करेंगे। भाषा संरक्षण सांस्कृतिक सम्मान का प्रतीक है, और सम्मान से ही राष्ट्रीय एकता मजबूत होती है।

पूर्वोत्तर भारत और आपदा प्रबंधन

पूर्वोत्तर भारत बाढ़, भूस्खलन और भूकंप जैसी प्राकृतिक आपदाओं के प्रति संवेदनशील क्षेत्र है।

विकसित भारत@2047 के लिए आवश्यक है कि आपदा प्रबंधन केवल राहत तक सीमित न रहे, बल्कि पूर्व तैयारी और सतर्कता पर आधारित हो। स्थानीय समुदायों को प्रशिक्षण देकर, आधुनिक तकनीक का उपयोग करके और पारंपरिक ज्ञान को अपनाकर आपदाओं से होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। एक ऐसा भारत जो आपदाओं का सामना मजबूती से कर सके, वही सच्चा विकसित भारत होगा।

पूर्वोत्तर भारत और सामाजिक सद्भाव

विकास केवल आर्थिक नहीं होता, वह सामाजिक भी होता है। पूर्वोत्तर भारत में विभिन्न जातियाँ, जनजातियाँ और समुदाय मिल–जुलकर रहते हैं। आपसी सम्मान और सह–अस्तित्व यहाँ की विशेषता है। विकसित भारत @2047 के लिए यह आवश्यक है कि सामाजिक सद्भाव बना रहे और किसी भी प्रकार का भेदभाव न हो। जब समाज में विश्वास और भाईचारा होता है, तभी विकास स्थायी और शांतिपूर्ण बनता है। पूर्वोत्तर भारत सामाजिक समरसता का उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है।

पूर्वोत्तर भारत को यदि सही अवसर, सही नीति और सही सम्मान मिले, तो यह क्षेत्र भारत की विकास यात्रा का मार्गदर्शक बन सकता है। यह केवल एक भौगोलिक क्षेत्र नहीं, बल्कि भारत के भविष्य की संभावनाओं का केंद्र है। विकसित भारत @2047 का सपना तभी साकार होगा, जब पूर्वोत्तर भारत गर्व के साथ कह सके– "हम भी भारत के विकास में बराबर के भागीदार हैं।"

विकसित भारत @2047 और पूर्वोत्तर भारतः साझा जिम्मेदारी

विकसित भारत @2047 का लक्ष्य केवल सरकार या किसी एक क्षेत्र की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि यह पूरे देश की साझा जिम्मेदारी है। पूर्वोत्तर भारत को जब तक केवल सहायता पाने वाला क्षेत्र समझा जाएगा, तब तक विकास अधूरा रहेगा। आवश्यकता है कि इस क्षेत्र को नेतृत्व देने वाला भागीदार माना जाए।

पूर्वोत्तर भारत के लोग मेहनती, साहसी और नवाचार की सोच रखने वाले हैं। यदि उन्हें सही अवसर, आधुनिक सुविधाएँ और राष्ट्रीय मंच दिया जाए, तो वे भारत की विकास यात्रा में नई ऊर्जा भर सकते हैं। यह क्षेत्र भारत को सिखाता है कि प्रकृति के साथ संतुलन बनाकर, विविधताओं का सम्मान करते हुए भी प्रगति की जा सकती है। अंततः विकसित भारत @2047 का अर्थ है–ऐसा भारत जहाँ कोई भी क्षेत्र पीछे न छूटे और हर नागरिक गर्व के साथ कह सके कि वह राष्ट्र निर्माण का हिस्सा है। पूर्वोत्तर भारत इस सपने को साकार करने की मजबूत कड़ी है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि विकसित भारत @2047 का सपना पूर्वोत्तर भारत के बिना अधूरा है। यह क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों, सांस्कृतिक विविधता, युवा शक्ति और रणनीतिक महत्व से भरपूर है।

जब पूर्वोत्तर भारत आगे बढ़ेगा तो भारत की अर्थव्यवस्था मज़बूत होगी, संस्कृति और समृद्ध होगी, सुरक्षा और स्थिरता बढ़ेगी। "पूर्वोत्तर भारत का विकास केवल एक क्षेत्र का विकास नहीं, बल्कि पूरे राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य की नींव है।" विकसित भारत@2047 केवल एक सरकारी लक्ष्य नहीं है, यह हर भारतीय का सपना है। इस सपने को पूरा करने के लिए हमें उन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देना होगा, जो अब तक हाशिए पर रहे हैं। पूर्वोत्तर भारत का विकास भारत को संतुलन देगा, विविधता को शक्ति बनाएगा और भविष्य को स्थिरता देगा।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत के परिप्रेक्ष्य में राजभाषा हिंदी

– दीपक ओझा
वरिष्ठ प्रबंधक, केनरा बैंक प्रबंधन संस्थान, मणिपाल

भारत एक बहुभाषी और विविध–सांस्कृतिक देश है, जिसकी एकता इसकी विविधता में निहित है। इस विशाल राष्ट्र के भाषाई परिदृश्य में, हिंदी को संघ की राजभाषा का दर्जा प्राप्त है, जिसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के बीच एक प्रभावी संचार और भावनात्मक एकता स्थापित करना है।

विशेष रूप से, पूर्वोत्तर भारत, जिसमें "सात–बहनें" (अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा) और सिक्किम शामिल हैं, और जिसे हम 'अष्टलक्ष्मी' के रूप में भी जानते हैं, अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक, जैव विविधता, और रणनीतिक महत्व के लिए प्रसिद्ध है। एक पतली "चिकेन–नेक" (सिलीगुड़ी–कॉरिडोर) इसे भारत की मुख्य भूमि से जोड़ती है।

पूर्वोत्तर भारत, जिसे "सांस्कृतिक–प्रयोगशाला" भी कहा जाता है, जहाँ आर्य, द्रविड़ और तिब्बती मूल के लोग मिलकर एक समन्वयकारी संस्कृति बनाते हैं, जहाँ 200 से अधिक जनजातियाँ रहती हैं, जिनमें से प्रत्येक की अपनी भाषा, रीति–रिवाज और त्योहार हैं, अपनी अनूठी जनजातीय संस्कृतियों और 220 से अधिक भाषाओं और बोलियों की समृद्ध भाषाई विरासत के साथ, भारत की "विविधता में एकता" का एक ज्वलंत उदाहरण है।

पूर्वोत्तर भारत भाषाओं का एक समृद्ध संगम है, जहाँ असमिया, बोडो, मणिपुरी, खासी, मिज़ो और गारो जैसी कई स्थानीय भाषाएँ हैं, जो मुख्य रूप से तिब्बती–बर्मन और इंडो–आर्यन परिवारों से आती हैं और इन विविध भाषाओं के बीच हिंदी एक महत्वपूर्ण संपर्क भाषा एवं मज़बूत कड़ी के रूप में कार्य करते हुए विभिन्न समुदायों को जोड़ती है और राष्ट्रीय एकता को मज़बूत करती है। जैसा कि रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था कि "भारतीय भाषाएँ नदियाँ हैं और हिंदी महानदी, जो सबको एक साथ लाती है।"

इस क्षेत्र में हिंदी की भूमिका केवल प्रशासनिक सुविधा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक सेतु के रूप में कार्य करती है, जो पूर्वोत्तर को देश की मुख्यधारा से जोड़ती है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का उद्भव

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी का आगमन आधुनिक युग की देन नहीं है। ऐतिहासिक रूप से, विभिन्न व्यापारी, संत और प्रवासी सदियों से इस क्षेत्र में आते रहे हैं, जिससे संपर्क भाषाओं का विकास हुआ।

पूर्वोत्तर में हिंदी के मध्यकाल में शंकरदेव जैसे संतों ने 'ब्रजावली' के माध्यम से भक्ति का संचार किया, वहीं स्वतंत्रता संग्राम के दौरान, लोकप्रिय गोपीनाथ बोरदोलोई जैसे नायकों ने राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए हिंदी का प्रयोग किया। आजादी के बाद, जैसे–जैसे व्यापार और आवागमन बढ़ा, हिंदी ने स्वतः स्फूर्त रूप में अपनी जगह बनाई, विशेषकर पूर्वोत्तर राज्यों में जहाँ सैकड़ों स्थानीय बोलियाँ हैं।

हिंदी, व्यापार, शिक्षा और प्रशासन में अपने बढ़ते उपयोग तथा विभिन्न भाषाई समुदायों के बीच संवाद के माध्यम के रूप में एक प्रभावी संपर्क भाषा बन गई है। औपनिवेशिक काल में शिक्षा और प्रशासन में अंग्रेजी के प्रभुत्व के बावजूद, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने विभिन्न भाषाई समुदायों को जोड़ने का काम किया और आजादी के बाद यह शिक्षा, रोजगार और राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में स्थापित हुई, जिसे फ़िल्मों और सांस्कृतिक आदान–प्रदान ने और मजबूत किया।

व्यापार और प्रवासनः व्यापार और प्रवासन के ज़रिए हिंदी के शुरुआती रूप और उससे प्रभावित बोलियाँ पूर्वोत्तर क्षेत्रों में फैलीं, क्योंकि व्यापारिक मार्गों ने लोगों, विचारों और भाषाओं के आदान–प्रदान को बढ़ावा दिया, जिससे भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में भाषाई विविधता बढ़ी और हिंदी (प्राकृत/अपभ्रंश) का प्रभाव पूर्वोत्तर भारत तक पहुँचा, जो सांस्कृतिक–संपर्क और भाषाई–विकास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था।

प्राचीन और मध्यकालीन भारत में, सिल्क–रूट और अन्य स्थलीय/समुद्री मार्गों ने उत्तर और पूर्वोत्तर भारत को व्यापार के लिए जोड़ा। इन मार्गों से व्यापारी/ सैनिक/धार्मिक प्रचारक और आम लोग इन क्षेत्रों में गए, जिससे स्थानीय आबादी के साथ भाषाई संपर्क हुआ। हिंदी के शुरुआती रूप (जैसे प्राकृत/अपभ्रंश के स्थानीय रूप) व्यापारियों/प्रवासियों द्वारा लाए गए और स्थानीय बोलियों से मिलकर नए भाषाई रूप विकसित हुए। इस मेलजोल से असमिया और अन्य पूर्वोत्तर भाषाओं पर हिंदी (और उससे जुड़ी भाषाओं) का प्रभाव पड़ा, जिससे उनकी शब्दावली और व्याकरण में कुछ समानताएं आईं।

स्वतंत्रता संग्रामः स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी

ISSN No. : 0970-9398

और सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में बढ़ावा दिया, ताकि भारत के विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के लोगों को एक साझा भाषा के ज़रिए जोड़ा जा सके और राष्ट्रीय एकता मज़बूत हो। गांधी जी ने इसे जन–जन की भाषा माना, जबकि बोस ने इसे राष्ट्रीय पहचान का प्रतीक समझा, जिससे पूरे देश में हिंदी के प्रति जागरूकता और स्वीकार्यता बढ़ी, जो आज़ादी की लड़ाई का एक महत्वपूर्ण पहलू था।

इन नेताओं का मानना था कि हिंदी एक ऐसी भाषा बन सकती है जो पूरे देश को एकता के सूत्र में बांध सके और राष्ट्रीय एकता का माध्यम बन सके, चाहे लोग किसी भी प्रांत के हों। इस प्रचार के कारण, हिंदी सिर्फ हिंदी भाषी क्षेत्रों तक सीमित न रहकर, पूरे देश में खासकर पूर्वोत्तर भारत में लोगों के बीच एक संपर्क भाषा के रूप में जानी जाने लगी, जिससे भाषाई बाधाएँ भी कम हुईं।

स्वाभाविक विकासः अरुणाचल प्रदेश जैसे राज्यों में, जहां 26 प्रमुख जनजातियां और 50 से अधिक भाषाएँ हैं, वहाँ उन्हें विभिन्न जनजातियों/बोलियों की विविधता के कारण आपसी संवाद के लिए एक साझा संपर्क भाषा की आवश्यकता महसूस हुई, जिसे स्वाभाविक रूप से हिंदी ने भरा और यहाँ के लोगों ने इसे स्वेच्छा से अपनाया। अरुणाचल प्रदेश में 90% से अधिक लोग हिंदी बोलते या समझते हैं, जो इसकी सहज स्वीकार्यता का प्रमाण है। शिक्षा प्रणाली में भी हिंदी एक प्रमुख विषय के रूप में उभरी है और यह जनसंचार का एक माध्यम भी है।

अरुणाचल प्रदेश जैसे अन्य पूर्वोत्तर राज्यों ने भी हिंदी को अपनी जनजातीय बोलियों के पूरक के रूप में देखा है, जो उन्हें आपस में जोड़ने और राज्य की एकता को बनाए रखने में मदद करती है और यह इस बात का प्रमाण है कि हिंदी कैसे भारतीय भाषाओं के बीच सेतु का काम करती है।

पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उद्भव

आधुनिक हिंदी,संस्कृत से निकली भाषाओं की एक निरंतर विकसित धारा है,जोकि प्राचीन संस्कृत(प्राचीन आर्य भाषा) से शुरू होकर प्राकृत, फिर अपभ्रंश और अंततः ब्रजभाषा, अवधी जैसी मध्यकालीन बोलियों से होती हुई, हिन्दवी (आधुनिक हिंदी) के रूप में विकसित हुई।

जहाँ औपनिवेशिक काल में उर्दू (हिंदुस्तानी) प्रशासन का हिस्सा बनी, वहीं राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान, हिंदी ने एकीकरण और जनसंपर्क की भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे यह पूरे देश में फैल गई, जिसमें पूर्वोत्तर के राज्य भी शामिल थे। आज भी हिंदी पूर्वोत्तर सहित पूरे भारत में संपर्क की 'महत्वपूर्ण' भाषा है, जिसकी जड़ें संस्कृत में हैं और विकास अपभ्रंश (शौरसेनी) से हुआ है।

साहित्य, मीडिया और त्योहारों के माध्यम से सांस्कृतिक आदान–प्रदान के साथ–साथ हिंदी की भूमिका पूर्वोत्तर राज्यों और शेष भारत के बीच संबंधों को मजबूत करने के लिए अपरिहार्य है। यह 'विविधता में एकता' के विचार को जीवंत करता है और भारत को एक समृद्ध, सामंजस्यपूर्ण और अविभाज्य राष्ट्र के रूप में स्थापित करता है।

साहित्य और कलाः विचारों का संगम

- **साहित्यः** विभिन्न क्षेत्रों के साहित्य का आदान–प्रदान सांस्कृतिक समझ को बढ़ाता है। पूर्वोत्तर के लेखकों की रचनाएँ (जैसे साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता, समीर तांती (असमिया) और होबम सत्यवती देवी (मणिपुरी)) जब मुख्यधारा के हिंदी साहित्य में शामिल होती हैं, तो वे वहाँ के जीवन, संघर्षों और सौंदर्य को दर्शाती हैं। वहीं, हिंदी साहित्य का प्रभाव पूर्वोत्तर के साहित्यकारों को भी प्रेरित करता है, जिससे दोनों क्षेत्रों के पाठक एक–दूसरे की समृद्ध विरासत को समझते है।
- **मीडियाः** टेलीविजन धारावाहिक, फिल्में और डिजिटल मीडिया सांस्कृतिक संवाद के शक्तिशाली माध्यम हैं। पूर्वोत्तर की कहानियों को जब राष्ट्रीय मीडिया में दिखाया जाता है, तो यह पूर्वाग्रहों को तोड़ता है और पहचान के साझा भाव को जन्म देता है।

त्योहारः परंपराओं का उत्सव

भारत के त्योहार सिर्फ धार्मिक या स्थानीय आयोजन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक उत्सव हैं जो समुदायों को जोड़ते हैं। पूर्वोत्तर के प्रमुख त्योहार (जैसे असम–बिहू, नागालैंड–हॉर्नबिल, अरुणाचल प्रदेश–लोसर, मोपिन, मेघालय–वांगला, सिक्किम–सागादावा, मणिपुर–सांगाई और त्रिपुरा–खर्चीपूजा प्रमुख हैं, जो कृषि, सामाजिक–धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व रखते हैं) जब राष्ट्रीय स्तर पर मनाए जाते हैं या उनकी चर्चा होती है, तो शेष भारत के लोग उनकी अनोखी परंपराओं और रीति–रिवाजों से परिचित होते हैं। इसी तरह, देशभर के त्योहारों में पूर्वोत्तर के लोग भाग लेते हैं, जिससे सांस्कृतिक जुड़ाव बढ़ता है।

'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' और हिंदी

भारत की संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का योगदान बेहद महत्वपूर्ण है खासकर सांस्कृतिक आदान–प्रदान का यह एक महत्वपूर्ण वाहक है। पूर्वोत्तर में, यह सांस्कृतिक आदान–प्रदान और राष्ट्रीय पहचान को मजबूत करने में सहायक रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की 'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' की परिकल्पना में भाषाई सेतु सर्वोपरि है। पूर्वोत्तर के राज्यों को 'मुख्यधारा' से जोड़ने के लिए गृह मंत्रालय ने उत्तर–पूर्वी परिषद के माध्यम से भी सांस्कृतिक आदान–प्रदान को बढ़ावा दिया है।

यह पूर्वोत्तर के लोगों को देश के अन्य हिस्सों से जुड़ने का एक साझा मंच प्रदान करती है। साहित्य, मीडिया और त्योहारों के माध्यम से सांस्कृतिक आदान–प्रदान तथा हिंदी की भूमिका, पूर्वोत्तर–राज्यों और शेष भारत के बीच संबंधों को मजबूत करने के लिए अपरिहार्य है। पूर्वोत्तर के लोग महसूस करते हैं कि वे भी "भारत" के अभिन्न अंग हैं। सांस्कृतिक जुड़ाव से पर्यटन, व्यापार और लोगों के बीच आवागमन बढ़ता है, जिससे आर्थिक और सामाजिक विकास के साथ पूरे क्षेत्र का सर्वांगीण विकास होता है।

वर्तमान स्थिति

पूर्वोत्तर भारत और शेष भारत के संबंध, भौगोलिक अलगाव, सांस्कृतिक विविधता और ऐतिहासिक जुड़ावों से बनते हैं, जहाँ एक ओर 'अष्टलक्ष्मी' अपनी अनूठी जनजातीय संस्कृतियों के साथ मुख्यधारा से जुड़े हुए हैं। कनेक्टिविटी (सड़क, रेल, हवाई) और सरकारी पहलों (जैसे 'एक्ट–ईस्ट–पॉलिसी') से यह जुड़ाव मजबूत हो रहा है, जिससे आर्थिक और सामाजिक आदान–प्रदान बढ़ रहा है। सरकार इस दिशा में प्रयास कर रही है और कला व साहित्यों से लोकप्रियता बढ़ी है।

चुनौतियाँ:

- **भाषाई–विविधता और विरोध:** पूर्वोत्तर में कई स्थानीय भाषाएँ हैं, कई स्थानीय संगठन हिंदी के बढ़ते प्रभुत्व को एक चुनौती के रूप में देखते है और विरोध भी करते हैं, क्योंकि उन्हें डर है कि इससे उनकी स्वदेशी भाषाओं और सांस्कृतिक पहचान को खतरा हो सकता है। हालांकि, यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि हिंदी किसी स्थानीय भाषा (जैसे असमिया, मणिपुरी या खासी) का स्थान लेने नहीं, बल्कि उनकी पूरक बनने आई है। भविष्य में हमें 'त्रिभाषा–सूत्र' को मजबूती से लागू करना होगा, जहाँ स्थानीय भाषा, हिंदी और अंग्रेजी मिलकर सर्वांगीण विकास करें।
- **शिक्षक / प्रशिक्षण:** प्राथमिक और उच्च–माध्यमिक स्तर पर योग्य हिंदी शिक्षकों की कमी एक बड़ी चुनौती है, साथ ही शिक्षकों के प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है।
- **मातृभाषा और अंग्रेजी का प्रभाव:** छात्रों की मातृभाषा और अंग्रेजी का शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रभाव हिंदी सीखने में बाधा डालता है।
- **नीतिगत–मुद्दे:** हिंदी को अनिवार्य बनाने के केंद्रीय प्रयासों पर अक्सर राजनीतिक और सामाजिक बहस होती है, जिससे कार्यान्वयन जटिल हो जाता है।
- **संसाधनों की कमी:** हिंदी शिक्षण और प्रचार के लिए पर्याप्त संसाधनों और सुनियोजित नीतियों की कमी महसूस की जाती है।

समाधान:

पूर्वोत्तर और शेष भारत के संबंध जटिल हैं, जिनमें विविधता, भौगोलिक चुनौतियाँ और विकास की आवश्यकताएँ हैं, लेकिन हाल के वर्षों में बेहतर कनेक्टिविटी और सरकारी पहलों के माध्यम से मजबूत एकीकरण की दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं। आज भी, पूर्वोत्तर में हिंदी एक महत्वपूर्ण संपर्क और सेतु भाषा के रूप में उभरी है और लोग विभिन्न राज्यों और समुदायों के बीच बातचीत के लिए हिंदी का व्यापक रूप से उपयोग करते हैं।

पूर्वोत्तर के कई राज्यों में हिंदी अब एक आवश्यक विषय के रूप में पढ़ाई जा रही है और कई विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था है। केंद्र सरकार ने हिंदी शिक्षकों की भर्ती की है और देवनागरी–लिपि अपनाने के लिए भी प्रयास किए जा रहे हैं, जिससे हिंदी के शिक्षण और प्रचार को बढ़ावा मिले।

हिंदी के प्रचार में कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे स्थानीय भाषाओं के संरक्षण की चिंता, हालांकि, सरकार की नीति सभी भारतीय भाषाओं के प्रति सम्मान और समावेशी विकास की है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 भी मातृभाषा–आधारित शिक्षा पर जोर देती है। समाधान स्थानीय भाषाओं को दरकिनार किए बिना हिंदी को एक पूरक संपर्क भाषा के रूप में बढ़ावा देना है।

विविधता में एकता विभिन्न संस्कृतियाँ को एक–दूसरे को समृद्ध करते हुए एक मजबूत राष्ट्र का निर्माण करने की राह प्रबल करती है और हिंदी महज एक भाषा न होकर इस दिशा में एक मजबूत कड़ी है। शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में भी हिंदी के बढ़ते उपयोग ने इसे एक आवश्यक भाषा बना दिया है। हिंदी के प्रचार प्रसार के लिये कई संस्थागत–प्रयास भी किये जा रहे हैं, इनमे नागरी–लिपि प्रचार सभा और राष्ट्रभाषा–प्रचार समितियों जैसी संस्थाओं ने हिंदी के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अतएव, हिंदी की स्वीकार्यता किसी बाध्यता का परिणाम नहीं, बल्कि परस्पर संचार की व्यावहारिक आवश्यकता से उपजी है।

सरकारी प्रयास और योजनाएं: राजभाषा विभाग की भूमिका

भारत सरकार का गृह मंत्रालय, अपने राजभाषा विभाग के माध्यम से, पूर्वोत्तर सहित पूरे देश में हिंदी के प्रगतिशील उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध है। संवैधानिक प्रावधानों, विशेषकर अनुच्छेद 343(1) और 351, के तहत संघ का यह कर्तव्य है कि वह हिंदी का प्रसार करे और इसे भारत की सामासिक–संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाए।

राजभाषा विभाग द्वारा पूर्वोत्तर में हिंदी को बढ़ावा देने हेतु कई योजनाएं और पहल की गई हैं:

- **क्षेत्रीय सम्मेलन:** विभाग गुवाहाटी, शिलांग और ईटानगर जैसे प्रमुख पूर्वोत्तर शहरों में संयुक्त क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलनों और पुरस्कार वितरण समारोहों का आयोजन करता है, जिसमें सरकारी कार्यालयों, बैंकों और उपक्रमों को हिंदी के उत्कृष्ट उपयोग के लिए सम्मानित किया जाता है। माननीय गृह मंत्री की अध्यक्षता में गठित संसदीय राजभाषा समिति नियमित रूप से इन क्षेत्रों का दौरा कर हिंदी के कार्यान्वयन की समीक्षा भी करती है।
- **प्रौद्योगिकी एवं नवाचार :** हिंदी को आधुनिक तकनीकी मंचों से जोड़ने पर जोर दिया गया है। प्रशासनिक सुगमता के लिए 'कंठस्थ' ('3.0') जैसे बहुभाषी अनुवाद सॉफ्टवेयर और 'लीला–हिंदी' मोबाइल ऐप ने डिजिटल इंडिया के युग में पूर्वोत्तर के युवाओं और पेशेवरों के लिए हिंदी सीखना और उसमें काम करना अत्यंत सरल बना दिया है। सरकार अब कृत्रिम–बुद्धिमत्ता आधारित 'भाषिणी' मंच के माध्यम से पूर्वोत्तर की स्थानीय बोलियों और हिंदी के बीच अनुवाद की सुविधा विकसित कर

रही है। ये सरकारी प्रयास प्रशासनिक दूरियों को कम करने और पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक धरोहर को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। 'कंठस्थ' टूल के उपयोग में पूर्वोत्तर के बैंकों ने 90% से अधिक की सटीकता और उपयोग दर दर्ज की है, जो तकनीकी सशक्तिकरण का प्रमाण है।

- **पुरस्कार योजनाएं:** 'राजभाषा गौरव पुरस्कार योजना' और 'राजभाषा कीर्ति पुरस्कार' जैसी प्रोत्साहन योजनाएं गैर–हिंदी भाषी क्षेत्रों के लेखकों और कर्मचारियों को हिंदी में मौलिक लेखन के लिए प्रोत्साहित करती हैं।
- **प्रकाशन और कार्यशालाएं:** 'राजभाषा भारती' जैसी विभागीय पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाता है, जिसमें हिंदी के प्रगतिशील उपयोग से संबंधित आलेख होते हैं। साथ ही, हिंदी कार्यशालाएं (जैसे कि केंद्रीय हिंदी संस्थान के गुवाहाटी और दीमापुर स्थित केंद्र) आयोजित कर कर्मचारियों को हिंदी में काम करने हेतु प्रशिक्षित किया जाता है।
- **सांस्कृतिक–विनिमय कार्यक्रम एवं पर्यटन** : गृह मंत्रालय द्वारा चलाए जा रहे इन कार्यक्रमों के तहत, राष्ट्रीय एकता यात्राओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें पूर्वोत्तर के युवाओं को देश के अन्य हिस्सों का भ्रमण कराया जाता है, जिससे सांस्कृतिक जुड़ाव बढ़ता है।
- **हिंदी प्रशिक्षण लक्ष्य (2025–26):** सरकार ने पूर्वोत्तर क्षेत्र (क्षेत्र 'ग') के केंद्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों और बैंकों के लिए 100% प्रशिक्षण का लक्ष्य रखा है। रिपोर्ट के अनुसार, 80% से अधिक कर्मचारियों ने 'प्रवीण' और 'प्राज्ञ' स्तर की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर ली हैं। राजभाषा विभाग वार्षिक कार्यक्रम के अनुसार, शेष कर्मचारियों को 2026 के अंत तक प्रशिक्षित करने का संकल्प है।
- **पत्राचार का लक्ष्य:** पूर्वोत्तर के केंद्रीय कार्यालयों से हिंदी में पत्राचार का लक्ष्य 60% निर्धारित किया गया है, जो पिछले वर्षों की तुलना में निरंतर बढ़ रहा है। वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार, पूर्वोत्तर के कार्यालयों में कुल पुस्तक खरीद बजट का 50% हिंदी पुस्तकों पर खर्च करना अनिवार्य कर दिया गया है, ताकि स्थानीय लेखकों की हिंदी कृतियों को बढ़ावा मिले।

पूर्वोत्तर के प्रमुख हिंदी विद्वान और साहित्यकार

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी को केवल एक सरकारी भाषा नहीं, बल्कि एक 'सांस्कृतिक विनिमय' का माध्यम बनाने में स्थानीय विद्वानों का अतुलनीय योगदान रहा है।

- डॉ. अमरनाथ शर्मा, डॉ. दामोदर शास्त्री, बी.पी. चालीहा और मेदिनी चौधरी जैसे विद्वानों ने असमिया और हिंदी के बीच सेतु का कार्य किया है। उन्होंने न केवल हिंदी में मौलिक लेखन किया, बल्कि असमिया संस्कृति को हिंदी पाठकों तक पहुँचाया।
- अरुणाचल में टागांग टाकी जैसे लेखकों ने यह सिद्ध किया कि हिंदी कैसे एक जनजातीय राज्य की मुख्य संवाद भाषा बन सकती है।

निष्कर्ष

पूर्वोत्तर भारत में राजभाषा हिंदी की भूमिका एक 'सांस्कृतिक–सेतु' से कहीं अधिक है। यह राष्ट्रीय चेतना का एक अभिन्न अंग बन चुकी है। ऐतिहासिक रूप से स्थापित संपर्क भाषा के रूप में इसकी जड़ें मजबूत हैं, और सांस्कृतिक रूप से इसने लोगों को करीब लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गृह मंत्रालय और राजभाषा विभाग के सक्रिय कार्यक्रमों और योजनाओं ने इस प्रक्रिया को और गति दी है। चुनौतियों के बावजूद, यह स्पष्ट है कि राजभाषा हिंदी पूर्वोत्तर भारत के लिए मात्र एक प्रशासनिक भाषा नहीं, बल्कि वह 'सांस्कृतिक प्राणवायु' है जो इस क्षेत्र की भाषाई विविधता को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में पिरोती है।

'अष्टलक्ष्मी' के रूप में विख्यात पूर्वोत्तर के राज्यों ने अपनी मौलिक भाषाई पहचान को सुरक्षित रखते हुए हिंदी को एक सहयात्री के रूप में स्वीकार किया है। गृह मंत्रालय और राजभाषा विभाग के अथक प्रयास, चाहे वे 'हिंदी–शिक्षण योजना' हो या 'कंठस्थ' जैसे आधुनिक डिजिटल उपकरण, इस भाषाई सेतु को निरंतर सुदृढ़ कर रहे हैं।

वर्ष 2026 के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, जब भारत 'विकसित भारत' के लक्ष्य की ओर अग्रसर है, पूर्वोत्तर की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। यहाँ के विद्वानों और साहित्यकारों ने अपनी लेखनी से यह सिद्ध कर दिया है कि हिंदी स्थानीय बोलियों की विरोधी नहीं, बल्कि उनकी पूरक है। आज जब गुवाहाटी से लेकर कोहिमा तक का युवा हिंदी के माध्यम से देश के अन्य हिस्सों से संवाद करता है, तो वह केवल सूचनाओं का आदान–प्रदान नहीं करता, बल्कि एक 'साझा भारतीय स्वप्न' को साझा करता है।

अंततः, हिंदी वह सेतु है जो ब्रह्मपुत्र की लहरों को गंगा की अविरलता और हिमालय की चोटियों को हिंद महासागर की गहराई से जोड़ता है। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' की परिकल्पना तभी पूर्ण सिद्ध होगी जब राजभाषा हिंदी के माध्यम से पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक सुगंध देश के कोने–कोने तक पहुँचेगी। यह भाषा संघर्ष की नहीं, बल्कि समन्वय की प्रतीक है, जो विविधता का सम्मान करते हुए एकता का मार्ग प्रशस्त करती है। हिंदी का भविष्य इसके समावेशी और संवेदनशील दृष्टिकोण में निहित है, जो भाषाई विविधता का सम्मान करते हुए राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को प्राप्त करता है।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ एवं राजभाषा हिंदी : परस्पर समन्वय का आधार

– डॉ. उमा जनागल
राजभाषा अधिकारी, गेल (इंडिया) लिमिटेड, पाता, औरैया

भारत विश्व के उन चुनिंदा देशों में से एक है, जहाँ भाषाई विविधता सांस्कृतिक समृद्धि का प्रतीक मानी जाती है। संविधान के अनुच्छेद 343 से 351 तक भारत की भाषा–नीति को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, जिसमें हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्रदान करते हुए अन्य भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं विकास पर बल दिया गया है। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र भाषाई विविधता का एक विशिष्ट केंद्र है, जहाँ अनेक जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाएँ न केवल जीवित हैं, बल्कि सामाजिक चेतना का मूल आधार भी हैं। ऐसे में पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य समन्वय राष्ट्र की एकता, प्रशासनिक सुगमता और सांस्कृतिक संवाद की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है।

पूर्वोत्तर भारत : भौगोलिक एवं भाषायी परिदृश्य

पूर्वोत्तर भारत देश का वह विशिष्ट क्षेत्र है, जहाँ भौगोलिक विविधता और भाषायी समृद्धि का अद्भुत संगम देखने को मिलता है। इस क्षेत्र में कुल आठ राज्य सम्मिलित हैं–असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। हिमालय की उपत्यकाओं, घने वनों, पहाड़ी भू–आकृतियों, नदियों और अंतरराष्ट्रीय सीमाओं से घिरे इस क्षेत्र की भौगोलिक संरचना ने यहाँ के समाज और भाषाओं को विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों के कारण अनेक जनजातीय समुदायों की भाषाएँ और संस्कृतियाँ लंबे समय तक अपनी मौलिकता बनाए रखने में सफल रही हैं।

भाषायी दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत अत्यंत समृद्ध एवं बहुभाषिक क्षेत्र है। यहाँ 150 से अधिक भाषाएँ एवं बोलियाँ प्रचलित हैं, जो मुख्यतः तिब्बती–बर्मी, इंडो–आर्यन और आस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवारों से संबंधित हैं। यह भाषायी विविधता इस क्षेत्र को भारत के सबसे जटिल और रोचक भाषायी परिदृश्यों में स्थान देती है। कई भाषाएँ लिपिहीन होने के बावजूद मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी–दर–पीढ़ी संरक्षित रही हैं।

असमिया, मणिपुरी (मैतेई), बोडो, खासी, गारो, कोकबोरोक, मिज़ो तथा नागा समूह की विभिन्न भाषाएँ यहाँ की प्रमुख भाषाएँ हैं। इनमें से कुछ भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित हैं, जिससे उनके संरक्षण और विकास को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हुई है। ये भाषाएँ केवल दैनिक संप्रेषण का साधन नहीं हैं, बल्कि जनजातीय अस्मिता, लोककथाओं, गीत–संगीत, धार्मिक आस्थाओं, सामाजिक रीति–रिवाजों और सामुदायिक संरचना की सजीव अभिव्यक्ति भी हैं।

पूर्वोत्तर भारत का भौगोलिक और भाषायी परिदृश्य न केवल इसकी विशिष्ट पहचान को रेखांकित करता है, बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि यहाँ भाषायी समन्वय और सह–अस्तित्व की भावना ऐतिहासिक रूप से अंतर्निहित रही है। यही पृष्ठभूमि हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के मध्य संवाद और समन्वय को समझने का सशक्त आधार प्रदान करती है।

राजभाषा हिंदी : अवधारणा एवं संवैधानिक आधार

भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है, जिसे प्रत्येक भारतीय बखूबी जानता है और इसका पालन भी करता है। इसका मूल उद्देश्य देश के विभिन्न भाषायी समुदायों के बीच संपर्क, संवाद और प्रशासनिक एकरूपता स्थापित करना है। पूर्वोत्तर भारत जैसे बहुभाषी क्षेत्र में हिंदी एक संपर्क भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भाषाओं की विविधता इतनी ज्यादा है कि आदिवासी क्षेत्रों में उनकी स्थानीय/क्षेत्रीय भाषाएँ संपर्क का माध्यम न होकर हिंदी भाषा संपर्क की भाषा बनी हुई है।

संविधान के अनुच्छेद 351 में भी यह लिखित है कि हिंदी भाषा के विकास के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं का विकास समन्वय के साथ करना है। इसके माध्यम से यह भी स्पष्ट किया गया है कि हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार किसी

ISSN No. : 0970-9398

भी क्षेत्रीय भाषा के दमन की कीमत पर नहीं होना चाहिए। सभी भाषाएँ एक ही विशाल वट–वृक्ष से निकली हुई है और हिंदी भाषा उसकी नींव रही है। कोई भी भाषा बुरी नहीं है और किसी भाषा को सीखने एवं बोलने में भी कोई बुराई नहीं है। हमें सभी भाषाओं के प्रति प्रेम भाव रखते हुए अधिकतम भाषाओं को बोलना एवं पढ़ना सीखना चाहिए। पूर्वोत्तर भारत में आज हिंदी भाषा का अधिकतम भू–भाग द्वारा बोला जाना इसी बात को प्रमाणित करता है।

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी का विकास एवं प्रसार

पूर्वोत्तर भारत में हिंदी का प्रसार केवल भाषा के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और राष्ट्रीय समन्वय के माध्यम के रूप में हुआ है। इसका विकास ऐतिहासिक, प्रशासनिक और शैक्षिक कारणों से जुड़ा हुआ है। सबसे पहले, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। यह भाषा विभिन्न भाषायी समूहों के बीच संवाद का माध्यम बनी और लोगों को राष्ट्रीय संघर्ष में जोड़ने का एक साधन बनी। उस समय के साहित्यिक एवं प्रचार माध्यमों–पुस्तकें, पत्र–पत्रिकाएँ और भाषण आदि के माध्यम से हिंदी का प्रसार तेज़ हुआ, जिससे यह राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गई।

स्वतंत्रता के बाद, केंद्रीय प्रशासन और अर्धसैनिक बलों में हिंदी का प्रयोग बढ़ा। केंद्र सरकार के कार्यालयों, सेना और पुलिस में हिंदी एक संपर्क भाषा के रूप में अपनाई गई। इससे पूर्वोत्तर के लोगों को देश के अन्य हिस्सों के साथ समन्वय स्थापित करने में सुविधा हुई। प्रशासनिक प्रक्रियाओं और सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन अधिक प्रभावी ढंग से हो सका, क्योंकि हिंदी ने भाषा की बाधा को कम किया और कार्यक्षमता बढ़ाई।

शैक्षिक क्षेत्र में भी हिंदी का महत्व उल्लेखनीय है। केंद्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, विश्वविद्यालय और महाविद्यालय हिंदी के प्रसार में अग्रणी रहे हैं। यहाँ हिंदी को विषय के रूप में पढ़ाया जाता है, जिससे छात्र न केवल अपनी मातृभाषा के ज्ञान को बनाए रखते हैं, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा एवं रोजगार में भी प्रतिस्पर्धी बनते हैं। यह द्विभाषिक या बहुभाषिक शिक्षण प्रणाली पूर्वोत्तर के युवाओं को आधुनिक ज्ञान और राष्ट्रीय समन्वय दोनों से जोड़ती है।

इसके अतिरिक्त, जनसंचार माध्यमों ने हिंदी के प्रसार को और गति दी है। आकाशवाणी और दूरदर्शन पर हिंदी समाचार और कार्यक्रम राष्ट्रीय पहचान के साथ–साथ स्थानीय जीवन को जोड़ते हैं। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ और साहित्यिक प्रकाशन हिंदी को जनसामान्य तक पहुंचाने में सक्षम बने हैं। इसके अलावा सिनेमा और डिजिटल मीडिया–जैसे यूट्यूब, ओटीटी प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया–ने युवाओं में हिंदी सीखने और प्रयोग करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है।

आज, पूर्वोत्तर भारत में हिंदी केवल शैक्षिक या प्रशासनिक भाषा नहीं रह गई है; यह जनसामान्य की द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में व्यापक रूप से समझी और प्रयोग की जाती है। यह स्थानीय भाषाओं के साथ सह–अस्तित्व में रहकर लोगों के बीच संवाद, सांस्कृतिक आदान–प्रदान और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करती है। इस प्रकार, हिंदी का प्रसार और विकास पूर्वोत्तर में भाषायी समन्वय, सामाजिक सहभागिता और राष्ट्रीय चेतना का महत्वपूर्ण आधार बन गया है।

क्षेत्रीय भाषाओं एवं हिंदी के मध्य परस्पर समन्वय

पूर्वोत्तर भारत में भाषायी समन्वय का स्वरूप टकराव का नहीं, बल्कि सह–अस्तित्व और सहभागिता का है। यह समन्वय विभिन्न स्तरों पर दिखाई देता हैः–

1. द्विभाषिक एवं बहुभाषिक समाज

पूर्वोत्तर भारत की सबसे महत्वपूर्ण भाषायी विशेषता उसका द्विभाषिक एवं बहुभाषिक सामाजिक ढाँचा है। इस क्षेत्र में रहने वाला सामान्य नागरिक स्वाभाविक रूप से एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग करता है। प्रायः व्यक्ति अपनी मातृभाषा को पारिवारिक एवं सामुदायिक जीवन में अपनाता है, हिंदी का प्रयोग अंतरराज्यीय संवाद, शिक्षा एवं सार्वजनिक जीवन में करता है तथा अंग्रेज़ी का उपयोग औपचारिक, प्रशासनिक एवं उच्च शिक्षा के क्षेत्रों में करता है। इस प्रकार भाषा यहाँ किसी प्रतिस्पर्धा का विषय न होकर कार्यात्मक आवश्यकता बन जाती है।

यह बहुभाषिकता सामाजिक सौहार्द को सुदृढ़ करती है। विभिन्न जनजातीय और भाषायी समुदायों के लोग हिंदी के माध्यम से एक–दूसरे से संवाद स्थापित करते हैं, जिससे पारस्परिक समझ, सहयोग और राष्ट्रीय एकता की भावना को बल मिलता है। हिंदी, संपर्क भाषा के रूप में, न तो क्षेत्रीय भाषाओं को विस्थापित करती है और न ही उनकी अस्मिता को चुनौती देती है, बल्कि उनके साथ सह–अस्तित्व में रहते हुए संवाद का सेतु बनती है।

शैक्षिक संस्थानों में भी यह द्विभाषिकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। विद्यालयों और महाविद्यालयों में छात्र अपनी मातृभाषा के साथ हिंदी सीखते हैं, जिससे उनकी भाषायी क्षमता, बौद्धिक विकास और रोज़गार संभावनाएँ बढ़ती हैं। इसके अतिरिक्त, देश के अन्य राज्यों में अध्ययन या कार्य हेतु जाने वाले पूर्वोत्तर के युवाओं के लिए हिंदी एक सशक्त माध्यम सिद्ध होती है।

इस प्रकार, पूर्वोत्तर भारत का द्विभाषिक एवं बहुभाषिक समाज यह प्रमाणित करता है कि भाषायी विविधता किसी विभाजन का कारण नहीं, बल्कि सहयोग, समन्वय और सहभागिता का आधार है। हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का यह संतुलित प्रयोग भारतीय भाषायी लोकतंत्र की जीवंत मिसाल प्रस्तुत करता है।

2. साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आदान–प्रदान

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं और राजभाषा हिंदी के मध्य परस्पर समन्वय का एक सशक्त माध्यम साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आदान–प्रदान है। इस क्षेत्र की विभिन्न भाषाओं में

रचित लोककथाएँ, मिथक, कविताएँ, नाटक और आधुनिक साहित्य हिंदी में अनूदित किए जा रहे हैं, जिससे पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक संवेदनाएँ देश के अन्य भागों तक पहुँच रही हैं। इसी प्रकार हिंदी साहित्य की प्रमुख रचनाएँ जब असमिया, मणिपुरी, बोडो, खासी, मिज़ो और अन्य स्थानीय भाषाओं में रूपांतरित होती हैं, तब साहित्यिक संवाद द्विदिशात्मक बनता है।

इस अनुवाद प्रक्रिया ने राष्ट्रीय साहित्यिक चेतना को व्यापक रूप दिया है। हिंदी पाठक पूर्वोत्तर भारत के सामाजिक यथार्थ, जनजातीय जीवन, प्रकृति–केंद्रित संस्कृति और ऐतिहासिक संघर्षों से परिचित हो रहे हैं, वहीं स्थानीय पाठक हिंदी साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय विमर्श, सामाजिक सुधार और आधुनिक विचारधाराओं से जुड़ रहे हैं। इससे साहित्य केवल क्षेत्रीय सीमा में सीमित न रहकर राष्ट्रीय एकात्मता का माध्यम बनता है।

सांस्कृतिक स्तर पर भी यह आदान–प्रदान उतना ही सशक्त है। लोकनृत्य, लोकगीत, रंगमंच, कथा–वाचन, साहित्यिक महोत्सव और सांस्कृतिक आयोजनों में हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं का समान प्रयोग देखने को मिलता है। आकाशवाणी, दूरदर्शन तथा डिजिटल प्लेटफॉर्मों ने इस सांस्कृतिक संवाद को और अधिक गति प्रदान की है। हिंदी के माध्यम से पूर्वोत्तर की लोक संस्कृति को राष्ट्रीय मंच मिलता है, जबकि क्षेत्रीय भाषाएँ हिंदी संस्कृति को स्थानीय संवेदनाओं से समृद्ध करती हैं।

इस प्रकार साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आदान–प्रदान न केवल भाषायी समन्वय को मजबूत करता है, बल्कि सांस्कृतिक एकता, पारस्परिक सम्मान और भावनात्मक जुड़ाव को भी सुदृढ़ करता है। यही समन्वय भारत की बहुभाषिक एवं बहुसांस्कृतिक पहचान को सशक्त आधार प्रदान करता है।

3. शिक्षा एवं रोजगार

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं और राजभाषा हिंदी के मध्य समन्वय का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र शिक्षा एवं रोजगार है। हिंदी का ज्ञान पूर्वोत्तर के युवाओं को अखिल भारतीय शैक्षिक ढाँचे से जोड़ने में सहायक सिद्ध होता है। केंद्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों, केंद्रीय विश्वविद्यालयों तथा विभिन्न राष्ट्रीय प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी की उपस्थिति विद्यार्थियों को समान अवसर प्रदान करती है। हिंदी के माध्यम से छात्र देश के अन्य राज्यों में उच्च शिक्षा प्राप्त कर पाते हैं, जिससे उनकी बौद्धिक क्षमता और राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विस्तार होता है।

रोजगार के क्षेत्र में भी हिंदी एक सशक्त माध्यम के रूप में उभरती है। केंद्र सरकार के विभागों, सार्वजनिक उपक्रमों, बैंकिंग, रेलवे, रक्षा सेवाओं तथा विभिन्न अखिल भारतीय सेवाओं में हिंदी का कार्यात्मक ज्ञान आवश्यक या उपयोगी माना जाता है। ऐसे में हिंदी का ज्ञान पूर्वोत्तर के युवाओं को राष्ट्रीय रोजगार बाजार में प्रतिस्पर्धी बनाता है और उन्हें सीमित क्षेत्रीय अवसरों से बाहर निकलने का मार्ग प्रदान करता है।

इसके समानांतर, क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय प्रशासन, पंचायत व्यवस्था, सामुदायिक जीवन और जनसंपर्क में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्थानीय भाषाओं के माध्यम से शासन की योजनाएँ जनसामान्य तक प्रभावी रूप से पहुँचती हैं और नागरिकों की सहभागिता सुनिश्चित होती है। इससे युवाओं का अपने समाज, संस्कृति और मूल पहचान से जुड़ाव बना रहता है।

इस प्रकार हिंदी और क्षेत्रीय भाषाएँ शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में पूरक भूमिका निभाती हैं। हिंदी जहाँ राष्ट्रीय अवसरों के द्वार खोलती है, वहीं क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय जड़ों को मजबूत करती हैं। यह संतुलन ही पूर्वोत्तर भारत में भाषायी समन्वय को व्यावहारिक, समावेशी और विकासोन्मुख बनाता है।

4. लोक–संस्कृति एवं कला

पूर्वोत्तर भारत की लोक–संस्कृति एवं कला के क्षेत्र में हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का समन्वय अत्यंत स्वाभाविक और प्रभावशाली रूप में दिखाई देता है। लोकनृत्य, लोकगीत, नाटक, पारंपरिक उत्सव, फिल्में तथा सामाजिक–सांस्कृतिक आयोजनों में भाषाओं का यह मिश्रित प्रयोग सांस्कृतिक संवाद और सहभागिता का सजीव उदाहरण प्रस्तुत करता है। विभिन्न जनजातीय समुदाय अपने पारंपरिक नृत्यों और गीतों के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक पहचान को जीवित रखते हैं, वहीं मंच संचालन, कथावाचन और संवाद में हिंदी का प्रयोग व्यापक दर्शक वर्ग से जुड़ने में सहायक होता है।

नाट्य प्रस्तुतियों और लोकनाट्यों में क्षेत्रीय भाषाओं की भावनात्मक गहराई के साथ–साथ हिंदी के प्रयोग से संप्रेषण की सीमा विस्तृत होती है। इससे न केवल स्थानीय दर्शक, बल्कि देश के अन्य भागों से आए लोग भी पूर्वोत्तर की संस्कृति को समझ पाते हैं। इसी प्रकार, फिल्मों और डॉक्यूमेंट्री में हिंदी और स्थानीय भाषाओं के समन्वय से पूर्वोत्तर की सामाजिक वास्तविकताओं, प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक विशिष्टताओं को राष्ट्रीय मंच प्राप्त होता है।

सामाजिक आयोजनों, सांस्कृतिक महोत्सवों, युवा उत्सवों और सरकारी कार्यक्रमों में हिंदी संपर्क भाषा के रूप में कार्य करती है, जबकि क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय भावनाओं और सांस्कृतिक आत्मा को अभिव्यक्त करती हैं। यह संतुलन किसी एक भाषा के प्रभुत्व को स्थापित नहीं करता, बल्कि सांस्कृतिक समानता और पारस्परिक सम्मान को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार लोक–संस्कृति एवं कला के क्षेत्र में हिंदी और पूर्वोत्तर की क्षेत्रीय भाषाओं का समन्वय भारतीय सांस्कृतिक एकता का सशक्त प्रतीक है। यह समन्वय दर्शाता है कि विविधता में निहित एकता केवल विचारों में नहीं, बल्कि कला, संगीत और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में भी सजीव रूप से विद्यमान है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य

वर्तमान समय में नई शिक्षा नीति, डिजिटल इंडिया अभियान और राष्ट्रीय एकीकरण के प्रयासों ने हिंदी एवं

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं के मध्य संवाद को पहले की तुलना में अधिक सुदृढ़ और व्यापक बनाया है। नई शिक्षा नीति बहुभाषिकता को प्रोत्साहित करते हुए मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा तथा अन्य भारतीय भाषाओं के अध्ययन पर बल देती है। इससे एक ओर क्षेत्रीय भाषाओं का संरक्षण सुनिश्चित होता है, वहीं दूसरी ओर हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाने के अवसर भी बढ़ते हैं। यह नीति भाषायी संतुलन और समन्वय को संस्थागत आधार प्रदान करती है।

डिजिटल इंडिया के अंतर्गत तकनीकी विकास ने भाषायी सीमाओं को काफी हद तक कम कर दिया है। मोबाइल ऐप्स, ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म, ऑनलाइन समाचार पोर्टल और सरकारी डिजिटल सेवाएँ अब हिंदी के साथ–साथ कई क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध हो रही हैं। इससे पूर्वोत्तर के दूरस्थ क्षेत्रों तक सूचना, शिक्षा और सरकारी योजनाओं की पहुँच सुलभ हुई है। डिजिटल माध्यमों पर हिंदी और स्थानीय भाषाओं की समान उपस्थिति भाषायी समावेशन को मजबूत करती है।

सोशल मीडिया, यूट्यूब चैनलों और ओटीटी प्लेटफॉर्मों ने भाषायी अभिव्यक्ति को नया मंच प्रदान किया है। पूर्वोत्तर भारत के युवा अपनी मातृभाषाओं के साथ हिंदी में भी कंटेंट तैयार कर रहे हैं, जिससे उनकी संस्कृति, संगीत, जीवनशैली और सामाजिक मुद्दे राष्ट्रीय स्तर पर पहचान प्राप्त कर रहे हैं। यह प्रवृत्ति भाषायी लोकतंत्र का स्पष्ट संकेत है, जहाँ प्रत्येक भाषा को अपनी बात रखने का अवसर मिलता है।

राष्ट्रीय एकीकरण के दृष्टिकोण से भी यह समकालीन परिदृश्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का यह डिजिटल और शैक्षिक समन्वय सांस्कृतिक दूरी को कम करता है और आपसी समझ को बढ़ाता है। इस प्रकार, वर्तमान युग में तकनीक और नीति के माध्यम से हिंदी एवं पूर्वोत्तर की भाषाएँ एक–दूसरे को सशक्त बनाते हुए एक समावेशी, संवादपरक और एकीकृत भारत की दिशा में अग्रसर हैं।

निष्कर्षः–

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ और राजभाषा हिंदी भारतीय भाषायी और सांस्कृतिक एकता की दो मजबूत धुरी के रूप में कार्य करती हैं। यह क्षेत्र अपनी विविध जनजातियों, परंपराओं और सामाजिक संरचनाओं के कारण भाषायी दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। यहाँ की क्षेत्रीय भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं हैं, बल्कि यह स्थानीय अस्मिता, सांस्कृतिक विरासत, लोककथाओं, गीत–संगीत और धार्मिक विश्वासों को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये भाषाएँ लोगों को उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान से जोड़ती हैं और उन्हें अपनी जड़ों के साथ गर्वित बनाती हैं।

वहीं, राजभाषा हिंदी राष्ट्रीय स्तर पर संवाद का माध्यम बनकर देश की एकात्मता और सांस्कृतिक समन्वय को सशक्त करती है। यह भाषा पूर्वोत्तर के विभिन्न भाषायी समुदायों को एक दूसरे से जोड़ती है, उन्हें देश के अन्य हिस्सों के साथ संपर्क स्थापित करने में सक्षम बनाती है और शैक्षिक, रोजगार तथा प्रशासनिक अवसरों तक पहुँच प्रदान करती है। हिंदी का यह समावेशी दृष्टिकोण क्षेत्रीय भाषाओं के अस्तित्व को कमजोर किए बिना उन्हें सशक्त बनाता है और बहुभाषिक समाज में संतुलन बनाए रखता है।

पूर्वोत्तर की भाषाएँ और हिंदी के मध्य यह सह–अस्तित्व और समन्वय केवल भाषायी संतुलन तक सीमित नहीं है। यह समन्वय सांस्कृतिक आदान–प्रदान, शिक्षा, रोजगार, लोक–संस्कृति, कला और डिजिटल माध्यमों तक फैला हुआ है। नई शिक्षा नीति, डिजिटल इंडिया, सोशल मीडिया और ओटीटी प्लेटफॉर्मों के माध्यम से यह संवाद और अधिक व्यापक हुआ है। यह दर्शाता है कि भाषायी विविधता किसी बाधा का कारण नहीं, बल्कि भारत की सबसे बड़ी शक्ति और समृद्धि का स्रोत है।

अतः यह स्पष्ट है कि हिंदी और पूर्वोत्तर की क्षेत्रीय भाषाओं का यह समन्वय भाषायी लोकतंत्र, राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक समृद्धि का जीवंत प्रमाण है। जहाँ क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय पहचान को मजबूत करती हैं, वहीं हिंदी राष्ट्रव्यापी संवाद और एकात्मता की भावना को बनाए रखती है। यह समन्वय ही वह मार्ग है, जिससे भारत अपनी बहुभाषिक पहचान को अक्षुण्ण रखते हुए एक सशक्त, सांस्कृतिक और समावेशी राष्ट्र के रूप में आगे बढ़ सकता है।

ISSN No. : 0970-9398

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य समन्वय भाव

– सीए प्रतीक जैन
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, गुरूग्राम, हरियाणा

हमारा भारतवर्ष अपने आप में एक अत्यंत विविधतापूर्ण प्रकृति का देश है। विविधता केवल भूगोल, संस्कृति, धर्म या जाति तक सीमित नहीं है, बल्कि भाषाई विविधता भी इसका एक प्रमुख आयाम है। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र इस विविधता का एक विलक्षण एवं समृद्ध रूप प्रस्तुत करता है। यहाँ अनेक जनजातियाँ, भाषाएँ, परंपराएँ एवं सांस्कृतिक रूपांकनों का संगम मिलता है। इसी विविधता के बीच राजभाषा हिंदी सांस्कृतिक, सामाजिक और प्रशासनिक रूप से समन्वय का कार्य करती है।

1. पूर्वोत्तर भारतः भूगोलिक और सांस्कृतिक अवलोकन

पूर्वोत्तर भारत, भारत की उस सीमांत क्षेत्रीय इकाई को कहा जाता है जिसमें आठ राज्य आते हैं – अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। इसीलिए इस क्षेत्र को अक्सर 'अष्टलक्ष्मी' (सात बहनें और एक भाई – सिक्किम) के रूप में भी जाना जाता है। यह क्षेत्र प्राकृतिक सुंदरता, विस्तृत जैव विविधता, आदिवासी संस्कृति, अनूठी लोकधाराएँ, पारंपरिक संगीत, नृत्य, कला तथा त्यौहारों के कारण वैश्विक स्तर पर विशिष्ट पहचान रखता है। पूर्वोत्तर भारत उत्तरी–पूर्वी भारत को मणिपुर घाटी, ब्रह्मपुत्र की विशाल नदी घाटियाँ, हिमालय की गोद में स्थित सुंदर वन, चाय बाग़ानें, बांस व गोंड कला का रिज़र्व प्रदान करता है। यहाँ के जन–समूहों की भाषाएँ स्व–शैली, स्व–लिपि और स्व–संरचना की दृष्टि से विशिष्ट हैं।

2. भाषाई परिप्रेक्ष्यः क्षेत्रीय भाषाएं एवं हिंदी का स्थान

केवल भौगोलिक रूप से ही नहीं, बल्कि भाषाई और सांस्कृतिक रूप से भी पूर्वोत्तर क्षेत्र भारत का एक अद्वितीय रत्न है। यहाँ की पहाड़ियों और घाटियों में सैकड़ों बोलियाँ गूँजती हैं। पूर्वोत्तर में बोली जाने वाली भाषाओं की सूची अत्यंत लंबी है। कुछ प्रमुख भाषाएँ निम्नलिखित हैं:

असमिया –	मिज़ो (लुशाई)–	मेघ़ालय भाषा (खासी, जंगल रोमानिया आदि)
नागा भाषाएँ – (एनामी, एओ, टिफ़फी आदि)	मणिपुरी – (मइथिली, मेतेई)	त्रिपुरी भाषाएँ (कोकबोरी, हाफ़िज़ आदि)

इनके अलावा कुछ समुदायों में तिब्बती–बर्मा परिवार की भाषाएँ भी प्रयोग की जाती हैं।

यहाँ उल्लेखनीय है कि इन भाषाओं की अपनी लिपि, व्याकरणिक विशेषताएँ, मौखिक परंपरा, लोक साहित्य और सांस्कृतिक भावनाएँ हैं। जहाँ इन भाषाओं की उन्नति और संरक्षण पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक पहचान के लिए अत्यंत आवश्यक है। इस विविधता के बीच, राजभाषा हिंदी एक 'आक्रांता' या 'विस्थापक' के रूप में नहीं, बल्कि एक 'सहयोगी' और 'सेतु' के रूप में अपनी भूमिका निभा रही है और सामाजिक समन्वय, प्रशासनिक संवाद, शिक्षण–अध्यापन तथा राष्ट्रीय समरसता के संदर्भ में भी एक अभिन्न भूमिका निभाई है।

अगर ध्यान से देखा जाए तो हिंदी नेः

- अंतर–राज्यीय संवाद को सुदृढ़ किया है
- शैक्षणिक संस्थाओं में एक सार्वभौमिक भाषा के रूप में स्थान बनाया है
- व्यावसायिक, सरकारी और प्रशासनिक कार्यों में एक संयुक्त संचार माध्यम प्रदान किया है
- सांस्कृतिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहित किया है

इस समन्वय की महत्ता को समझने के लिए यह समझना आवश्यक है कि पूर्वोत्तर में भाषाई, धार्मिक और सामाजिक भिन्नताएँ कितनी विविध हैं। इस विविधता में 'समन्वय' का अर्थ है–स्थानीय भाषाओं का संरक्षण करते हुए संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग। यहाँ की प्रत्येक भाषा अपने समुदाय की विशेष पहचान है और राजभाषा हिंदी इस विविधता के बीच 'एकता के सूत्र' की तरह कार्य करती है। उदाहरण के लिए, अरुणाचल प्रदेश इस समन्वय का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। यहाँ दर्जनों जनजातियाँ अलग–अलग बोलियाँ बोलती हैं, लेकिन आपस में संवाद करने के लिए वे जिस भाषा का प्रयोग करती हैं, वह 'अरुणाचली हिंदी' है। वर्तमान में अरुणाचल में हिंदी संपर्क भाषा है, जबकि नागालैंड में 'नागामिज' (हिंदी–असमिया मिश्रण) प्रचलित है और मणिपुर में हिंदी बाजार भाषा बनी हुई है, पर बोडो (2003 में संविधान की 8वीं अनुसूची में सम्मिलित) के लिए देवनागरी अपनाई गई। यहाँ हिंदी किसी पर थोपी नहीं गई, बल्कि आवश्यकता और प्रेम से अपनाई गई एक 'लिंगुआ फ्रेंका' बन गई है। राजभाषा हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का यह समन्वय 'सह–अस्तित्व' के सिद्धांत पर आधारित है।

यह स्थानीय अस्मिता को मिटाता नहीं, बल्कि उसे राष्ट्रीय पटल पर व्यक्त करने का माध्यम देता है।

3. 'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना के परिप्रेक्ष्य में पूर्वोत्तर भारत

'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' भारत सरकार की एक ऐसी दृष्टि है जिसका उद्देश्य है – देश के सभी भागों में आपसी समझ, भाईचारा, समन्वय तथा राष्ट्रीय एकता और सामाजिक–आर्थिक प्रगति को बढ़ावा देना है। यह नीति भाषाई, सांस्कृतिक और आर्थिक समरसता के निर्माण को प्राथमिकता देती है। पूर्वोत्तर भारत इस दृष्टि में न केवल भौगोलिक सीमाओं का प्रतिरूप है, बल्कि यह समन्वय की अद्वितीय क्षमता भी प्रस्तुत करता है क्योंकि यहाँ की बहुभाषीय संस्कृति ने सदैव अन्य प्रदेशों के साथ संवाद और जुड़ाव की संभावनाएँ तलाशीं हैं।

इसी बीच राजभाषा हिंदी ने पूर्वोत्तर में आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार के संवाद के स्तर को मजबूत किया है। साथ ही साथ हिंदी फिल्में, साहित्य, समाचार माध्यम और संगीत, पूर्वोत्तर के युवाओं को राष्ट्रीय संस्कृति के भी करीब लाते हैं। जब पूर्वोत्तर का कोई छात्र दिल्ली या मुंबई आता है, या उत्तर भारत का कोई व्यापारी गुवाहाटी या इंफाल जाता है, तो हिंदी संवाद की पहली सीढ़ी बनती है।

पूर्वोत्तर के पर्यटन को बढ़ावा देने में भी हिंदी का समन्वय महत्वपूर्ण है। जब होम–स्टे चलाने वाला एक स्थानीय खासी या नागा युवा पर्यटकों से हिंदी में संवाद करता है, तो 'अतिथि देवो भव' की भावना प्रबल होती है और सांस्कृतिक आदान–प्रदान सुगम हो जाता है। यह योजना क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य को हिंदी में और हिंदी साहित्य को क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवादित करने को प्रोत्साहित करती है, जिससे भावनात्मक दूरियाँ घटती हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि एक भारत–श्रेष्ठ भारत की संकल्पना को साकार करने में हिंदी ने एक संपर्क–सेतु के रूप में कार्य किया है।

4. स्वतंत्रता आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत का योगदानः

इतिहास गवाह है कि स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी भाषा ने लोगों को जोड़ने का काम किया था। पूर्वोत्तर भारत का योगदान अक्सर मुख्यधारा के इतिहास में कम चर्चा में रहता है, लेकिन यह अत्यंत गौरवशाली, महत्वपूर्ण, साहसपूर्ण और बहुआयामी है।

- **रानी गाइदिनल्यूः** नागालैंड की रानी गाइदिनल्यू ने मात्र 13 वर्ष की आयु में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया। उन्होंने अपने आध्यात्मिक प्रभाव और नेतृत्व से नागा जनजाति को एकजुट किया। 1932 में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और 14 वर्ष तक जेल में रखा गया। यद्यपि उनका कार्यक्षेत्र स्थानीय था, लेकिन उनका संपर्क राष्ट्रीय नेताओं से था, जहाँ हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में विचारों के आदान–प्रदान में भूमिका निभाई। जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें "नागा पहाड़ियों की रानी" कहा था। उनका संघर्ष न केवल राजनीतिक था बल्कि सांस्कृतिक स्वतंत्रता का भी प्रतीक था।
- **कनकलता बरुआः** असम की यह वीरांगना 'भारत छोड़ो आंदोलन' के दौरान तिरंगा फहराते हुए शहीद हुईं। उस समय 'वंदे मातरम' और 'इंकलाब जिंदाबाद' जैसे हिंदी/संस्कृत उद्घोषों ने भाषाई सीमाओं को तोड़कर पूरे पूर्वोत्तर को एक सूत्र में पिरोया था।
- **आजाद हिंद फौजः** नेताजी सुभाष चंद्र बोस के नेतृत्व में आईएनए ने जब मोइरांग (मणिपुर) में तिरंगा फहराया, तो उस सेना में विभिन्न भाषाओं के लोग थे, लेकिन उनका कमांड और संचार अक्सर हिंदुस्तानी (हिंदी–उर्दू मिश्रित) में होता था, जिसने पूर्वोत्तर की धरती पर राष्ट्रवाद की अलख जगाई।
- **असम और चाय बगानों के मजदूरों का आंदोलनः** असम में चाय उद्योग के श्रमिकों ने औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सामाजिक और श्रमिक अधिकारों के लिए आवाज़ उठाई। चाय बागानों के अंदर चली इस चेतना ने व्यापक स्तर पर असमिया समाज को आंदोलनों के प्रति जागृत किया।
- **महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाया नागा संघर्ष और राष्ट्रीय आंदोलनः** नागा समाज ने भी औपनिवेशिक शासन के खिलाफ अपनी सांस्कृतिक और राजनीतिक स्वतंत्रता की मांग की। हालांकि यह आंदोलन स्वतंत्र भारत के आने के पश्चात भी जारी रहा, किंतु प्रथम विश्व युद्ध और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान नागा योद्धाओं का योगदान स्वतंत्रता की भावना को पुष्ट करने में सहायक रहा।
- **मणिपुर, मिज़ोरम और मेघालय की भूमिकाः** मणिपुर के सामाजिक दलों ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया। वहीं मिज़ोरम तथा मेघालय में स्थानीय समुदायों ने राष्ट्रीय संगठनों के साथ जुड़कर स्वतंत्रता आंदोलन का समर्थन किया।

इन आंदोलनों के माध्यम से पूर्वोत्तर की विविध क्षेत्रीय भाषाओं और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों ने भारतीय राष्ट्रवाद को आत्मसात किया, वहीं स्वतंत्रता के पश्चात राजभाषा हिंदी ने संपर्क भाषा के रूप में इन भाषायी विविधताओं के बीच संवाद, समन्वय और राष्ट्रीय एकात्मता को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे पूर्वोत्तर की भाषायी–सांस्कृतिक पहचान सुरक्षित रहते हुए उसे राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ने की प्रक्रिया सशक्त हुई।

5. राजभाषा हिंदी पूर्वोत्तर में सांस्कृतिक सेतु के रूप में:

पूर्वोत्तर भारत की समृद्ध भाषाई विविधता के बीच राजभाषा हिंदी एक सशक्त सांस्कृतिक सेतु के रूप में उभरकर सामने आई है, जो "अनेकता में एकता" के सिद्धांत को व्यवहारिक रूप प्रदान करती है। क्षेत्रीय एवं लोक भाषाओं के संरक्षण के

साथ हिंदी के संतुलित उपयोग ने आदिवासी, स्थानीय तथा बाह्य समुदायों के बीच सामाजिक समानता और प्रभावी संवाद को सुदृढ़ किया है। शिक्षा, मीडिया और सांस्कृतिक मंचों के माध्यम से हिंदी ने पूर्वोत्तर के विद्यार्थियों और नागरिकों को देश के अन्य भागों से जोड़ते हुए राष्ट्रीय स्तर पर संवाद की क्षमता विकसित की है। साथ ही हिंदी साहित्य, सिनेमा और संगीत ने सांस्कृतिक आदान–प्रदान को प्रोत्साहित किया है, जिससे बहुभाषीय समाज में युवा अपनी क्षेत्रीय भाषाओं की पहचान बनाए रखते हुए भी राष्ट्रीय एकता और समावेशिता के मूल्यों से जुड़ सके हैं।

6. विकसित भारत@2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में पूर्वोत्तर की भूमिका

विकसित भारत@2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में भी पूर्वोत्तर भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण एवं बहुआयामी है। 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने के लिए पूर्वोत्तर भारत को 'विकास का इंजन' माना गया है। यहाँ क्षेत्रीय भाषाओं और हिंदी का समन्वय आर्थिक और सामरिक दृष्टि से अनिवार्य है। यह क्षेत्र तकनीकी एवं जैविक कृषि हब, पर्यटन केंद्र, जल एवं नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत तथा सीमा–पार व्यापार और अंतरराष्ट्रीय आर्थिक गलियारों के रूप में उभरने की भी प्रबल संभावनाएँ रखता है और भारत–बांग्लादेश–नेपाल–भूटान जैसे प्रस्तावित आर्थिक गलियारे पूर्वोत्तर को राष्ट्रीय और वैश्विक व्यावसायिक नेटवर्क से जोड़ने का माध्यम बनेगा।

एक्ट ईस्ट पॉलिसीः पूर्वोत्तर भारत दक्षिण–पूर्वी एशिया के लिए भारत का प्रवेश द्वार है। यहाँ के स्थानीय लोग अपनी भाषाओं में निपुण हैं और अंग्रेजी में भी। लेकिन, शेष भारत के साथ व्यापारिक लॉजिस्टिक्स, सप्लाई चेन और मैन्युफैक्चरिंग के एकीकरण के लिए हिंदी एक कुशल व्यापारिक प्रवर्तक का कार्य करती है।

कौशल विकासः पूर्वोत्तर के युवाओं में प्रतिभा की कमी नहीं है। जब वे स्थानीय भाषा के साथ–साथ हिंदी और अंग्रेजी में भी दक्ष होते हैं, तो उनके लिए रोजगार के अवसर केवल उनके राज्य तक सीमित नहीं रहते, बल्कि वे नोएडा, पुणे और बेंगलुरु जैसे हब में भी अपनी जगह बनाते हैं।

इन प्रयासों में राजभाषा हिंदी राष्ट्रीय स्तर पर प्रशासन, बैंकिंग, वित्तीय समावेशन, सूक्ष्म लघु मध्यम उद्यमों की सहायता और व्यापारिक संवाद को सुगम बनाती है, जबकि पूर्वोत्तर की क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय उद्यमों, ग्रामीण समुदायों और उपभोक्ताओं से प्रभावी जुड़ाव सुनिश्चित करती हैं। इस प्रकार, इंफ्रास्ट्रक्चर विकास, लॉजिस्टिक्स, स्मार्ट सिटी परियोजनाओं और डिजिटल बैंकिंग के विस्तार के साथ हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के संतुलित उपयोग से न केवल आर्थिक विकास को गति मिलेगी, बल्कि समावेशी और सतत विकास का लक्ष्य भी साकार होगा।

7. वैश्विक, पर्यावरण–सामाजिक–शासन और भू–राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

वैश्विक परिदृश्य में भारत के बढ़ते आर्थिक एवं भू–राजनीतिक प्रभाव के संदर्भ में राजभाषा हिंदी, पूर्वोत्तर भारत को राष्ट्रीय मुख्यधारा तथा अंतरराष्ट्रीय मंच से जोड़ने में एक सशक्त सेतु की भूमिका निभाती है, वहीं क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय पहचान, सांस्कृतिक विविधता और पारंपरिक ज्ञान की संवाहक हैं; इन दोनों के परस्पर समन्वय से पर्यावरण –सामाजिक–शासन दृष्टिकोण के अंतर्गत पूर्वोत्तर की समृद्ध जैव विविधता, समुदाय–केंद्रित जीवन शैली और पारंपरिक ज्ञान को संरक्षित एवं संवर्धित करने में प्रभावी सहायता मिलती है, जिससे स्थानीय समुदायों का सशक्तिकरण तो होता ही है, साथ ही साथ पर्यावरण संरक्षण एवं सामाजिक विकास से जुड़ी योजनाओं के प्रति जागरूकता भी बढ़ती है तथा शासन व्यवस्था में पारदर्शिता, सहभागिता और उत्तरदायित्व भी सुनिश्चित होता है; इस प्रकार हिंदी केवल संप्रेषण का माध्यम न रहकर क्षेत्रीय भाषाओं के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए सतत विकास, समावेशी प्रगति और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने वाली एक सशक्त कड़ी के रूप में उभरती है।

8. पूर्वोत्तर की सांस्कृतिक विविधताः परंपराएँ, उत्सव और लोककलाः

पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य परस्पर समन्वय का एक सशक्त उदाहरण वहाँ की समृद्ध सांस्कृतिक विविधता में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहाँ परंपराएँ, उत्सव और लोककलाएँ हिंदी के माध्यम से राष्ट्रीय स्तर पर पहचान प्राप्त कर रही हैं। पूर्वोत्तर की संस्कृति रंगों, भावनाओं और लोकजीवन से परिपूर्ण है तथा हिंदी ने इसे एक व्यापक और समावेशी मंच प्रदान किया है। नागालैंड का हॉर्नबिल फेस्टिवल, मणिपुर का लाई हरोबा, असम का बिहू और मेघालय का वांगला जैसे उत्सव अब केवल क्षेत्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं रहे; हिंदी मीडिया और सोशल मीडिया के माध्यम से इनके सांस्कृतिक आख्यान देश के कोने–कोने तक पहुँच रहे हैं। इसी प्रकार, पूर्वोत्तर की लोककला और संगीत–विशेषकर भूपेन हजारिका जैसे महान कलाकारों की रचनाएँ–हिंदी अनुवादों और हिंदी गीतों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का हिस्सा बनी हैं; स्वयं डॉ. भूपेन हजारिका द्वारा गाया गया हिंदी गीत "दिल हूम–हूम करे" इस बात का प्रमाण है कि ब्रह्मपुत्र और गंगा की संवेदनाएँ एक ही भाषा में अभिव्यक्त हो सकती हैं। साथ ही, असम का मुगा सिल्क हो या मणिपुर का हस्तशिल्प, जब इन उत्पादों का विपणन हिंदी भाषी बाजारों, जैसे दिल्ली हाट में होता है तो हिंदी भाषा विक्रेता और क्रेता के बीच विश्वास, संवाद और सांस्कृतिक सेतु का कार्य करती है, जिससे क्षेत्रीय पहचान को राष्ट्रीय स्वीकार्यता मिलती है।

9. वर्तमान स्थितिः चुनौतियाँ एवं अवसर

चुनौतियाँ : पूर्वोत्तर भारत एक बहुभाषीय एवं बहुसांस्कृतिक क्षेत्र है, जहाँ अनेक जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाएँ प्रचलित हैं; ऐसे में इन भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन एक प्रमुख चुनौती बना हुआ है। शैक्षणिक संस्थानों में पर्याप्त शैक्षणिक सामग्री, प्रशिक्षित शिक्षकों और लिपि संरक्षण की कमी के कारण स्थानीय भाषाओं की निरंतरता प्रभावित हो रही है, साथ ही सांस्कृतिक

अभिव्यक्ति के लिए सीमित अवसर भी एक चिंता का विषय हैं।

अवसरः पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं एवं राजभाषा हिंदी के मध्य परस्पर समन्वय के संदर्भ में वर्तमान चुनौतियों के साथ–साथ महत्वपूर्ण अवसर भी उपलब्ध हैं, जिनका प्रभावी उपयोग क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर संवाद को सुदृढ़ कर सकता है। पूर्वोत्तर राज्यों में द्विभाषीय अथवा बहुभाषीय शिक्षा मॉडल को अपनाकर स्थानीय भाषाओं के साथ हिंदी को सह–माध्यम के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, जिससे एक ओर क्षेत्रीय भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन सुनिश्चित होगा, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय स्तर पर आपसी संवाद और एकता को भी मजबूती मिलेगी।

10. निष्कर्षः

यह समझना आवश्यक है कि हिंदी पूर्वोत्तर में 'राजभाषा' के वैधानिक रूप से अधिक 'संपर्क भाषा' के व्यावहारिक रूप में सफल है। यह समन्वय एकतरफा नहीं है। हिंदी ने भी पूर्वोत्तर के शब्दों को अपनाया है। पूर्वोत्तर के लेखकों द्वारा हिंदी में लेखन (जैसे इंदिरा गोस्वामी का अनुवादित साहित्य) हिंदी साहित्य को समृद्ध कर रहा है। पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक और भाषाई विविधता हमारी राष्ट्रीय पहचान का एक अभिन्न हिस्सा है। जहाँ क्षेत्रीय भाषाएँ स्थानीय जीवन तथा सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखती हैं, वहीं राजभाषा हिंदी राष्ट्रीय स्तर पर संपर्क, संवाद और समन्वय का कार्य करती है। इस समन्वय के माध्यम सेः

- सामाजिक और सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा मिलता है
- शिक्षा, प्रशासनिक कार्यों और आर्थिक विनिमय को सरलता मिलती है
- 'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' की संकल्पना को व्यवहारिक धरातल पर मजबूती मिलती है
- विकसित भारत @2047 के लक्ष्य की प्राप्ति में पूर्वोत्तर की भूमिका स्पष्ट और उपयोगी होती है

भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं है; वह सोच, पहचान और समन्वय का प्रतीक है। पूर्वोत्तर भारत की क्षेत्रीय भाषाओं तथा राजभाषा हिंदी के मध्य संतुलन और परस्पर समर्थन से ही हम एक सशक्त, समृद्ध और एकीकृत राष्ट्रीय समाज का निर्माण कर सकते हैं। जिस प्रकार ब्रह्मपुत्र नदी कई छोटी–बड़ी नदियों को अपने में समेटकर सागर की ओर बढ़ती है, उसी प्रकार भारतीय संस्कृति भी पूर्वोत्तर की भाषाओं और हिंदी के समन्वय के साथ 'विश्व गुरु' बनने की दिशा में अग्रसर है। आज का युवा यह समझता है कि अपनी जड़ों (स्थानीय भाषा) से जुड़े रहना और आकाश (हिंदी/वैश्विक भाषा) को छूना, दोनों एक साथ संभव है। अतः, यह समन्वय केवल शब्दों का नहीं, बल्कि भावनाओं, प्रगति और राष्ट्रवाद का समन्वय है।

"स्थानीय बोली में जुड़ें, हिंदी में व्यापक संवाद,
पूर्वोत्तर की पहचान और राष्ट्र का सशक्त अनुराग।
शिक्षा, तकनीक, बैंकिंग में भाषा का संतुलित प्रयोग,
समन्वय से ही साकार होगा एकता का सशक्त प्रयोग।"

हिंदी दिवस–2025 एवं पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन, गांधीनगर में प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी

हिंदी दिवस–2025 एवं पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन, गांधीनगर में डिजिटल शब्दकोश 'हिंदी शब्द सिंधु' के संस्करण–3.0 का लोकार्पण करते हुए माननीय गृह एवं सहकारिता मंत्री श्री अमित शाह जी तथा अन्य मंचासीन अतिथिगण।

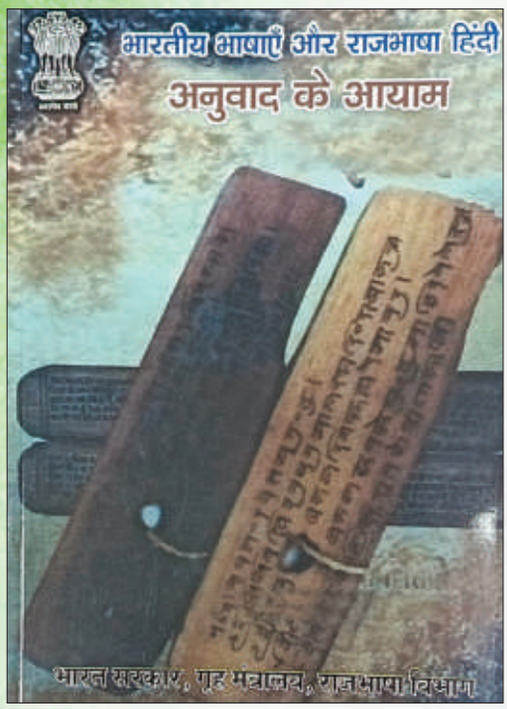

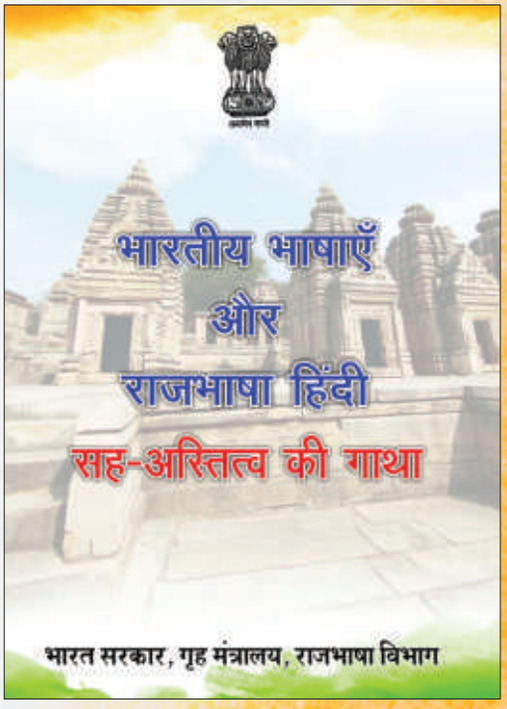

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के प्रकाशन

****

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, एन डी सी सी-II भवन, नई दिल्ली-110001
के लिए इन्दु कार्ड्स एण्ड ग्राफिक्स, चावड़ी बाजार, दिल्ली द्वारा मुद्रित